पुस्तक · समीक्षण ध्यान विधि विधान • **लेखक** श्री शान्ति मुनि • **प्रथम अनावरण** १९८७ • **प्रकाशक** श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ, समता भवन, रामपुरिया मार्ग, बीकानेर (राज) ३३४००१ • **अर्थ सौजन्य :** श्री किशनलाल जी समरथमल जी आचलिया

मुद्रक फ्रैण्ड्स प्रिन्टर्स एण्ड स्टेशनर्स
जौहरी बाजार, जयपुर–3

मूल्य ४०)००

SHREE SHANTI MUNI

Rs 40 00

ध्यान की सर्वाधिक

मौलिक एवं नूतन

विधा

समीक्षण ध्यान

के

उद्गाता

समता साधना के

जाज्वल्यमान प्रतीक

'आचार्य श्री नानेश'

के

ध्यान योगी महनीय

व्यक्तित्व को

—शांति मुनि

प्रकाशकीय

प्रस्तुत कृति 'समीक्षण ध्यान विधि-विधान' मे आचार्य श्री नानेश के विद्वान् शिष्य पडित रत्न श्री शान्ति मुनिजी ने समीक्षण ध्यान के विधि-विधान पर बहुत ही सरल पर प्रभावशाली ढग से अपने अनुभव गम्य विचार प्रस्तुत किये है। प्रारम्भ मे मुनिश्री ने ध्यान-साधना की पूर्व भूमिका के रूप मे द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की शुद्धि पर बल देते हुए आसन, प्राणायाम—वाह्य और आभ्यन्तर की महत्ता पर प्रकाश डाला है। ध्यान-साधना की प्रयोगात्मक प्रक्रिया मे मुनिश्री ने ध्यान-मुद्रा, दीर्घ श्वास, शिथिलीकरण, प्राणायाम आदि के निर्देश देते हुए क्रोध, मान, माया, लोभ आदि कषायो की निर्जरा के लिए समीक्षण-विधि का सुन्दर, भावप्रवण व आत्मस्पर्शी विवेचन किया है। आत्म-ज्योति के जागरण एव परमात्म भाव की अनुभूति का वर्णन दिव्यता लिये हुए है। साधको को दिये गये निर्देश आन्तरिक लक्ष के माधुर्य एव प्रभाव से युक्त है। इस महत्त्वपूर्ण कृति के लिए सघ मुनिश्री के प्रति श्रद्धानत है। आशा है, साधको के लिए यह कृति विशेष उपयोगी और मार्गदर्शक सिद्ध होगी।

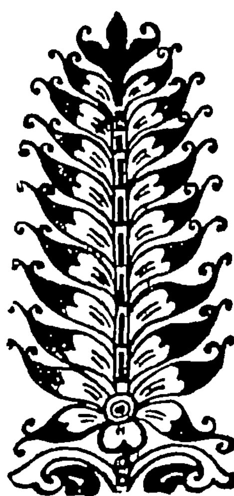
सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एव राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री केसरीलालजी बोरदिया ने इस कृति का प्राक्कथन लिखने की कृपा की, अत. सघ उनका आभारी है।

श्री किशनलालजी समरथमलजी आचलिया परिवार द्वारा सहयोग दिया गया है । श्री मोतीलालजी आचलिया धार्मिक प्रकृति के श्रद्धालु श्रावक थे । आपकी सत-सतियो के प्रति अनन्य भक्ति और अगाध निष्ठा तथा नवकार मत्र के प्रति अटूट श्रद्धा थी । हर सकट मे आप नवकार मत्र की शरण लेते थे और आपके सब सकट दूर हो जाते थे । आप करुणामूर्ति एव गुप्त दानी थे । आपके इस उदार सहयोग के लिए सघ आभारी है ।

इस कृति के प्रकाशन-सम्बन्धित प्रबन्धन-सम्पादन मे डॉ नरेन्द्र भानावत के महत्त्वपूर्ण योगदान के लिए सघ आभारी है ।

चुन्नीलाल मेहता — अध्यक्ष
धनराज बेताला — मत्री
गुमानमल चौरड़िया — सयोजक, साहित्य-समिति

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ, बीकानेर



प्राक्कथन

इस पुस्तक मे श्रद्धेय शान्ति मुनि ने आचार्य प्रवर श्री नानालालजी महाराज के द्वारा प्रतिपादित ध्यान प्रणाली, 'समीक्षण ध्यान' के व्यावहारिक पक्ष का विशद वर्णन किया है।

आज के यान्त्रिक युग मे भौतिक साधनो की लालसा, समृद्धि के लिये होड, वर्ग सघर्ष, परिवार तथा समाज का विघटन तथा नैतिक मूल्यो का ह्रास बढ जाने से गभीर परिस्थिति उत्पन्न हो गई है। जन-जन के हृदय मे अशान्ति और चिन्ता बढती जा रही है। इतना ही नही आणविक युद्ध की विध्वसक सभावना से तो मनुष्य जाति भयग्रस्त और आतकित होती जा रही है।

ऐसी स्थिति मे यह स्वाभाविक है कि शाति और सतोष के नये मार्गों की खोज की जाए। पाश्चात्य सभ्यता तो सुखी जीवन के लिये अधिकाधिक बाह्य साधनो और भौतिक वैभव की खोज की ओर प्रयत्नशील है। उसके द्वारा वर्तमान सकट के समाधान की आशा नही की जा सकती। इसके विपरीत प्राचीन भारतीय सस्कृति मे आतरिक शान्ति और आध्यात्मिक आनन्द की खोज को अधिक महत्त्व दिया है तथा उसे मानव जीवन का लक्ष्य स्वीकार किया है। अतएव आज की परिस्थिति मे सम्भवत भारतीय सस्कृति समाधान का मार्ग बतला सके।

हमारी सस्कृति मे ध्यान योग का महत्त्वपूर्ण स्थान है, जिसके द्वारा मनुष्य आत्मज्ञान की ओर प्रवृत्त हो सकता है। वास्तविक सुख मनुष्य को अपने अन्तर मे ही प्राप्त हो सकता है।

चिरतन काल से भारत मे ध्यान-योग की विविध प्रणालिया प्रचलित रही है। भगवान् महावीर अपने साधनाकाल मे अधिकतर ध्यानस्थ ही रहते थे। उनके निर्वाण के बाद हरिभद्रसूरि जी आदि कई आचार्यो ने जैन योग साधना को अपनाया।

मध्ययुग तथा आधुनिक काल मे भी ध्यान साधना को महत्त्व दिया जाता रहा है। मध्य युग मे कबीर साहब, दादूदयाल, सत रैदास, गुरुनानक साहब आदि महान् योगी हुए। वर्तमान युग मे भी श्री रामकृष्ण, श्री अरविन्द, रमण महर्षि आदि सतो ने ध्यान-योग को अपनाया। राधास्वामी सत्सग की ध्यान प्रणाली एव बौद्ध दर्शन से प्रभावित विपश्यना भी इस दिशा मे नये प्रयोग है।

ध्यान की साधना पद्धतियो मे आचार्य प्रवर श्री नानालालजी महाराज का 'समीक्षण ध्यान' भी एक नवीन और मौलिक देन है। यह एक सरल और व्यावहारिक पद्धति है जिसे साधु ही नही, गृहस्थ भी अपना सकते हैं। यह पद्धति अतर्दर्शन (Introspection) तथा आत्म-सुझाव (Auto-suggestion) पर आधारित है। विद्वान् लेखक शाति मुनिजी ने आचार्य प्रवर की प्रेरणा से इस ध्यान पद्धति के सभी व्यावहारिक चरणो का विशद विवेचन किया है। साधना के लिये समय, स्थान, आसन तथा साधक की अपनी मन स्थिति सब पहलुओ पर स्पष्ट मार्गदर्शन प्रस्तुत किया है। उसके बाद क्रमश दृढ सकल्प के द्वारा कर्म-बन्धन के विविध कारणो का एक-एक कर निराकरण करने तथा पूर्व-बद्ध कर्मो की निर्जरा के लिये साधक के सामने कर्मबन्धन के विभिन्न कारणो जैसे क्रोध, अहकार, कपट, लोभ, ईर्ष्या, राग (मोह भाव), द्वेष, मिथ्यात्व को आग की लपटो के काल्पनिक दृश्यो के द्वारा चित्रित किया है। साथ ही साथ यह भी दर्शाया है कि किस प्रकार दृढ सकल्प-जनित आध्यात्मिक ऊर्जा के द्वारा उनका दमन हो सकता है।

अगले चरण मे आत्मा के उच्च आरोहण के लिये उपर्युक्त विचारो और भावनाओ को भी मूल रूप मे चित्रित किया गया है।

प्रस्तुत पुस्तक मे प्रत्येक व्यक्ति को साधना-पथ

पर अग्रसर होने का अवसर प्राप्त हो सकता है, यदि वह अतर्मन और दृढ सकल्प से प्रयत्नशील हो ।

मुझे आशा है कि सभी साधक वर्ग और विशेषकर जैन समाज जीवन के उच्च आध्यात्मिक स्तरो की अतर्यात्रा प्रारम्भ करने का प्रयत्न करेंगे। परन्तु उन्हे सफलता तभी मिलेगी जब वे यह भी सकल्प करले कि हम अपने जीवन की सपूर्ण आकाक्षाओ और व्यवहार मे अवरोधक तत्त्वो जैसे परिग्रह भावना, असत्य, अप्रामाणिकता, वैरभाव, क्रोध तथा अभिमान से मुक्त होने का पूर्ण शक्ति से प्रयत्न करेंगे ।

इस विषय मे मेरा ज्ञान नही के बराबर है और न मैं कोई मत प्रकट करने का अधिकारी हूँ। फिर भी शान्ति मुनि के कृपा पूर्ण आग्रह से मैंने इस ग्रथ का प्राक्कथन लिखने की धृष्टता की है। मैं उनका हृदय से आभारी हूँ ।

केसरीलाल बोरदिया
ट्रस्टी, सेवा मन्दिर, उदयपुर
भूतपूर्व अध्यक्ष राजस्थान माध्यमिक
शिक्षा बोर्ड

उदयपुर
2-4-1987



अन्तर्दर्शन

भारतीय सस्कृति आत्मा की सस्कृति है । भारतीय दर्शन आत्मा के दर्शन हैं । भारत की समस्त सास्कृतिक सम्पदा आत्मा को केन्द्रित करके ही स्थिर है और भारत के सभी दर्शन भी अपने तर्क-वितर्कों की व्यूह रचना मे आत्मा की ही परिक्रमा करते हुए परिलक्षित होते है ।

आत्मा के स्वरूप, उसके स्थायित्व, उसकी व्याख्या आदि के विषय मे पर्याप्त मतभेदो के होते हुए भी आत्मा के अस्तित्व को सभी दर्शनो ने निर्विवाद रूप से स्वीकार किया है ।

बौद्ध जैसे क्षणवादी दर्शन ने आत्मा को क्षणस्थायी स्वीकार किया है तो साख्य जैसे नित्यत्ववादी दर्शन ने आत्मा को कूटस्थनित्य माना है । जैन तत्त्व दर्शन ने उसे आपेक्षिक दृष्टि से स्वदेह परिमाण परिणामी नित्य स्वीकार किया है, तो नैयायिक वैशेषिक दर्शनो ने उसे विभुव्यापक रूप प्रदान किया है । चार्वाक जैसे नास्तिक वादी दर्शन ने आत्मा के जन्म-जन्मान्तर को अस्वीकार किया है, तो प्राय अन्य सभी दर्शनो ने किसी न किसी रूप मे पुनर्जन्म की सत्ता को अनिवार्य माना है ।

इस प्रकार आत्मा के स्वरूप एव उसकी व्याख्या के सम्बन्ध मे मत वैविध्य होते हुए भी आत्मा का अस्तित्व, चाहे स्वतन्त्र रूप मे माने या पञ्च तत्त्व मे निर्मित के रूप मे, सभी दर्शन स्वीकार करते हैं ।

इस मान्यता भेद के होने पर भी जितने भी पुनर्जन्मवादी दर्शन है, उन्होने मोक्षतत्त्व को भी स्वीकार किया है । अथवा हम यो कह सकते है कि प्राय सभी आस्तिकवादी दर्शनो का मूल ही मोक्ष अथवा निर्वाण तत्त्व है । सभी अध्यात्मवादी दर्शनो का प्रतिपाद्य आत्मा और उसके परिनिर्वाण रूप केन्द्र की ही परिक्रमा करता हुआ दिखाई देता है ।

यह एक कटु सत्य है कि विभिन्न दर्शनो ने आत्मा और उसकी मुक्ति के स्वरूप को तर्क-वितर्को के महा-जाल मे उलझा-पुलझा दिया है और इसी कारण आत्मा के स्वरूप के विश्लेषण मे मत भिन्नताओ के समान ही मुक्ति और उसकी उपलब्धि के मार्गो के स्वरूप का भी कोई एक रूप निश्चित नही हो सका है। जितने दर्शन उतनी ही साधना विधियो का आविष्कार होता गया। जितने दर्शन उतने ही प्रकार की मोक्ष की कल्पनाएँ बनती चली गई।

किन्तु इतना मत वैविध्य होने पर भी इस विषय मे सभी दर्शन निर्विवाद रूप से एक मत है कि मुक्ति साधना का एक प्रमुख एव अनिवार्य अग ध्यान-योग है। न्याय, वैशेषिक, साख्य योग-पातञ्जलि, बौद्ध आदि सभी दर्शनो ने ध्यान-योग को मुक्ति साधना का प्रमुख अग माना है। महावीर दर्शन की तो पूर्ण आधार शिला ही ध्यान-योग है।

किसी ने प्रार्थना को ध्यान माना, तो किसी ने भक्ति साधना को, किसी ने इष्ट के प्रति तन्मयता को, तो किसी ने देहातीत अवस्था को। यो ध्यान को विभिन्न रूपो मे निरूपित एव व्याख्यायित किया जाता रहा है।

ध्यान की उपयोगिता आध्यात्मिक दृष्टि से तो सर्व-विदित है ही, किन्तु व्यावहारिक दृष्टि से भी ध्यान अतीव उपयोगी साधन है। आज के तनावपूर्ण वाता-वरण मे तो इसकी उपयोगिता और अधिक बढ गई है।

एक मनोवैज्ञानिक सर्वेक्षण के अनुसार दुनिया के ९० प्रतिशत व्यक्ति मानसिक असन्तुलन, अर्थात् किसी न किसी रूप मे पागलपन के शिकार है और जो दस प्रतिशत बचते है वे भी स्वय मुश्किल से ७० प्रतिशत ही स्वस्थ मानसिकता की स्थिति मे होगे।

यो तो आज का युग ही समस्याओ का युग है। प्रत्येक इन्सान विविध आयामी समस्याओ से घिरा हुआ और उनसे जूझता हुआ पाया जायगा। समस्याओ के भी कोई एक-दो रूप ही तो नही हैं। वैयक्तिक, सामा-जिक, पारिवारिक, आर्थिक, राजनैतिक और न जाने कितने प्रकार है समस्याओ के। और यह एक-एक समस्या भी सख्यातीत रूप धारण करके सामने आ खडी

होनी है। एक का सुलझाव–समाधान होता है तब तक अन्य अनेक समस्याएँ उपस्थित होती हैं। यह जीवन ही समस्या-सकुल हो गया है। उलझे हुए रेशम के धागो के समान एक गाँठ निकाले तो दूसरी दस गाँठें और पड जाती हैं। इन्सान के चारो ओर समस्याओ की ही चार दीवारी खडी है, जिनसे निकलने का कोई द्वार ही नही है।

इन समस्याओ की परिधि मे इन्सान अर्धविक्षिप्त अथवा पागल न बन जाये तो क्या बने? उनका मानसिक सन्तुलन अस्त-व्यस्त न हो तो क्या हो?

यो तो समस्याएँ आज ही नई उत्पन्न नही हुई है। युग-युग से समस्याओ का दौर चलता चला आया है। जब से मानव सभ्यता का अस्तित्व है तब से समस्यायें विद्यमान रही है। हाँ, उनके स्वरूप आकार-प्रकार मे अन्तर आता जाता है अथवा वे युगानुसार कम ज्यादा होती रहती है।

आज जितना अधिक तकनीकी विकास हुआ, उतनी ही आवश्यकताये बढी और जब आवश्यकताओ की पूर्ति सब के लिए सब रूपो मे सम्भव नही हुई तो वे ही आवश्यकताये समस्या बनकर खडी हो गईं। दूसरे रूप मे हम आज के युग को समस्याओ का युग कहे तो अतिशयोक्ति नही मानी जा सकती है।

यह समस्याओ का विस्तार ही तो मानसिक तनावो का मूल कारण है। जब मानव-मन समस्याओ का समाधान प्राप्त नही कर पाता है, तो तनावग्रस्त बन जाता है और वह तनावग्रस्तता अनेक शारीरिक-स्नायविक, मानसिक, सामाजिक एव पारिवारिक विकृतियो को जन्म देती हैं।

तथ्यो के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि आज का युग तनाव का युग है। तनाव भी ऐसे कि सामान्य सी बातो, समस्याओ पर अच्छे-अच्छे बुद्धिजीवी आत्म-हत्या को प्रेरित हो जाते हैं। ऐसे एक नही, अगणित प्रसग आए दिन समाचार-पत्रो मे पढने को मिल सकते है, जिनमे अच्छे-अच्छे डॉक्टर, अच्छे-अच्छे अभिभाषक आदि व्यक्ति जरा से पारिवारिक तनाव पर आत्महत्या कर रहे है।

वर्तमान युग की इस दु खान्तिका के होने पर भी हमे यह नही भूलना चाहिये कि किसी समस्या का समाधान नही होता है। सत्य यह है कि समस्या की उत्पत्ति के पूर्व ही उसका समाधान निश्चित होता है।

आज की तनावपूर्ण स्थिति का समाधान भी सुनिश्चित है और है हमारे पास ही। किन्तु हमने उसकी ओर से मुँह मोड रखा है। आज जन-समुदाय समस्याओ के ताने-बाने मे इतना उलझ गया है कि समाधान पर उसकी दृष्टि ही नही पहुँच पाती है। फलस्वरूप अपने पर्स मे ही नोट होते हुए वह भिखारी सा जीवन व्यतीत करता है। यह कितनी दर्दनाक दयनीय दशा है आज के इन्सान की कि मिष्टान्न का थाल सामने होते हुए भी वह दृष्टि मे नही आता है और जीवन क्षुधा से पीडित रहता है।

आम इन्सान की यह चिन्तनीय मानसिकता जब आत्म-कल्याण एव लोक मगलकारी युगप्रचेता महान् आत्म-साधको की दृष्टि मे आती है तो उनका निष्कारण करुणापूत हृदय द्रवित हो उठता है। स्वत ही उनकी साधना की अनुभूतियाँ अभिव्यक्ति का रूप धारण करने लगती है। उनकी अभिव्यक्ति के पीछे लोक-मगल अथवा जन-कल्याण का उद्देश्य ही मुख्य रहता है।

ऐसे ही एक युग-प्रचेता, युग-पुरुष समता विभूति समीक्षण ध्यान योगी आचार्य प्रवर श्री नानेश के द्वारा अपनी चिर सचित साधना की अनुभूतियो का सहज अभिव्यञ्जन हुआ, जिसे समीक्षण ध्यान की सज्ञा प्रदान की गई।

यह तो हम अच्छी तरह समझ चुके है कि हमारी मानसिक एव आध्यात्मिक सभी समस्याओ का एकमेव सबल समाधान है ध्यान-योग। ध्यान-योग एक ऐसी साधना विधि है जो अनादिकाल से बन्द अध्यात्म के द्वार तो उद्घाटित करती ही है, वर्तमान के समस्त मानसिक स्नायविक तनावो से भी मुक्ति दिलाती है। एक ख्यातिप्राप्त हार्ट स्पेशलिस्ट डॉक्टर के अनुसार ३० मिनट प्रतिदिन ध्यान-योग की साधना करने वाला व्यक्ति हार्ट का पेशेन्ट (मरीज) नही बनता है। यह तो ध्यान की ऊपरी-सतही उपलब्धियाँ है। ध्यान-

साधना की आन्तरिक उपलब्धियाँ तो अबूझ हैं, जिन्हे एक साधना की अनुभूतियो से गुजरने वाला व्यक्ति ही जान सकता है।

हाँ, तो ध्यान-साधना ही तनावपूर्ण युग का सर्वाधिक सशक्त समाधान है। ध्यान पर अनेक चिन्तको, विचारको ने अपने-अपने ढग के अनेक विचार दिये हैं। कही-कही व्यावहारिक जीवन मे ध्यान को आत्मसात् करने की विधियाँ भी प्रस्तुत हुई हैं।

उन्ही साधना विधियो मे सुपरीक्षित एव सुपरिष्कृत ध्यान है—'समीक्षण-ध्यान'। समीक्षण-ध्यान आगम वर्णित ध्यान विधियो का निचोड-निष्कर्ष है और आचार्य प्रवर श्री नानेश की दीर्घकालीन साधनात्मक अनुभूतियो का सन्दोह है। यद्यपि अभी यह साधना विधि प्रयोगात्मक प्रणाली के आधार पर अधिक जन-प्रचारित नही हुई है, किन्तु जिन आत्म-साधको ने इसकी प्रयोगात्मकता को आत्मसात् किया है उन्होने आत्मानन्द के साथ मनः सन्तुलन एव मानसिक एकाग्रता के क्षेत्र मे आशातीत सफलता प्राप्त की है।

आचार्य प्रवर श्री नानेश ने अनेक बार समीक्षण ध्यान के विविध आयामी प्रयोगो को आत्मसात् ही नही किया, अपितु अपने शिष्य परिकर को भी उन अनुभूतियो का आस्वादन करवाया है। उनकी स्वय की जीवन प्रणाली तो प्रतिपल ध्यान योग मे लीन एक ध्यान योगी की प्रणाली है। उनकी चेतना के प्रत्येक प्रदेश मे, उनके जीवन के प्रत्येक व्यवहार मे ध्यान-योग प्रतिबिम्बित ही दिखाई देता है। उनकी इस योग-मुद्रा का प्रभाव अपने परिपार्श्व को भी प्रभावित करता है, इसीलिये उनके निकट का समस्त वायु मण्डल ध्यान साधना मे अनुप्राणित बना रहता है।

आचार्य प्रवर ने अपनी सुदीर्घ ध्यान-साधना की अनुभूतियो के आधार पर ध्यान की इस नूतन विद्या को अभिव्यक्ति प्रदान की है। यद्यपि यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि यह समीक्षण-ध्यान विद्या आगम प्रति- पादित ध्यान-विद्या से भिन्न नही है, फिर भी इसकी अन्य अनेक प्रचलित ध्यान विद्याओ से अलग ही विशेषता है। इसके द्वारा हम जीवन की सामान्य मे

सामान्य वृत्ति का समीक्षण करते हुए आत्म-समीक्षण और परमात्म-समीक्षण की स्थिति तक भी पहुँच सकते है ।

ध्यान की यह अप्रतिम विद्या अपने आप मे एक नूतन विद्या है । यह केवल मानसिक तनाव मुक्ति तक ही सीमित नही है, इसका प्रभाव आत्मदर्शन की उस भूमिका तक जाता है जो परमात्म-दर्शन के द्वार उद्घाटित कर देती है ।

समीक्षण ध्यान-साधना मे किसी भी प्रकार की हठ योग जैसी प्रक्रियाओ को स्थान नही दिया गया है । यह साधना सहज योग की साधना है, समीक्षण अर्थात् द्रष्टाभाव की साधना है । इस प्रक्रिया मे हम दुर्वृत्तियो के निष्कासन के प्रति किसी प्रकार की जबर्दस्ती नही करते है और न शक्ति जागरण अथवा आत्मोन्नयन के प्रति भी किसी प्रकार की हठवादिता अपनाई जाती है । यहाँ केवल द्रष्टाभाव आत्म-समीक्षण की सूक्ष्म प्रक्रिया के द्वारा ही सहज सरलता से अशुभत्व का बहिष्कार एव शुभत्व का सस्कार होता चला जाता है ।

प्रस्तुत कृति मे समीक्षण ध्यान की उन विधियो—प्रयोग पद्धतियो का इस रूप मे आलेखन हुआ है कि इन्हे यथा निर्दिष्ट विधि अनुसार एक व्यक्ति अनेको व्यक्तियो को ध्यान मे प्रवेश करवा सकता है अथवा व्यक्ति स्वय साकेतिक उच्चारण या भाव-स्मरण के द्वारा ध्यान की आत्म-समाधि की गहराई मे प्रवेश कर सकता है ।

ध्यान साधना की विधि एव उसकी भूमिका के सन्दर्भ मे रचना के प्रारम्भ मे ही विस्तृत सकेत दिये जा चुके है, तथापि एक सामान्य सकेत यहाँ आवश्यक समझा जा रहा है—

(१) समीक्षण ध्यान साधना के समय-समय की नियमितता का ध्यान साधना की उपलब्धियो मे प्रेरक निमित्त बनता है, अत समय की पाबन्दी नितान्त आवश्यक है ।

(२) ध्यान के पूर्व शरीर शुद्धि अर्थात् लघुशका, दीर्घ-शका आदि शारीरिक प्रवृत्तियो से निवृत्त हो लेना चाहिये ताकि ध्यान मे किसी प्रकार का तदनुरूप व्यवधान उत्पन्न न हो ।

(३) साधना के लिये स्थान शान्त-एकान्त प्राकृतिक दृष्टि से रम्य हो तो श्रेष्ठ है।

(४) ध्यान यथाशक्य पालथी लगाकर ऐसे सरल ग्रासन से बैठना चाहिये कि जिसमे लम्बे समय तक बैठने पर भी किसी प्रकार का तनाव उत्पन्न न हो ग्रौर दीर्घकाल तक बैठा जा सके।

(५) साधना के समय शरीर पर एकदम ढीले वस्त्र होना लाभप्रद है। शीत निवारण के लिये कम्बल ग्रादि का प्रयोग हो सकता है, स्वेटर आदि का नही।

(६) ध्यान के समय मेरुदण्ड (रीढ की हड्डी) सीधा रहना चाहिये। जिससे सुषुम्ना नाडी प्राण सचार होने मे व्यवधान न पडे।

(७) यथा सम्भव ध्यान सीधा जमीन पर बैठकर न किया जाये, क्योकि इससे साधना काल मे उत्पन्न होने वाली शारीरिक ऊर्जा-विद्युत भूमि से उतर जाती है। ग्रत सूखे घास-फूस का ग्रासन श्रेष्ठ माना गया है। इसके बाद सूती वस्त्रो का ग्रासन ग्रौर फिर ऊन के ग्रासन का नम्बर ग्राता है।

(८) साधना काल मे निम्न बातो पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये—

(१) चित्त को पूर्ण एकाग्र बनाये रखने का प्रयास रहना चाहिये। ज्यो ही वह भटकने लगे, उसे मूल केन्द्रीय विषय पर ले ग्राने का प्रयास करना चाहिये।

(२) किसी प्रकार की ऊब के बिना साधना के प्रति सुदृढ बने रहना चाहिये। ग्रनुत्साह, नीरसता, मन का उचटना, शीघ्र लाभ नही होना, ग्रस्व-स्थता एव ग्रन्य सासारिक कठिनाइयो के क्षणो मे भी मन मे ध्यान के प्रति रुचि बने रहना चाहिये। इन विघ्नो का डटकर मुकाबला करने की क्षमता ग्रर्जित करनी चाहिये।

(३) साधना मे निरन्तरता बने रहना ग्रावश्यक है। ग्रत्यधिक ग्रावश्यक कार्य के ग्रतिरिक्त साधना के कार्य मे व्यवधान नही डालना चाहिये।

(४) साधक का ग्राहार-विहार सात्विक होना चाहिये।

उपर्युक्त स्थितियो पर सावधानी रखते हुए यदि प्रस्तुत समीक्षरण ध्यान का अनुशीलन किया जाता है तो तनाव मुक्ति और आत्म-शान्ति के द्वार निश्चित ही उद्घाटित हो सकते है ।

यह कहा जा चुका है कि ध्यान साधना चर्चा का नही, प्रयोग का विषय है । आप और हम इस साधना के प्रयोग-अनुशीलन करे । साधना की गहराई मे उतरते जाये–उतरते जाये .आनन्द स्वत उपलब्ध होगा ।

प्रस्तुत रचना मे एक बात स्मरणीय है कि इसमे अनेक स्थलो पर कुछ पारिभाषिक शब्दो का प्रयोग हुआ है, जो जैन तत्व दर्शन मे किन्ही विशेष अर्थों मे ही प्रयुक्त होते हैं । यद्यपि उन शब्दो को यथास्थान स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है । तथापि उन्हे अलग परिशिष्ट के रूप मे भी स्पष्ट किया जा रहा है ।

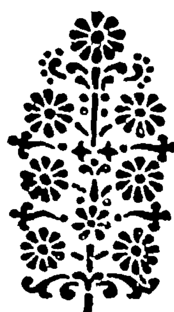
एक बात और, ग्रन्थ मे अधिकाश स्थलो पर 'परमाणु' शब्द का प्रयोग हुआ है—जैसे अहकार के परमाणु, वासना के परमाणु आदि । यहाँ यह समझ लेना आवश्यक है कि जैन तत्व दर्शन मे परमाणु पुद्गल पदार्थ के एक ऐसे अविभाज्य लघुतम घटक को माना गया है जिसके दो खण्ड टुकडे नही हो सके, किन्तु प्रस्तुत रचना मे भाषा शैली की सुविधा के लिये 'परमाणु' शब्द का प्रयोग प्राय पुद्गल स्कन्ध के लिये ही किया गया है । तात्पर्य यह है कि इस रचना मे जहाँ-कही भी परमाणु शब्द आए वहाँ अनन्त परमाणुओ का पिण्ड स्कन्ध ही समझना चाहिये ।

इसी प्रकार साधना विधियो मे कुछ स्थलो पर सैद्धान्तिक व्युत्क्रम भी हुआ है । जैसे कर्मपूर्ण निर्जरा के बाद पुन पुन. प्रक्रिया से गुरण स्थान आरोहरण मे उच्चतम गुण स्थानो पर पहुँचकर पुन दूसरे दिन उसी प्रक्रिया मे गुण स्थानो पर आरोहरण करना आदि । किन्तु यह सब एक भावात्मकता से गुजरने का अभ्यास मात्र है । इसे हम सैद्धान्तिकता से जोडने का प्रयास न करे । केवल साधना की अनुभूतियो से गुजरे और अन्तर् आनन्द प्राप्त करते चले जाये ।

कचन बाग, इन्दौर —शान्ति मुनि
२४ फरवरी, १९८७

* अनुक्रम *

विधि-विधान



समीक्षण ध्यान : साधना

समीक्षण ध्यान के दार्शनिक किंवा वैचारिक पक्ष पर एक सामान्य चर्चा की जा चुकी है। किन्तु यह स्पष्ट किया जा चुका है, कि समीक्षण ध्यान केवल वैचारिक या काल्पनिक हवाई किला ही नही है। समीक्षण ध्यान ही नही, कोई भी ध्यान साधना, यदि वैचारिक सैद्धान्तिक परिवेश तक ही सीमित है, तो वह अधूरी है या यो कहे कि वह ध्यान नही, केवल विचारो का सकलन मात्र है।

ध्यान तो एक वह ऊर्जस्विल प्रक्रिया है, जिसे अनुभूति के धरातल पर जीया जाता है। ध्यान के सन्दर्भ मे लच्छेदार भाषण दे दिया जाय, उस पर वृहत्-काय ग्रन्थ लिख दिया जाय और उसे बहुत सुन्दर ढग से व्याख्यायित कर दिया जाय, क्या इसे ध्यान साधना कहा जा सकता है ? हा, वह ध्यान की विवेचना कही जा सकती है, ध्यान साधना नही।

ध्यान साधना का अर्थ है—जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे तन्मयता-तल्लीनता अथवा एकावधानता एवम् समरसता का घटित होना—और वह होता है ध्यान की प्रयोगात्मक प्रक्रिया के द्वारा। ध्यान के प्रयोग मे डूबता हुआ साधक उस गहराई को छू जाता है, जो ध्यान पर लाख पृष्ठ पढ लेने या हजारो पृष्ठ लिख देने पर नही हो सकता।

यह सत्य है कि ध्यान की प्रयोगात्मक पद्धतियो को समझने के लिए ग्रन्थो की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। साधक को कुछ दिग्वोध प्राप्त हो सकता है, किन्तु तज्जनित आनन्द तो ध्यान-साधना की गहराई मे बैठने पर ही प्राप्त हो सकता है। अध्ययन—अध्ययन ही रहता है, अनुशीलन नही। आनन्द अध्ययन मे नही, अनुशीलन मे होता है। जैसे किसी को मिठाई का ज्ञान है कि वह कैसे वनती है, किन तत्वो से वनती है और कितनी स्वादिष्ट लगती है। किन्तु जव तक उसे खाया नही जाता, मिठाई का स्वाद-जनित आनन्द नही लिया

जा सकता है । ठीक उसी प्रकार यह समझ लिया जाय कि ध्यान की यह प्रक्रिया है, इस विधि से ध्यान किया जाता है और वह इतना आनन्द देता है, कोई आनन्द नही दे सकता है । जब तक ध्यान को अनुशीलन मे नही लाया जाता, जब तक उसे जीया नही जाता, ध्यान आनन्दप्रद नही हो सकता है । 'ध्यान तो आनन्द का उत्साह-केन्द्र है' । ध्यान से बढकर आनन्द प्राप्ति का और कोई साधन हो ही नही सकता । या यो कहे 'ध्यान और आनन्द एक ही सिक्के के दो पहलू है' या पर्यायवाची शब्द है । ध्यान अर्थात् आनन्द—आनन्द अर्थात् ध्यान ।

किंतु समस्या यह है कि ध्यान साधना मे उतरा कैसे जाय ? ध्यान साधना किस विधि, किस प्रक्रिया से की जाए ? कौनसा सुगम मार्ग है जिसके द्वारा ध्यान-साधना के प्रयोग कर अन्तरंग की गहराई मे डुबकी लगाई जाय ?

समीक्षण ध्यान साधना : प्रयोग और भूमिका

बस इन्ही जिज्ञासाओ के समाधान का प्रयास प्रस्तुत प्रकरण मे किया जा रहा है । समीक्षण ध्यान साधना केवल वैचारिकता से अनुबद्ध साधना नही है, उसमे अनुशीलन की पूरी प्रक्रिया जुडी हुई है । उन्ही प्रक्रियाओ मे से कुछ का यहाँ विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है ।

यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि प्रस्तुत समीक्षण ध्यान विधियो मे जो कुछ लिखा जा रहा है वह अनुभूत विधियो के रूप मे लिखा जा रहा है । इसकी प्रयोगात्मकता के दो रूप हो सकते है एक आत्म-प्रेरणा (ऑटो सजेशन Auto Suggestion) और दूसरा पर-प्रेरणा (सजेशन Suggestion)

साधक जब कभी ध्यान साधना मे सक्रिय हो, इन विधियो मे उल्लिखित शब्दावली का तन्मयतापूर्वक उच्चारण करता चला जाय एवम् ठीक वैसा ही फीलिंग (अनुभूति) का अनुभव करता चला जाय । स्वय के द्वारा दोहराये जाने वाली शब्दावली की इस प्रक्रिया को 'ऑटो सजेशन' (Auto Suggestion) या 'आत्म-प्रेरणा' कहते है ।

दूसरी विधि मे मुख्य तौर पर सामूहिक साधना के प्रयोग होते हैं । इसमे एक साधक गम्भीर-गहन शब्दो मे

उल्लिखित शब्दो का उच्चारण करता जाता है और अन्य सभी साधक उन शब्दो के अनुसार अपने भीतर वैसा अनुभव करते चले जाते है। इस प्रक्रिया को पर-प्रेरणा या सजेशन (Suggestion) कह सकते है।

समीक्षण ध्यान साधना की इन दोनो प्रक्रियाओ का मूल उद्देश्य एक ही है कि साधक अधिक से अधिक आत्मकेन्द्र के निकट होता चला जाए। बन्धन से मुक्ति की ओर बढता जाय एव परभाव से ऊपर उठकर स्वभाव मे स्थिर हो जाय यही तो हमारी साधना का मूल उद्देश्य है कि साधक पूर्णतया साध्यरूप मे रूपान्तरित हो जाय, जहाँ स्व-पर के सभी भेद मिट जाते हैं।

समीक्षण ध्यान पूर्व भूमिका (१)

ध्यान-साधना की प्रयोगात्मक प्रणालियो को समझाने के पूर्व उसकी भूमिका शुद्धि को समझ लेना अति उपयोगी सिद्ध होता है। कुछ स्थान एव परिस्थितियाँ ऐसी भी होती हैं जो ध्यान साधना के प्रतिकूल वायु मण्डल का निर्माण करती हैं अथवा साधक चित्त को पुन पुन उद्वेलित करके ध्यान मे विक्षेप उत्पन्न करती है। एक अच्छे ध्यान-साधक के लिए यह सब जान लेना आवश्यक है कि किन परिस्थितियो मे ध्यान लगेगा और कौन-से तत्त्व ध्यान मे विघ्न उपस्थित करते हैं। यहाँ उनका सक्षिप्त, किन्तु सार-गर्भित विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है।

द्रव्यादि-शुद्धि-अशुद्धि

जैन तत्व विवेचना पद्धति मे द्रव्य क्षेत्र, काल और भाव की बडी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। वहाँ किसी भी तत्त्व की सम्पूर्ण विवेचना तभी हो सकती है जब कि उसमे द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव से चिन्तन किया गया हो। ध्यान-साधना की भूमिका शुद्धि भी तभी बन सकती है जब कि उसमे द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की शुद्धि हो। द्रव्यादि चारो की शुद्धता ध्यान साधना को सुगम बना सकती है, तो चारो की अशुद्धता ध्यान को दुरूह बना देती है। ध्यान-साधना मे द्रव्यादि की शुद्धता-अशुद्धता का निम्न बिन्दुओ के आधार पर चिन्तन किया जा सकता है।

द्रव्य—

ध्यान की द्रव्य सम्बन्धी विवेचना मे ध्यान के लिए उपयोगी-अनुपयोगी द्रव्यो-आसनो एव आहारादि

की विवेचना होती है। साधक चित्त की शुद्धता-अशुद्धता का मानदण्ड भी द्रव्य विवेचन मे ही आ जाता है।

वर्जित द्रव्य—

कुत्सित अथवा विकार बढाने वाले आसन एव तामसिक आहार ध्यान-साधक के लिये वर्जित माने गए है। इसी प्रकार घृणित या विक्षेपकारक पदार्थ—अस्थि, मास, रक्त, चर्म, मेद, मज्जा, चर्बी, मृत जानवरो के कलेवर, खान-पान के पदार्थ—पक्वान्न, ताम्बूल, औषधियाँ, तेल, इत्र, पलग, आसन शैय्या, आभूषण, शृङ्गार, प्रसाधन के पदार्थ, स्त्री आदि के कामुकतापूर्ण चित्र, इत्यादि द्रव्य जहाँ पड हो, वहाँ ध्यान साधको के चित्त मे स्थिरता नही बन पाती है, इन अशुभ या चित्त विचलित करने वाले द्रव्यो के बीच मनोनिग्रह अत्यन्त कठिन होता है, अत इन द्रव्यो की उपस्थिति ध्यान के लिये वर्णनीय मानी गई है।

शुद्ध द्रव्य—

शुद्ध निर्जीव द्रव्य पृथ्वी-शिलापट्ट पर, काष्ठ के पाट एव चौकी पर, पराल आदि घास के आसन पर, ऊनी या सूती सादे वस्त्र पर ध्यानस्थ होने से विचारो मे सात्विकता का सचार होता है, अत ये द्रव्य ध्यान-साधक के लिए शुद्ध या उचित माने गये हैं।

आहार—

समीक्षण ध्यान-साधक को परिमित एव सात्विक हल्का आहार करना होता है। आहार न अधिक घृतादि से गरिष्ठ हो और न अधिक रूक्ष। अधिक मिर्च-मसाले वाले तामसिक आहार नही होकर ऋतु के अनुसार अपनी शारीरिक प्रकृति के अनुकूल आहार होना चाहिये। समयानुसार परिमित मात्रा मे लिया गया निर्दोष आहार चित्त-स्थिरता मे सहयोग करता है। आहार का साधक के चित्त पर बहुत गहरा प्रभाव पडता है। अत ध्यान-साधक को इस विषय मे बहुत अधिक सतर्क-सावधान रहना चाहिये।

आसन—

ध्यान-साधना के लिये आसन का भी अपना अलग ही महत्व होता है। वैसे आगमो मे वीरासन,

लगुडासन, अम्बखुज्जासन, गोदूहासन आदि अनेक आसनो का उल्लेख मिलता है, किन्तु वर्तमान युग मे शारीरिक सगठन और शक्ति को देखते हुए इन आसनो मे अधिक समय तक स्थिरता बन पाना कठिन होता है। अत आधुनिक साधको के लिये पद्मासन, पर्यकासन, दण्डासन अथवा सुखासन ही अधिक उपयोगी सिद्ध होते हैं।

पद्मासन—

पालथी मारकर दोनो जांघो पर दोनो पैर मिश्रित रूप से जमाकर विकसित कमल के समान बाये हाथ की हथेली पर दाये हाथ की हथेली ऊर्ध्वमुखी रखकर नाभि के निकट स्थिर रखकर सुस्थिर रूप मे बैठना पद्मासन है।

पर्यकासन—

साधारण पालथी लगाकर उपर्युक्त विधि से हाथो को रखकर बैठना पर्यकासन है।

दण्डासन—

दण्ड के समान सीधे-स्वस्थ सुस्थिर खडे रहना दण्डासन है।

उपर्युक्त तीनो आसन सुगम होते है। अत इनमे साधक कुछ अधिक समय तक स्थिर रह सकता है। ध्यान-मुद्रा मे अधिक समय तक आसन से स्थिर हो जाना साधना की गहराई मे प्रवेश के लिये लाभप्रद माना जाता है।

समीक्षण ध्यान साधक के लिये उपर्युक्त तीनो आसनो मे से किसी एक आसन पर स्थिर होकर नासाग्र-दृष्टि अर्थात् नाक के अग्रभाग पर दृष्टि को केन्द्रित करके अथवा प्रवेश केन्द्र-भृकुटी मध्यस्थान पर चित्त स्थिर करके शारीरिक सभी क्रियाओ का अवरुधन कर सभी मानसिक तनावो से मुक्त होने हेतु ध्यान मुद्रा साधना चाहिये। यह समस्त प्रक्रिया द्रव्य शुद्धि की प्रक्रिया है।

सहायक

द्रव्य शुद्धि मे एक बात की तरफ और ध्यान जाना चाहिये, वह है सहयोगी। ध्यान साधना मे प्रारम्भ मे

ऐसे सहयोगी मार्गद्रष्टा की आवश्यकता होती है जो स्वय ध्यान साधना की गहरी अनुभूतियो से सयुक्त हो और साधक को स्खलनाओ से बचाकर सतत सावधान कर सके। उचित सहयोगी के अभाव मे साधना मे गति शीघ्रतापूर्वक एव व्यवस्थित नही हो सकती है। अत साधना के आरम्भ काल मे ही नही, उसकी मध्यम स्थिति मे भी उच्च अनुभवी सहयोगी का सहकार साधक को साधना मे बहुत अच्छी स्थिति पर पहुँचा सकता है। सहायक को हम 'गुरु', मार्गद्रष्टा अथवा और किसी भी नाम से पुकार सकते है। जो भी महान् आत्मा हमे ध्यान मे सहयोग प्रदान करे उसके प्रति पूज्यता अथवा आदर का भाव हमारी साधना मे निखार लाता है ।

क्षेत्र—

द्रव्य के समान ही क्षेत्र-जनित अनुकूलता प्रतिकूलता भी साधक चित्त को प्रभावित करती है। अत समीक्षण ध्यान साधना के पूर्व ध्यान के अयोग्य अथवा योग्य क्षेत्र की परख एव योग्य क्षेत्र के चयन का परिज्ञान भी आवश्यक हो जाता है।

अयोग्य क्षेत्र—

पहले हम ध्यान-साधना के अयोग्य क्षेत्र-साधना मे विक्षेप उपस्थित करने वाले अशुद्ध क्षेत्रो को समझले। निम्न बिन्दुओ से उनको स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है।

(१) जिन स्थानो पर दुष्ट, अन्यायी व अधार्मिक राजा का स्वामित्व हो, जहाँ पाखण्डी, कुलिगी अथवा म्लेच्छ लोगो का प्राबल्य हो तथा जहाँ इन स्थितियो के कारण ध्यान मे विघ्न अथवा उपसर्गो की अधिक सम्भावना रहती हो, वे क्षेत्र ध्यान-साधना के अयोग्य माने गए है।

(२) जहाँ पर मन को रागात्मक भाव की ओर खीचने वाले पदार्थ-पुष्प-फल, पत्र-धूप-दीप, अथवा मदिरा मास आदि पडे हो, वहाँ मन के चचल होने की बहुत अधिक सम्भावना है। मन मे राग भाव की उत्पत्ति होने से ध्यान साधना की भूमिका ही नही बन पाएगी।

(३) जहाँ पर व्यभिचारी स्त्री-पुरुष क्रीडा करते हो, कामोद्दीपक और शृङ्गारमय चित्र लगे हुए हो, कामक्रीडा के शास्त्रो का पठन-पाठन होता हो, वाद्य-यन्त्र

वजते हो ऐसे स्थानो पर विकार उत्पन्न होने की सम्भावना रहती है। वहाँ चित्त चाचल्य वना रहने से ध्यान नही हो सकता है।

(४) जहाँ जुआ खेला जाता हो, कैदी रहते हो, मद्य मास विकता हो, शिकारी रहते हो, शिल्पकार (कलाकार, चमार, सुनार, लुहार, रगरेज) आदि रहते हो, ऐसे स्थानो पर चित्त विग्रह होने की सम्भावना रहती है।

(५) जहा नपु सक, पशु, तिर्यंच प्राणी, कुलक्षणा नारी, भाँड, नटखट पुरुष आदि अयोग्य प्राणी रहते हो, ऐसे स्थान पर अप्रतीति यानी अविश्वसनीयता की सम्भावना वनी रहती है।

(६) जहाँ मल्ल युद्ध और कुश्तियाँ तथा लडाई-झगडा होता हो, झगडे के शास्त्र पढे जाते हो, पचायती मामले चलते हो ऐसे स्थानो पर सक्लेश पैदा होने की सम्भावना रहती है।

(७) जहाँ स्वामी द्वारा किसी का भी प्रवेश किया जाना निषेध किया गया हो, ऐसे स्थानो पर रहने से चोरी, क्लेश और मध्य मे ही निकाले जाने की सम्भावना रहती है।

योग्य क्षेत्र—

उपर्युक्त सभी क्षेत्र ध्यान साधना के अयोग्य माने गए हैं। ध्यान साधना के लिये ऐसे निरवद्य स्थान चाहिये, जहाँ का वातावरण शान्त-प्रशान्त हो और जो साधक-चित्त को अन्तरग तक प्रभावित करता हो।

ध्यान के लिये उपयुक्त क्षेत्र

ध्यान के लिये उपयुक्त क्षेत्रो अथवा स्थानो को सामान्य रूप से निम्न रूप मे समझा जा सकता है— जहाँ ध्यान साधक के चित्त मे समाधि शान्ति का सचार हो सकता है—

(१) निर्जन स्थान— जहाँ मनुष्य आदि की वस्ती न हो अथवा उनका विशेष आवागमन न हो, ऐसे स्थान मे वातावरण शान्त प्रशान्त वना रहता है। चित्त मे किसी प्रकार का विक्षेप उत्पन्न नही होता है।

(२) नदी तालाब अथवा समुद्र के किनारे वाले स्थान जो वृक्षो के झुरमुटो से शोभित हो, जहाँ किसी प्रकार का जनरव या कलरव न हो।

(३) ऐसे स्थान जहाँ नीचे तो हरित वनस्पती से रहित हो किन्तु ऊपर लताग्रो के मण्डप बन गए हो। ये प्रकृति के बनाये हुए मण्डप बडे सुहावने और मन शान्ति के केन्द्र होते है।

(४) पर्वत का कन्दरामय स्थान, जहाॅ पर्वतो से कुछ हिस्से ऐसे निकले हुए हो जो बाहर से लघु कन्दराओ का रूप लिये हो व ऊपर से सहज ही प्राकृतिक पत्थरो की छाया बन गई हो।

(५) गिरि-गुफाग्रो मे, जहाॅ के वातावरण मे एकदम सौम्य मधुरता व्याप्त हो रही हो, अन्य आम व्यक्ति जहाँ पहुँच नही सकते हो।

(६) श्मशान की छत्रियो वाले सुनसान स्थान, जहाॅ रात्रि अथवा विकाल मे आम व्यक्ति जाने से भयभीत रहता है।

(७) सूखे वृक्षो की कोटर अर्थात् बडे-बडे वृक्षो के सूखे तनो मे बन गई खोखले, जहाँ आम व्यक्ति की दृष्टि ही नही पडती है।

(८) शून्य ग्राम अथवा शून्य गृह। जो ग्राम बस्तियाॅ या घर उजड गए हो। वहाॅ कोई रहने वाले न हो। इसी प्रकार शून्य देवालय जीर्ण-शीर्ण खण्डहर वाले मकान आदि ऐसे स्थान जो जन सकुल वातावरण वाले न हो।

इन सबके अतिरिक्त ऐसे कोई भी क्षेत्र हो, जो अशुद्ध स्थान मे वर्णित सभी दोषो से रहित हो।

उपर्युक्त सभी स्थान निर्जीव, निर्दोष, एव एकान्त व शान्त हो, तो मन को भी शान्त-प्रशान्त बनाते हैं और चेतना को ध्यान समाधि मे ले जाकर आत्मशाति प्रदान करते है।

काल—

ध्यान-साधना मे काल किवा समय का निर्धारण भी कम महत्त्व नही रखता है। कुछ काल खण्ड अथवा

समय ऐसे होते है, जिनमे ध्यान साधना का हो पाना अत्यन्त कठिन होता है।

काल शब्द यहाँ सामान्य समय के अर्थ मे प्रयुक्त हुआ है, इसके दो रूप है—(१) काल खण्ड अर्थात् दीर्घ कालावधि जैसे आरे, ऋतु आदि और (२) दिन-रात के अष्ट प्रहर मे से कौन-कौन से और कितने प्रहर। यहाँ दोनो दृष्टियो से ध्यान साधना के लिये उपयोगी-अनुपयोगी काल का विवेचन दिया जा रहा है, ताकि समीक्षण ध्यान साधक ध्यान-साधना के लिये समुचित समय का निर्धारण कर सके।

अशुभ अथवा निषिद्ध काल—

अपेक्षाकृत रूप से पहला, दूसरा और तीसरा आरा और छठा आरा ध्यान के अयोग्य माना गया है। इनमे धार्मिक पुरुषो के अभाव से ध्यान क्रिया की साधना अति स्वल्प ही होने की सभावना रहती है। इसी प्रकार अति उष्णकाल, अति शीतकाल, अति जीवोत्पत्तिकाल, दुष्काल, विग्रहकाल, रोगग्रस्तकाल इत्यादि समयो मे भी ध्यान साधना बराबर नही हो सकती है।

क्योकि ये अथवा ऐसे ही अन्य कालविग्रह करने वाले गिने जाते है। इन समयो मे ध्यान करने वाले साधक के चित्त मे विक्षेप बना रहता है।

शुभ काल—

ध्यान के लिये सर्वोत्तम काल तो चौथा आरा ही माना जाता है। क्योकि उसमे वज्र, ऋषभ, नाराच आदि सहननो की, उत्तम सस्थानो की एव अन्य अनुकूल सयोगो की विशेषताएँ रहा करती है। यही कारण है कि उस समय मरणातक कष्ट उपस्थित होने पर भी उसे सहन करते हुए ध्यान मे स्थिर रहा जा सकता था।

इस पचम काल मे शारीरिक सस्थान और सहननो की न्यूनता होने से उस प्रकार का ध्यान नही हो सकता है तथापि ध्यान का एकदम अभाव नही समझना चाहिये। पचम काल मे भी ध्यान-साधना हो ही सकती है। शुक्ल ध्यान जैसी उच्च नही तो धर्म ध्यान जैसी सामान्य साधना तो हो ही सकती है। फिर भी इस काल मे ध्यान का समय शीत-उष्ण काल आदि अपनी प्रकृति के अनुसार लेना चाहिए।

उत्तराध्ययन सूत्र मे "बीय साण सियायह" ऐसा कहा गया है। जिसका तात्पर्य यह है कि दिन के और रात्रि के द्वितीय प्रहर मे ध्यान किया जाय। कितने ही ग्रन्थो मे रात्रि के चौथे प्रहर मे ध्यान करने का उल्लेख पाया जाता है। यह द्रव्य क्षेत्र, काल और विधि की विवक्षा और शुभाशुभ स्थिति केवल अपूर्ण ज्ञानी और अस्थिर चित्तवृत्ति वालो के दृष्टिकोण से कही गई है, किन्तु जो पूर्ण ज्ञानी हैं, अडोलवृत्ति वाले हैं और निर्विकार हैं, उनके लिए तो ध्यान की दृष्टि से सभी क्षेत्र, द्रव्य और काल अनुकूल ही हुआ करते है।

भाव—

ध्यान का मूल अग है भाव, विचार अथवा चिन्तन। विशुद्ध भाव-विचार-चिन्तन मे ही विशुद्ध ध्यान-साधना सम्भव है। वैसे हमारे मन मे शुभ एव अशुभ दोनो ही प्रकार की भाव तरगे उठती हैं। दोनो मे ध्यान साधना के योग्य विचार होने पर ही ध्यान साधनाकी गहराई मे प्रवेश हो सकता है।

अशुभ भाव—

यो तो आर्त्तध्यान एव रौद्रध्यान की स्थिति मे होने वाले सभी विचार अशुभ अथवा अशुद्ध भाव की श्रेणी मे आते है। अत इन दोनो ध्यानो मे ध्यान-साधना अच्छी तरह से नही हो सकती हे। इसके अतिरिक्त विषय, कषाय, आश्रव, अशुभ योग, चपलता, मानसिक अस्थिरता, असमाधि, विफलता, कठोरता, अधैर्य, राग-द्वेष, एव नास्तिकता जैसे कुत्सित विचारो को भी अशुभ भाव समझना चाहिये। इन विकृतियो के समय चित्त मे चाचल्य बना रहता है जो ध्यान-साधना का सबसे बडा शत्रु माना गया है। ऐसे अशुभ योगो अथवा अशुभ भावो मे ध्यान नही हो सकता है।

शुभ भाव—

समीक्षण ध्यान-साधना के लिये जिन भावो की अपेक्षा होती है, वे प्रशस्ततम भाव है—आत्मस्थ होने के एव विश्व-मैत्री के उत्प्रेरक। ध्यान-साधना मे चित्त की स्थिरता तभी सम्भव है, जबकि उसमे राग-द्वेष के वैचारिक भाव न होकर करुणा, दया, स्नेह व सौजन्य के मृदुल भाव हो। विचारधारा इतनी प्रशस्त हो कि मन

मे कभी किमी को देखकर द्वेप या राग का उदय न हो। मन मदा ममाहित एव ममाविस्थ रहे।

चूंकि ममार मे अनेक प्रकार के लोग होते है और उन मबके प्रति हमारे मनो मे अनेक प्रकार के विचार उठते है। मानव-मानव का मामाजिक, पारिवारिक एव राजनैतिक आदि दृष्टियो से एक दूमरे मे सम्पर्क, सम्बन्ध बनता ही है। उन सम्बन्धो मे सम्मुखस्थ व्यक्ति जिस स्वभाव का होता है, प्राय उसी के अनुरूप हमारे मन की प्रक्रिया होती है और इस रूप मे मन राग द्वेप की गलियो मे भटकने लगता है। फिर ये अशुद्ध भाव ही ध्यान साधना मे बाधा पहुँचाते है।

ऐसी स्थिति मे अपने भावो को प्रशस्त बनाए रखने के लिए क्या किया जाय, यह एक जटिल प्रश्न है। क्या हम दुनिया के लोगो का स्वभाव बदल सकते हैं? यदि नही तो फिर हमे ही अपने आपके स्वभाव को बदलना पडेगा। समीक्षण ध्यान का साधक दुनिया को नही, स्वय को बदलने का मकल्प करता है।

इसके लिए जैनाचार्यों ने ममार के ममस्त प्राणियो को चार भागो मे विभक्त कर दिया और यह निर्देश किया कि साधक उन चारो पर चार प्रकार से चिन्तन करे, जिन्हे चार भावना कहा गया है। वे चार विभाग एव चार भावनाएँ निम्न रूप से समझी जा सकती है।

"सत्त्वेषु मैत्री गुणिषु प्रमोद, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपा परत्वम्।
माध्यस्थ भाव विपरीत वृत्तौ, सदा ममात्मा विदधातु देव॥"

—अमित गति द्वात्रिंशिका-१

मैत्री, प्रमोद, करुणा और माध्यस्थ ये चार प्रकार के प्रमुख भाव होते हैं, जो क्रमश मभी प्राणियो पर गुणीजनो पर, दुखी जीवो पर एव दुर्जनो पर बनाए जाते या रखे जाते हैं।

मैत्री भावना—

"मित्ति मे सव्व भूएसु, वेर मज्झ न केणइ।"

के आर्ष वाक्य के अनुसार ध्यान साधक की मदा मर्वदा यह भावना रहनी चाहिये कि ममार के ममस्त प्राणियो पर मेरा मैत्री भाव हो, मेरा किमी भी आत्मा के साथ वैर भाव न हो।

भगवती सूत्र आदि आगमो के अनुसार इस आत्मा ने ससार की प्रत्येक आत्मा के साथ अनन्त वार सम्वन्ध स्थापित कर लिये है। आज के पिता-पुत्र, पति-पत्नी, भाई-बहिन, माता-पुत्री, पुत्र-वधू आदि सम्बन्ध है, ये सभी सम्वन्ध अनन्त वार प्रत्येक आत्मा के साथ किये जा चुके है। इस दृष्टि से जब ससार की सभी आत्माएँ अपनी निकटतम सम्वन्धी रही है, तो फिर वैर-विरोव किससे किया जाय ? सभी आत्माएँ तो अपनी मित्र रह चुकी है।

इस प्रकार समीक्षण ध्यान-साधक यह प्रशस्ततम भावना रखता है कि ससार के समस्त सूक्ष्म वादर, त्रस-स्थावर प्राणी मेरे मित्र है। मै किसी को भी किसी भी प्रकार की पीडा नही पहुँचाऊँ। जैसे मेरा निकट परि-जनो के साथ प्रेम है, वैसा ही सभी प्राणियो पर प्रेम रहे। मेरे मन मे किसी के प्रति दुर्भाव उत्पन्न न हो। मै ससार के समस्त प्राणियो को अपनी आत्मा के तुल्य समझू और यथाशक्ति सभी को सुखी वनाने का प्रयास करूँ। यह चिन्तन प्राणिमात्र पर मैत्री भावना का चिन्तन है।

प्रमोद भावना—

प्रथम मैत्री भावना मे ससार के समस्त जीवो को सामान्य रूप से आत्मीयता प्रदान करने के बाद अन्य तीन भावनाओ मे समस्त सासारिक प्राणियो को तीन वर्गो मे विभक्त किया गया है।

ससार मे कुछ व्यक्ति ऐसे होते है जो अपने से अधिक गुणवान् है। ज्ञान के अनुपम कोष है। वीतराग वाणी पर प्रगाढ श्रद्धा रखने के साथ ही विशिष्ट श्रुत-सम्पन्न होते है और अपने ज्ञान एव श्रद्धा के द्वारा जन-मन मे वीतराग वाणी का प्रचार-प्रसार करते है। ऐसे ज्ञानपुञ्ज महापुरुषो के प्रति वहुमान रखते हुए अपने मन मे उनके गुणो के प्रति प्रमुदित होना, प्रमोद भावना है।

इसी प्रकार अपने से श्रेष्ठ कवि, प्रवक्ता, व्याख्याता आदि प्रभावक महापुरुषो को देखकर मन मे ईर्ष्या का नही, श्रद्धा भाव का जागरण होना, उनका गुणोत्कीर्तन करना भी प्रमोद भावना के अन्तर्गत आता है।

ससार मे अनेकानेक महान् आत्माएँ हैं—कुछ सदा आत्मध्यान मे लीन रहने वाली हैं, कुछ अल्पभाषी गुणग्राही हैं, तो कोई ध्यानयोग के उच्चकोटि के साधक है। कोई मासक्षमण आदि दीर्घ तपस्या करने वाले है, तो कोई सबल आत्मा मे ही रमण करते रहते हैं। कोई रस परित्याग का तप करके नीरस आहार से इन्द्रियो को वस मे करने वाले है, तो कोई अनेक प्रकार के कायक्लेश तप से आत्मा को भावित करने वाले हैं। कोई त्याग, तप नही कर पाते है तो सावर्मी वात्सल्य के द्वारा सेवाभक्ति का लाभ लेते हैं।

अनेक व्यक्ति गृहस्थ जीवन मे रहकर भी तप-त्याग एव व्रतो से अपनी आत्मा को सजाने का प्रयास करते हैं। तन-मन-धन से चतुर्विध सघ की सेवा करते है। साधु-साध्वियो को प्रासुक आहारादि दान देकर साता पहुँचाते है।

ऐसे गुणधारक महान् आत्माओ को देखकर मन मे प्रफुल्लता का अनुभव करना, उनके गुणो को अपने जीवन मे उतारने का प्रयास करना तथा यह चिन्तन करना कि हम महान् भाग्यशाली हैं जो हमे ऐसे उच्च पुरुषो का सान्निध्य प्राप्त हुआ। हमारा क्षेत्र धन्य है, जहाँ ऐसे नर-पुगव उत्पन्न हुए। ऐसे उन्नत विचारो को प्रमोद भावना कहा जाता है। समीक्षण ध्यान साधक इस प्रमोद भावना के द्वारा गुणज्ञता एव गुणानुराग का विकास करता है, जो उसकी ध्यान साधना मे सहयोगी होता है।

करुणा भावना—

अपने से अधिक गुणवान् लोगो पर प्रमोद भाव का जागरण होता है, तो ससार मे दूसरी कोटि के लोग भी है, जो अपने से अधिक दीन-हीन है, गुणो मे भी न्यून है, उन पर कैसी भावना रखी जाये ?

इस जिज्ञासा के समाधान के रूप मे करुणा भावना का निरूपण किया गया है। अनुकम्पा के पात्र दुःखी जीवो पर करुणा का उत्पन्न होना सम्यग्दृष्टि साधक का लक्षण माना है। दूसरे वर्ग के प्राणियो पर हृदय से करुणा उत्पन्न होना और उनके दुःख दूर करने

के लिए सदा प्रयत्नशील रहना ध्यान-साधना को सम्बल प्रदान करता है।

सभी सासारिक प्राणी कर्म के अधीन है और शुभाशुभ कर्मों के अनुसार सुख-दु ख का फलयोग करते रहते है। अनेक व्यक्ति ऐसी दीन-हीन अवस्था मे रहते है कि उन्हे एक समय भर पेट भोजन नहीं मिलता है। तन ढकने को वस्त्र नही मिलते है। रहने को झोपडी भी नसीब नही होती है। फिर अनेक जीव वेदनीय कर्म के उदय से अनेक प्रकार की शारीरिक व मानसिक वेदनाएँ-पीडाएँ भोगते रहते है। अनेक अपराधो के कारण कारा-गृह मे बन्धनो मे पडे हुए दु ख भोगते है, तो अनेक लूले-लँगडे, बहरे-गूँगे अपग होकर कष्ट पा रहे है।

मानव की यह दशा है तो मानवेतर प्राणियो का तो कहना ही क्या! वे तो प्रकृति से ही पराधीन है। बहुत सो को मनुष्य पालने के बहाने परतन्त्र बना देते है, तो बहुत से कर्मवश पराधीन बने हुए है और इस रूप मे वे अनेक कष्ट सहन करते रहते है।

ऐसे दु खी प्राणी मुँह से अथवा मूक रूप से प्रार्थना करते है कि कोई दयालु करुणा करके हमे इन दु खो से बचावे, हमे जीवनदान देवे, हमारा इन दु ख-सकटो से उद्धार करे।

ऐसे दु खी, दयापात्र प्राणियो पर सहानुभूति किवा करुणा का स्रोत फूट पडना, उनके दु खो को दूर करने का प्रयास करना, उन्हे यथायोग्य प्रयत्नो से सुखी करने का प्रयास करना करुणा भावना है।

माध्यस्थ भावना—

विश्व मे तीसरी कोटि के प्राणी है—दुर्जन, जिनके प्रति माध्यस्थ भाव अथवा अपेक्षावृत्ति का चिन्तन होना चाहिए।

ससार मे बहुत से ऐसे प्राणी है, जो सद्‌गुणो की ओर दृष्टि ही नही करते है। सदा दुर्गुणो-दुर्व्यसनो मे लिप्त रहते है। मान मे तने रहते है एव माया के वक्र-हृदय बने रहते है। अनाथ प्राणियो की निर्दयतापूर्वक हिंसा करते है। मद्य-मास के भक्षण मे लिप्त रहते है। असत्य आचरण, चोरी एव परस्त्री लम्पट होते है। विषय-

वासना मे मग्न बने वेश्यावृत्ति मे लिप्त रहते हैं । जुआ आदि सभी दुर्व्यसनो का सेवन करते हैं । देवगुरु धर्म से विपरीत रहकर १८ ही पापो मे रचे-पचे रहते हैं । आत्मप्रशसा और परनिन्दा मे ही रस लेते है । हिंसादि दुष्प्रवृत्तियो मे ही धर्म मानते हैं । ऐसे पाप-रुचि पाप-प्रवृत्त जीवो को देखकर भी उन पर द्वेष नही करके यह विचार करना कि बेचारे कितने अज्ञान मे जी रहे है । इनके कर्मो की कैसी विडम्बना है । अनन्त पुण्योदय से प्राप्त मोक्ष तक पहुँचाने वाले मनुष्य जन्मादि उत्तम सयोगो को ये नासमझी के कारण यो ही खो रहे है, अपना जीवन कुमार्ग मे लगाकर उसका वैसे ही दुरुपयोग कर रहे हैं, जैसे कोई चिन्तामणि रत्न के वदले ककर खरीद रहा है ।

ऐसे नासमझ लोगो पर क्या द्वेष किया जाये । वे विचारे इन कुकर्मो का फल भोगेंगे उस समय उनकी क्या दशा होगी ? कर्म-फल-भोग के समय ये कैसा पश्चात्ताप करेंगे । इनमे सद्वुद्धि का प्रवेश हो और ये अपने इस अमूल्य जीवन को समझे ।

इस प्रकार स्वय सक्लेशित जीवो पर राग-द्वेष नही करके मध्यस्थ भाव या उदासीन भाव रखना मध्यस्थ भावना कहलाती है ।

इन चारो भावनाओ मे वहता हुआ समीक्षण ध्यान साधक साधना की उच्च भूमिका का निर्माण कर सकता है । यो द्रव्य-क्षेत्र-काल और भाव से ध्यान की पूर्व भूमिका का निर्माण होने के वाद ध्यान-साधना की गहराई मे सहज ही प्रवेश कर सकता है । समीक्षण ध्यान साधक को इस भूमिका के निर्माण का प्रथम अभ्यास अवश्य कर लेना चाहिये ।

समीक्षण ध्यान पूर्व भूमिका (२)

समीक्षण ध्यान साधना मे द्रव्य-क्षेत्र-काल भाव की शुद्धि के अनुसार ही एक और पूर्व भूमिका की आवश्यकता होती है, जो चित्त स्थैर्य मे सहयोग प्रदान करती है । वह भूमिका है आसन की स्थिरता एव श्वासोच्छ्वास का व्यवस्थित होना । जिन्हे आसन और प्राणायाम के रूप मे योग के अष्टागो मे महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है ।

आसन—

आसन का कुछ विवेचन द्रव्य विवेचन के अन्तर्गत किया जा चुका है। यहाँ इतना ही विशेष समझना है कि ध्यान-साधक के लिए आसन की स्थिरता एव दृढता की अत्यन्त उपयोगिता एव आवश्यकता होती है। पद्मासन पर्यंकासन या और किसी शुभ सुखासन का इतना अभ्यास कर लेना चाहिये कि उसमे सुदीर्घावधि तक दृढतापूर्वक स्थिर-चित्त बैठा जा सके।

आसन ऐसा सुगम-सरल होना चाहिए जिसमे किसी प्रकार का तनाव उत्पन्न न हो, मन चचल न हो किसी प्रकार का विक्षेप उत्पन्न न हो। ध्यान-मुद्रा अथवा ध्यान का आसन स्थिर करते समय एक बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि कोई भी आसन हो-खडे हुए या बैठे हुए, पीठ-रीढ की हड्डी (मेरुदण्ड) सीधी रहनी चाहिए। मस्तक एव गर्दन सीधे रहने चाहिये। यथा-शक्ति दृष्टि नासाग्र पर स्थिर रहनी चाहिये तथा मन को किसी एक तत्त्व पर केन्द्रित करने का प्रयास होना चाहिये।

आसन की दृढता अथवा ध्यान-साधना की भूमिका निर्माण मे यम–नियम का भी कम महत्त्वपूर्ण स्थान नही है। यम का अर्थ है—अहिसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य एव अपरिग्रह। नियम का अर्थ है—पवित्रता, सन्तोष, तप, त्याग, स्वाध्याय एव साधना के प्रति समर्पण। जब तक इन्द्रिय सयम एव चारित्रनिष्ठा के द्वारा उपर्युक्त गुणो को जीवन मे उतार नही लिया जाता है, तब तक न तो आसन की दृढता का अभ्यास हो सकता है और न ध्यान मे चित्त स्थिरता बन सकती है।

ब्रह्मचर्य की साधना या चारित्र का निष्ठापूर्वक परिपालन ध्यान-साधना का अनिवार्य अग है। चारित्र शिथिल हो, इन्द्रियाँ अनियन्त्रित हो तो मन बार-बार विषयो की ओर ही दौडेगा, वह साधना मे स्थिर नही रहेगा। अत मन को साधना मे स्थिर करने के लिए तथा दृढ आसन की स्थिरता के लिये यम-नियम के परिपालन को अति आवश्यक समझना चाहिये। किसी अपेक्षा से आसन की दृढता पर मन की दृढता अवलम्बित है और आसन की दृढता स्वस्थ शरीर की अपेक्षा रखती है। स्वस्थ शरीर के लिये प्राणायाम एक महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है।

प्राणायाम—

श्वास की प्रक्रिया को सुव्यवस्थित गति देने की विधि को प्राणायाम कहा जाता है।

प्राणायाम के सन्दर्भ मे योग सम्बन्धी ग्रन्थो मे सुविस्तृत जानकारी मिलती है। यहाँ हम इतना ही समझने का प्रयास करेंगे कि प्राणायाम एक ऐसी प्रक्रिया है जो श्वास प्रक्रिया को सन्तुलित बनाती है, शरीर मे ऑक्सीजन की मात्रा को बढाती है और प्राण कोष्ठो को अधिक शक्ति प्रदान करती है। ये सब उपलब्धियाँ ध्यान साधना मे अतीव उपयोगी होती है। यहाँ हम सक्षेप मे प्राणायाम की प्रक्रिया को समझने का प्रयास करेंगे।

प्राणायाम करने वाले की भूमिका का निर्देश करते हुए कहा है—प्राणायाम के साधक के लिये सर्व-प्रथम नीरव, शुद्ध स्थान होना चाहिये। इसके अतिरिक्त स्वच्छ आसन, चिन्ता रहित मन एव नीरोगी तन की आवश्यकता होती है। प्राणायाम की साधना खाली अथवा हल्के पेट के समय होनी चाहिये। भोजन करने के बाद अथवा लघुशका की हाजत होने के समय प्राणायाम नही करना चाहिये। समय, सुविधा, स्थान एव समुचित आसन की व्यवस्था के पश्चात् प्राणायाम प्रारम्भ करना चाहिये।

जैन ग्रथो के अनुसार प्राणायाम के प्रमुख दो भेद है—'बाह्य प्राणायाम' और 'आभ्यन्तर प्राणायाम'।

बाह्य प्राणायाम—

बाह्य प्राणायाम के प्रमुख तीन भेद है—कुम्भक, पूरक एव रेचक।

हमारे पृष्ठ रज्जु मे तीन प्रमुख नाडियां है, जिन्हे इडा-इगला, पिगला और सुषुम्ना के नाम से पुकारा जाता है। प्राणायाम की प्रक्रिया मे इन तीनो की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। इन्ही के आधार पर तीनो प्रकार के प्राणायाम बनते है।

सर्वप्रथम इडा या इगला नाडी अर्थात् दाहिनी नासिका के छिद्र से प्राणवायु को धीरे-धीरे उदर अथवा हृदय मे भरा जाता है। इस समय बायी नासिका को

दाय हाथ की तर्जनी अगुली से बन्द रखना होता है। हृदय अथवा उदर मे वायु भरने की इस प्रक्रिया को कुम्भक प्राणायाम कहते है। उस वायु को एक सीमित समय तक भीतर ही रोके रखने को पूरक प्राणायाम और उसके पश्चात् पिगला नाडी अर्थात् बायी नासिका के छिद्र से उस अवरुद्ध वायु को धीरे-धीरे बाहर निकालना रेचक प्राणायाम कहलाता है। यह प्रक्रिया परिवर्तन क्रम से अर्थात् दूसरी बार पिगला से श्वास लेना और इडा से छोडना, चलनी चाहिए। प्रतिदिन दिन मे तीन बार—प्रात, मध्याह्न एव सध्या को नियमित क्रम से यह साधना दोहराई जाती है। यह साधना व्यवस्थित बन जाए तो सुषुम्ना का जागरण होता है।

इस क्रिया के द्वारा फिर केवल कुम्भक प्राणायाम की सिद्धि प्राप्त की जाती है। इसमे अन्य क्रियाएँ तो प्राणायाम जैसी ही रहती है। केवल कुम्भक की अवधि बढा दी जाती है—अर्थात्, श्वास को कुछ अधिक समय तक भीतर रोका जाता है। इस प्रक्रिया को प्रतिदिन तीनो समय बीस-बीस बार और फिर तीस-तीस बार दो माह तक किये जाने पर कुम्भक की साधना मानी जाती है।

प्राणवायु का मुख्य प्रभाव शरीर पर पडता है। ऑक्सीजन-प्राणवायु का अधिक मात्रा मे प्राप्त होना और दूषित वायु-कार्बनडाय ऑक्साइड का बाहर निकलना स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त लाभप्रद होता है।

केवल कुम्भक प्राणायाम की साधना से, ऐसा माना जाता है कि पित्त और कफ से उत्पन्न छाती के रोग, श्वास रोग आदि की उपशान्ति होती है। शरीर हल्का हो जाता है। मन स्वस्थ होने लगता है, परिणामत मन मे उठने वाले सकल्प-विकल्प अपने आप शान्त होने लगते है। चित्त मे सहज स्थिरता की वृद्धि होने लगती है।

आभ्यंतर प्राणायाम

मिथ्या, असत् एव दुर्विचारो से आत्मा को बचाना-अर्थात् पर-भाव रमणता का रेचन करना एव आत्म-भाव मे स्थिर रहने का अभ्यास करना आभ्यन्तर प्राणायाम है। आत्मा को ज्ञान-दर्शन-चारित्र के भावो से

परिपूरित करना पूरक प्राणायाम है। औपशमिक, क्षायोपशमिक भावों को अन्तरंग में स्थिर करना आभ्यन्तर कुम्भक प्राणायाम है।

इस प्रकार उभयमुखी प्राणायाम की भावना भी समीक्षण ध्यान की भूमिका का निर्माण करती है। इस भूमिका शुद्धि अथवा भूमिका निर्माण के पश्चात् हमारा ध्यान के प्रयोगात्मक क्रिया पक्ष में प्रवेश सुगम हो जाता है। इसी दृष्टि से समीक्षण ध्यान के साधना पक्ष की विवेचना के पूर्व उसकी भूमिका शुद्धि का प्रतिपादन किया गया है। अब हम अगले लघु प्रबन्धों में ध्यान के प्रयोग पक्ष को इस रूप में प्रतिपादित करने का प्रयास करेंगे कि साधक लिखित शब्दावली का मननपूर्वक उच्चारण करता चला जाये या सामूहिक प्रयोग में एक व्यक्ति उच्चारण करे और अन्य सभी साधक शब्दोच्चारण के अनुसार प्रक्रिया अपने अन्तरंग में अनुभव करते जायें।

मेरा विश्वास है कि ये विधियां साधक आत्मा को राग-द्वेष की परिणतियों से ऊपर उठने के साथ ही मानसिक तनावों से भी मुक्ति दिलायेगी। हम इस साधना प्रक्रिया से गुजरने का प्रयास करें, उपलब्धि अपने आप हस्तगत होगी।



१

ध्यान मुद्रा

ध्यान मुद्रा बनाले . .... ।
ध्यान मुद्रा मे पद्मासन, पर्यंकासन या अन्य किसी सुखासन से बैठे . .।
आसन ऐसा हो, जिसमे लम्बे समय तक बैठने का अभ्यास हो ।
आसन मे किसी भी प्रकार का तनाव खिचाव न हो ।
ध्यान मुद्रा मे मेरु दण्ड (रीढ की हड्डी) सीधी रहे ।
गर्दन सीधी रहे . . ।
नेत्र बन्द कर ले . . ।
पूरे शरीर मे किसी भी प्रकार तनाव खिचाव न हो ।
ध्यान मुद्रा मे (यदि पर्यकासन या पद्मासन से वैठे हो तो) हथेलियो को ऊपर की ओर खुली रखकर दोनो घुटनो पर जमाले ....।
हथेली का निचला हिस्सा घुटनो पर टिका रहे ... ।
अगूठे के निकट वाली अगुली (तर्जनी) को अगूठे के साथ जोड दे . ।
शेप तीन अगुलियो को हल्के घुमाव के साथ ऊपर की ओर उठी रहने दे .... ।
शरीर पर से पूरा ध्यान हटा दे ।
अन्तरग से अनुभव करे कि अब हम ध्यान मे प्रवेश कर रहे है . . ।
अब हम वाहर की दुनिया से अलग हटकर अन्तरग मे प्रवेश कर रहे है ।
हमारी ध्यान मुद्रा सुस्थिर बन रही है . ।
हम ध्यान मुद्रा मे सुदृढ हो रहे है ..... . ।
हमारा आसन अडोल अकम्प वन गया है. . ... ।
अब वाहर के या शरीर सम्वन्धी कोई व्यवधान हमे विचलित नही कर सकते है . ।
अब हम अन्तर् यात्रा के लिये पूर्णतया सन्नद्ध हो गए हैं . . ....। 

गहरे श्वास–दीर्घश्वास

ध्यान मुद्रा बना ले ।
(पूर्व की पूरी प्रक्रिया का पुनरावर्तन करें)
पाँच या सात गहरे साँस ले ।
गहरे श्वास का अर्थ है, श्वास नाक से खींचे ।
बहुत वेग से खींचे ।
श्वास नाभि तक जाय ।
फिर धीरे से उसे छोड़े ।
श्वास लेते समय भाव करें ।
प्राणवायु—ऑक्सीजन अधिक मात्रा मे भीतर जा रही है ।
उसके साथ पवित्र विचार भीतर जा रहे है ।
श्वास बाहर निकालते समय कल्पना करे ।
कार्बनडाय ऑक्साइड—गन्दी हवा बाहर निकल रही है ।
उसके साथ दूषित विचार बाहर निकल रहे है ।
श्वास वेग से ले और पूर्वोक्त प्रक्रिया को दोहराते जाएँ श्वास को लय बद्ध बना ले श्वास धीरे से छोड़े और दूषित विचारों के बाहर निकलने के सकल्प को दोहराते चले जाएँ श्वास सम मात्रा मे ले ।
ऑक्सीजन—प्राणवायु जितनी अधिक मात्रा मे भीतर जा रही है ।
उतनी मात्रा मे शरीर हल्का हो रहा है ।
. स्वास्थ्य अच्छा हो रहा है . ।
मन भी हल्का हो रहा है ।
इस सकल्प को दोहराते जाएँ ।
श्वास वेग से ले ।
श्वास धीरे से छोड़े ।
भाव करे . ।
सारी गन्दी हवा बाहर निकल गई है . . ।
गन्दी गैस बाहर निकल गई है. ।
उसके साथ सभी दूषित विचार भी बाहर चले गए है . ।

मन की गन्दगी बाहर निकल गई . ... ..।
तन मन प्राण सभी कुछ हल्के हो गये ।
बहुत अधिक मात्रा मे प्राणवायु भीतर से प्रवेश कर गई है .।
अन्दर मे शुभ विचारो का अत्यधिक सग्रह हो गया है ।
शरीर-मन-प्राणो मे ऊर्जा भर गई है.... ..।
शरीर स्वस्थ है . ।
मन आनन्दित है . ।
प्राण प्रफुल्लित है ।
ऑक्सीजन-प्राण वायु की अधिक मात्रा जीवन-ऊर्जा को सवर्धित करती है ।
शरीर मे, मन मे स्वस्थता, प्रफुल्लता का सचार होता है ।
भाव करे . ।
यह प्रक्रिया प्राणो मे शक्ति का सचार करने वाली महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है . ।



३

शरीर का–शिथिलीकरण

ध्यान मुद्रा बना लें ।

(प्रथम दो प्रक्रियाओं को दोहरायें)

सीधे बैठें शरीर में कोई तनाव न हो ।

भाव करें शरीर हल्का हो रहा है ।

अन्तरंग से भाव करें ।

शरीर एकदम हल्का हो रहा है ।

पैर हल्के हो गए हैं ।

पिण्डलियाँ हल्की हो गई हैं ।

जंघाएँ हल्की हो रही हैं ।

पेट कमर हल्के हो गये हैं ।

सीना पीठ हल्के हो गये हैं ।

गर्दन सिर हल्के हो गए हैं ।

हाथ, पाँव, शरीर, पूरा भार-रहित हो गया है ।

शरीर में कोई भार, कोई वजन ही नहीं रहा है ।

शरीर कपास की तरह—रूई की तरह हल्का हो गया है ।

हल्की वस्तु ऊपर उठती है उसी तरह शरीर भी ऊपर उठ रहा है ।

वास्तव में अनुभव करें, शरीर अधर हो रहा है ।

शरीर को किसी आधार–आश्रय की आवश्यकता नहीं है ।

शरीर इतना हल्का हो गया कि वह अधर हो गया है ।

अनुभव—[illegible] को गहराई तक ले जाएँ, शरीर हल्का हो गया है ।

पूरे शरीर में हल्केपन की सनसनाहट फैल रही है ।

जैसे कि पाँव सो जाता है सुन्न हो जाता है ।

वैसे ही इस देह में पूरा शरीर हल्का होता जा रहा है ।

अनुभव करें . इतना हल्कापन कभी नहीं रहा . . ।

कभी कल्पना भी नही की थी कि शरीर इतना हल्का भी हो सकता है ....।

साठ, पैंसठ-सत्तर के जी वजन कहाँ चला गया ? शरीर गैस के फुग्गे-गुब्बारे के समान हो गया है ।

शरीर मे कही कोई तनाव, कोई खिचाव नही रह गया है . ।

यह हल्कापन बढता चला जाय .. ।

शरीर के साथ मन भी हल्का-निर्भार होता चला जाए . . .. ।

हल्के मन का यह अहसास—यह अनुभव बडा प्रीतिकर है ।

बडा आह्लादक है . ।

मन को—प्राणो को तृप्ति देने वाला है ।

आत्मा को आप्यायित करने वाला है . .।

यह हल्कापन सदा-सदा बना रहे ... ।

इस भावना के साथ ध्यान मे प्रवेश कर जाएँ. .।



प्राणायाम

ध्यान मुद्रा बना लें ।
शांत गहरे श्वास लें... ।
पूर्वोक्त तीनों प्रक्रियाओं को दोहराएं ।
पाँच मिनट का प्राणायाम का प्रयोग आरम्भ करें । ।
इसे धीरे-धीरे दस मिनट तक ले जायें ।
दाहिने हाथ के अंगूठे एवं उसके निकटवाली तर्जनी अंगुली को हल्के से नाक के अग्रभाग पर टिकाएं ।
नाक बन्द न हो ।
तर्जनी अंगुली से बायीं नासिका के छिद्र को बन्द कर दें ।
दायें छिद्र से श्वास भीतर खींचें ।
श्वास हल्के वेग से खींचें ।
उदर अथवा फेफड़ों को श्वास से भर जाने दें ।
. (यह पूरक प्रक्रिया है)
इसे ५-७-६ की गिनती करने तक के काल तक अन्दर रोके रखें (यह अन्तः कुम्भक है)
तब तक दोनों नासिका छिद्रों को तर्जनी अंगुली और अंगूठे से बन्द रखें ।
अब अंगूठे को दबा रहने दें और तर्जनी अंगुली को ढीला करके धीरे-धीरे बायीं नासिका से श्वास को बाहर निकाल दें ।
(यह रेचक प्राणायाम है)
फिर ५-७ या ६ की गणना हो इतने काल के लिये दोनों नासिका छिद्रों को बन्द कर दें और हवा को बाहर रोके रखें . ।
(यह बाह्य कुम्भक प्राणायाम है)
पुनः इस प्रक्रिया को दोहराएं .. . ।
तर्जनी अंगुली ढीली करके बायीं नासिका से पूरक करें ।
श्वास भीतर खींचें .. ।
फिर कुछ क्षण रोकें ।
फिर दायीं नासिका से छोड़ें . ।

फिर बाह्य कुम्भक करे....(बाह्य श्वास रोकें)
पुन दायी नासिका से भीतर ले . .... ।
इस प्रकार ७ बार इस प्रक्रिया का पुनरावर्तन करे .. . .।
अनुभव करे . ।
प्राणो मे शुद्ध वायु के प्रवाह से शक्ति बढ रही है . ।
फेफडे एव पेट एकदम हल्के हो रहे है . ।
अब श्वास को सामान्य गति से चलने दे ।
केवल श्वास के द्रष्टा बन जाएँ ...।
देखते रहे. श्वास आ रहा है . ।
श्वास जा रहा है ।
मन को श्वास की गति के साथ जोड दे .।
..मन घडी के पेण्डुलम की तरह श्वास के साथ बाहर-भीतर गति करता है ।
आप देखते रहे. श्वास आ रहा है ... ।
श्वास जा रहा है .... ।
मन उसके साथ चल रहा है .. ।
(इस पूरी प्रक्रिया मे रीढ की हड्डी एव गर्दन सीधी रखे, शरीर मे कही झुकाव—तनाव न हो। मन शान्त बना रहे और श्वास-क्रिया का द्रष्टा बना रहे।
प्रत्येक श्वास का समय बराबर हो, प्रथम श्वास लेने मे जितना समय लगा, दूसरे श्वास मे भी उतना ही समय लगे . ।
इसी प्रकार प्रश्वास-श्वास छोडने मे भी समान समय लगे .... ।
श्वास के द्रष्टा बने रहे ।



५

भस्त्रिका प्राणायाम

ध्यान मुद्रा बना लें ।
मेरु दण्ड सीधा रखें ।
गर्दन सीधी रखें ।
(पूर्व की प्रथम तीन प्रक्रियाओं को दोहरायें)
श्वास की गति को संकल्प पूर्वक वेग दें ।
वेग से श्वास लें छोड़ें ।
जितनी शक्ति लगा सकें . ।
उतना जल्दी-जल्दी श्वास लें छोड़ें ।
शीघ्रता पूर्वक जोर से श्वास लें ।
शीघ्रता के साथ छोड़ें ।
मुँह बन्द रखें ।
श्वास नाक से लें ।
पूरे वेग से श्वास लें ।
तीव्रता से श्वास लेने-छोड़ने में एक लय बांध लें ।
लुहार की धौंकनी की तरह ।
श्वास के वेग को और गति को बढ़ने दें ।
तीन मिनट और कुछ अभ्यास होने पर ५-७ मिनट तक इस भस्त्रिका प्रयोग को चलने दें ।
धीरे-धीरे श्वास को सामान्य स्वस्थ रूप में चलने दें ।
पेट को एक दम हल्का महसूस करें.

६

भ्रामरी प्राणायाम

ध्यान मुद्रा बना ले. . .... ।
आसन सुदृढ–सुस्थिर बना ले अथवा रखे ।
(प्रथम दो प्रक्रियाओ को यथा क्रम से दोहराएँ)
.. शरीर को हल्का बना ले . ..।
अनुभव करे शरीर हल्का हो रहा है ...।
शरीर मे कही कोई तनाव नही है . .. ।
दोनो हाथो के अगूठे दोनो कानो पर लगा दे ।
कानो को दबाकर बन्द कर दे .. ।
कनिष्ठा अगुलियो से दोनो आखो पर हल्का दबाव डाले . .।
आखे बन्द कर ले .. ।
मुँह होठ बन्द रखे .. ....।
गले से भ्रमर की तरह हुकार की ध्वनि निकाले ।
नाक से हवा के साथ ध्वनि तरगे निकलने दे ... . ।
ध्वनि की आवाज बढाते जाएँ , ...।
जितना अधिक समय तक श्वास रोक सके, श्वास रोके .. ।
भीतर कुम्भक करे ।
आवाज के साथ श्वास को बाहर निकलने दे . ।
.फिर कुम्भक करे और भ्रमर की तरह गु जारव करे . ।
गु जारव के साथ दृष्टि को भृकुटि मध्य प्रवेश केन्द्र पर टिकाएँ रखे ।
वातावरण मे शान्ति का अनुभव करे . ।
भाव करें ससार की समस्त ध्वनियाँ मेरी आवाज मे दब गई है . . ।
चारो ओर एकदम शान्त—सौम्य वातावरण बन रहा है. . . ।
मन आवाज मे डूब रहा है. ...।
गु जारव तीव्र हो रहा है . ।
आवाज लय बद्ध हो रही है .....।

प्रारम्भ में तीन मिनट का प्रयोग करें, फिर पाँच-सात मिनट तक ले जावें) ।
मन को गुंजारव के साथ जोड़ दें ।
स्वयं बद्ध गुंजारव चलने दें ।
आपकी आवाज में ही खो जावें ।
शान्त होकर बैठ जावें ।
मन को प्रकाश केन्द्र (आज्ञा चक्र) पर टिका दें ।
शरीर को हल्का छोड़ दें ।
आवाज बन्द होने के बाद भी अनुभव करें ।
वायु मण्डल में आवाज का ही वर्तुल बना हुआ है ।
गुंजारव सुनाई दे रहा है ।
सुनते जाएँ ।
सुनते जाएँ ।
अपनी समस्त चेतना को इसी आवाज में डूबने दें ।
मस्तिष्क एकदम हल्का हो रहा है ।
चारों ओर शान्ति-ही-शान्ति का प्रसार है ।
और हम उस शान्ति में डूब गए हैं ।
समस्त तनावों—द्वन्द्वों से मुक्त ।



७

मनोवृत्तियाँ : समीक्षण और निर्जरा

ध्यान मुद्रा बनाले
(प्रथम तीन प्रक्रियाओ को दोहराए)
भावना करे·
शरीर एकदम शिथिल हो गया···
शरीर निर्भार हल्का हो गया है
अब हमे मन को हल्का करना है
इस पर न जाने कितने जन्मो का भार लदा है···
मन पर न जाने कितना बोझ है
कितनी राग-द्वेष की परतें चढी है···
कषायो के कितने स्तर चढे है
जरा अपने अन्तरग मे देखें
कितनी गन्दगी है, अन्तर् मन मे
कितना अधकार है मन-मन्दिर मे
युगो-युगो का ही नही, जन्मो-जन्मो का मैल
भरा है· इस मन मे
किन्तु अब हमे मन के भार को उतार देना है
इसके मैल को साफ कर देना है ·
इसके अन्दर ज्योति प्रज्वलित कर देना है
समस्त अधकार को समाप्त कर देना है· ·
भावना करिये
मन की सारी गन्दगी बाहर निकलने को आतुर है
पूरे शरीर के स्नायुओ मे तीव्र कम्पन प्रारम्भ हो-
गया है, सारी गन्दगी इधर-उधर दौड रही है
जैसे किसी मकान मे आग लग गई हो और वहा ··
रहने वाले सभी व्यक्ति भागने लगते है
जिसको जहा रास्ता मिला, वह वही से
बाहर निकल जाता है
उसी प्रकार
हमारे भीतर ध्यान की आग लग गई है ··
समस्त गन्दगी सभी कषाये····
राग द्वेषात्मक परिणतिया
बाहर निकलने के लिए इधर-उधर भाग रही है

कोई नाक से, कोई कान से
कोई मुँह और कोई आँखों से बाहर भाग रही है
समस्त दूषित विचार बाहर चले जा रहे हैं
पूरी गन्दगी निकल गई
मन में हल्का-हल्का प्रकाश फैल रहा है
अंधकार छँटता चला जा रहा है
मन निर्भार हो रहा है
मन एकदम भार रहित हो गया है
मन प्रकाश से भर गया है। उस प्रकाश में
उसकी एक-एक वृत्ति हमें दिखाई दे रही है
शान्त रहें
गहराई से भाव करें
मन निर्मल हो गया। मन हल्का हो गया।
दूषित विचार उड़ गए। मन में चारों ओर
स्वच्छता ही स्वच्छता फैल गई है
चारों ओर प्रकाश ही प्रकाश छिटक रहा है
मन के सारे तनाव समाप्त हो गए
तन्मयता से अनुभव करें, मन तनाव रहित हो गया
मन आनन्द से आप्यायित हो रहा है
मन परम आनन्द में डूब रहा है
इसी भाव में डूब जाएँ
मन अपने चारों ओर आनन्द की वृष्टि का अनुभव
कर रहा है
मन आनन्द के सागर में डूब रहा है

□ □ □

क्रोध : समीक्षण और निर्जरा

ध्यान मुद्रा बनाले
(प्रथम तीन प्रक्रियाओ को दोहराए)
भाव करे
शरीर एकदम हल्का हो गया है
शरीर ऊपर उठने को तत्पर है
किन्तु मन अभी भार से लदा है ·
अब हम मन को हल्का कर रहे है
हमारे मन मे अनेक प्रकार के विकारो का भार लदा है
क्रोध अहकार छल, कपट लोभ··
लालच ईर्ष्या-असूया विषय-विकार
आदि अनेक दुर्वृत्तियो ने मन को बोझिल बना रक्खा है
ध्यान ही एक ऐसा सबल साधन है, जो इन सब विकृतियो से मन को और उसके माध्यम से आत्मा को मुक्ति दिला सकता है
ध्यान के अतिरिक्त और कोई मार्ग नही· ·
हम ध्यान के द्वारा इन सभी दोषो को क्रमश क्षीण करने का प्रयास करेगे
अब हम मन को हल्का करने की प्रक्रिया का प्रारम्भ कर रहे है·
मन पर छायी हुई इन दुर्वृत्तियो मे से एक-एक को चुनकर उसे बाहर निकालेगे, उसकी निर्जरा करेगे
अब हम अन्तरग यात्रा कर रहे है
अन्त समीक्षण कर रहे है
भीतर प्रवेश कर रहे है
देखें जरा अपने ही अन्तर्मन को देखे ·
वहा कितने विकार भरे पडे है
सकल्पना करे
बहुत गहराई से भाव करे
हम अपने मन की सघन शर्तो को देख रहे है
हमारे आगे से सभी पर्दे हट गए है
हम मन के आर-पार देख रहे है
किन्तु वहाँ दिखाई क्या दे रहा है···

क्रोध क्रोध क्रोध
सारा आर क्रोध के ही परमाणु मन में भरे हुए हैं
कितना विद्रूप हो रहा है हमारा मन !!!
हा हा ! क्या इस दूषित विद्रूप मन में परमात्मा
का भजन मिल सकता है ???
नहीं नहीं आज हम इस मन की
सफाई करेंगे
भाव मन
अब हम क्रोध के परमाणुओं को बाहर निकालने
को सन्नद्ध हो गए हैं
अभी हम प्रथम समीक्षण कर रहे हैं
पहले मन के सम्पूर्ण क्षेत्र को देखें
जहाँ-जहाँ आत्म-प्रदेश हैं वहाँ सर्वत्र मन भी है
जहाँ-जहाँ मन है वहाँ वहाँ क्रोध के परमाणु
फैले हैं

या यों कहें
आत्मा के प्रत्येक प्रदेश पर मोहनीय कर्म के
परमाणु छाये हुए हैं
क्रोध भी तो मोहनीय कर्म का भेद है
यह मोहनीय कर्म की अवान्तर प्रवृत्तियों में से
एक प्रवृत्ति है
और इस रूप में क्रोध सम्पूर्ण शरीर में
आत्मप्रदेशों के साथ फैला हुआ है
अब जरा हम पूरे शरीर में फैले आत्मप्रदेशों पर
दृष्टि डालें

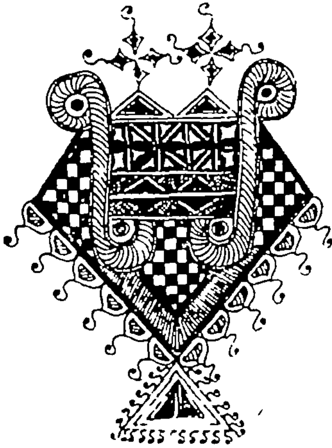
अब हम द्रष्टा ही नही, परिष्कर्ता भी बन रहे है
अब हम क्रोध के परमाणुओ को बाहर निकालने
की प्रक्रिया प्रारम्भ कर रहे है
भावना करे…
तीव्रतम भावना करे
हमारी ध्यान शक्ति के द्वारा
हमारी सकल्प शक्ति के द्वारा ·
वे क्रोध के परमाणु सभी आत्मप्रदेशो से
हटने लगे है
उनमे हल-चल मच गई है ·
वे तीव्र गति से पूरे शरीर मे इधर-उधर दौड रहे हैं··
कल्पना करे, पूरे शरीर मे एक सनसनाहट
फैल रही है ··
भाव करे·
शरीर की नस-नस मे कम्पन हो रहा है ·
क्रोध के परमाणु बडी तेज गति से ऊपर की
ओर उठ रहे है
देखिये, वे तेज गति से ऊपर की ओर ·
मस्तिष्क की ओर भाग रहे है· ··
वे प्रत्येक आत्म–प्रदेश से अलग छिटक रहे है····
उनकी सारी चिपकाहट ढीली हो गई है·
वे सब मस्तिष्क के अगले भाग-कपाल के पास
पहुँच रहे है ·
आगमिक दृष्टि से क्रोध का वास कपाल मे
माना गया है
क्योकि जब हमे क्रोध आता है तो उसको सीधी
प्रक्रिया कपाल पर पडती है
ललाट पर सलवटे पड जाती है
आँखे लाल-लाल हो जाती है
चेहरा तमतमाने लगता है और हम मुँह
से कुछ भी ऊल-जलूल बोलने लग जाते है
हाँ तो अब देखे
ये क्रोध के सारे परमाणु ललाट के पास
कपाल मे इकट्ठे हो रहे है····
वे काली झाई लिए हुए लाल-लाल परमाणु है
और देखे वे सब कपाल के पास इकट्ठे
हो गए है
अब वे वहाँ से बाहर निकलने को मार्ग ढूँढ रहे हैं
कल्पना करे

प्याज़ के बहुत से परमाणु आँखों में उतर आए हैं
जैसे [illegible] बाहर की दुनिया में नहीं
अन्दर की दुनिया में जैसे
और लाल-लाल हो गई हैं
प्याज़ के परमाणु आँखों में उतर आए हैं
किन्तु अभी हम प्याज़ में नहीं हैं
हमें स्वाद नहीं आ रहा है
अभी हम प्याज़ [illegible] की [illegible] कर रहे हैं
प्याज़ के परमाणु आँखों से नीचे उतर रहे हैं
और [illegible] कर अपना मुँह अपने आप
[illegible] गया है
[illegible]
जैसे अपने मुँह में पानी भरे लिए हुए
लाल-लाल घूम फिर रहा है
बाहर से [illegible] कर, [illegible] के घोंट-के-घोंट
अपने मुँह से बाहर निकाल रहे हैं
अभिप्राय यह आप इसके होते जा रहे हैं
सब [illegible] होता जा रहा है
अपने सामने प्याज़ के परमाणुओं का ढेर
लगता है
अब [illegible] परमाणुओं से जैसे
जैसे अपने सामने लाल-लाल राई का ढेर लगाओ
प्याज़ के परमाणु अन्दर में थे तो प्याज़ के छिलके
की तरह परत दर परत जमे हुए थे
किन्तु बाहर निकलकर बिखर गये हैं
जैसे [illegible] की हुई गाँठ की खोल दी गई
हो और सब अलग-अलग हो गई हो
इसी प्रकार प्याज़ के परमाणु अन्दर जमे हुए थे

अत: अब हमे उन्हे बाहर से भी हटा देना है·
अनुभव करे भाव करे
अपनी दोनो आँखो से दो तेज किरणे निकल रही है····
वे किरणे क्रोध के परमाणुओ मे लग गई है
और देखे
क्रोध के परमाणुओ मे आग लग गई है
अपने सामने अपने ही क्रोध के परमाणु
जल रहे है
ज्वालाएँ ऊपर उठ रही है
लाल-लाल अगारे धधक रहे है·
ज्वालाएँ बढती जा रही है··
हम अपने अन्तर की आँखो से अपने सामने
उठती हुई ज्वालाओ को देख रहे है
ज्वालाएँ धीरे-धीरे शान्त हो रही है ··
अगारे एकदम बुझ गये हैं····
ज्वालाएँ धीरे-धीरे शान्त हो गई है
अब हमारे सामने केवल राख का ढेर रह गया है· ··
राख सफेद झक राख
देखे राख ही राख का ढेर ·
लेकिन इसे भी सामने से हटा देना है·
ऐसा कोई दूषित परमाणु—क्रोध का कीटाणु
नही रह जाए कि फिर निमित्त मिलने पर
आत्मा दूषित हो जाय··
अब देखे ··
भीतर से ध्यान की ऊर्जा से तेज हवा
बाहर आ रही है
कल्पना करे वास्तव मे अनुभव करे
तेज आधी चल पडी है और वह राख उडती हुई
दूर-सुदूर चली गई है ·
अब हमारे सामने एकदम स्वच्छ वायुमण्डल
हो गया है ·
अब हमारा अन्तरग भी कुछ साफ हो गया है
हमारा बहिरग भी स्वच्छ हो गया है
अब भावना करे
हमारे आत्म-प्रदेश निष्क्रोध हो गये हैं
अब हमे कोई क्रोध दिलावे हमे क्रोध नही
आएगा
क्योकि अब हमारे भीतर क्रोध के परमाणु
रहे ही नही है

अब कोई हमारी निन्दा-बुराई करे
कोई गाली दे, मार पिटाई, कोई अपमान करे
कोई कैसा भी निमित्त उपस्थित करे क्रोध का
किन्तु अब हमें क्रोध कैसे आ सकता है ?
उपशमन कर वीतराग भाव का
हमारी चेतना क्षमा की मूर्ति बन गई है
अब आत्मा में कोई आवेग-उद्वेग नहीं रहा है
नहीं कोई कुभावना रही है
क्योंकि क्रोध पाप के सभी परमाणु बाहर
निकल गए हैं
एक पवित्र बना शुभ भाव आत्मा में आगत
हो गया है
उन परमाणुओं में रहा भारी भार वाला
भार रूप बाहर निकल गया है
अब ऐसे सुन्दर सुन्दर नयनाभिराम प्यारी नजर
ही दिखाई दे रहा है
वह उत्तम शान्त, शान्त मन को लुभाने वाला
हमारा अन्दर है
क्रोध पाप के सभी दूषित परमाणुओं के बाहर
निकल जाने से मन का बहुत भार हल्का हो
गया है जो मन सदैव के भार से दबा
रहता था
आज वह आनन्द से भर रहा है
अनुभव करें अपने आप में आनन्द-शान्ति
की लहर उठाते अन्तर में है
हमारी आत्मा आनन्द के रस से भींग रही है
इस प्रकार क्षमा के द्वारा आनन्द में मस्त हो
रहा है

हमारे चारो ओर शाति " शाति शाति·
व्याप्त हो गई है
हमारा यह आनन्द बढता चला जाय
हमारा यह हल्कापन बढता ही रहे
हमारी आत्म-शाति बढती चली जाय
इसी कल्पना इसी सकल्प
इसी भावोन्मेष मे ध्यान से बाहर आ जाए
धीरे धीरे · प्रकृतिस्थ हो जाए
शरीर-मन-प्राणो को एकदम हल्का अनुभव करे



भाव करे·
हमारे अन्त चक्षु खुल गए है ·
हमे अपने अन्दर की सभी वृत्तियाँ दिखाई दे रही है··
ओ, हो, हमारी ध्यान साधना ने कितना कमाल कर दिया है ··
अरे, वहाँ क्रोध के परमाणु तो शून्यवत् रह गए है···
किन्तु अभी हमे बहुत प्रयास करना है ·
अब हम अहकार के स्कन्धो (परमाणुओ) की निर्जरा करेगे
देखे—अपने सभी आत्म-प्रदेशो की ऊपरी परत को देखे·
ओ, हो, वहाँ तो अहकार अहकार अहकार ही अहकार दिखायी दे रहा हैं
अहकार ने हमारे भीतर विभिन्न रूप धारण कर रखे है। वह अनेक रूपो मे आसन जमाए बैठा है
हमे अपने सौन्दर्य का अहकार होना है, जिसे आगमिक भाषा मे रूपमद कहा जाता है
इस सौन्दर्य के अहकार ने भी कितने उत्पात मचाए हैं
कितने युद्ध करवाए है
पद्मावती और कमलावती जैसी कितनी नारियो को जौहर की ज्वालाओ मे भस्म करवा दिया है
ओ, हो, यह सौन्दर्य का अहकार बडा विकराल है····
हमे ऐश्वर्य का भी तो अहकार– अभिमान होता है
मेरे पास कितना वैभव है
मैं कितना ऋद्धि-सम्पन्न हूँ
मेरी सम्पदा का मुकाबला कौन कर सकता है ·
और इस ऐश्वर्य के अहकार ने भी इस चैतन्य को कितने नाच नचाए हैं
कितना सितृष्ण बनाया है
हमे अपने पद-प्रतिष्ठा का अहकार है···
मैं कितनी बडी कुर्सी-सत्ता का स्वामी हूँ
मेरे पास कितने अधिकार हैं
और इस अधिकार-सत्ता के या पद-प्रतिष्ठा के मद ने तो कितने युद्ध करवाये उनकी गणना करना ही मुश्किल है
आजकल चुनावो के युद्ध भी तो कम नही हो रहे है
ये सब पद-प्रतिष्ठा के ही तो सघर्ष हैं··
हमे अपने उच्च जाति–कुल का अहकार भी तो सताता है

अहकार के ये सारे परमाणु भी क्रोध के परमाणुओ के समान पूरे शरीर मे सभी आत्म-प्रदेशो पर फैले हुए है
वे मान मोहनीय के रूप मे जमे हुए है·
जमे हुए ही नही, वे प्रतिक्षण किसी-न-किसी रूप मे नये भी प्रवेश कर रहे है
हमे अहकार के प्रवेश को रोकना है और पुराने जमे हुए स्कन्धो-परमाणुओ को निकाल देना है
सकल्पना करे और पूरी सकल्प शक्ति लगादे कि अब अहकार के परमाणुओ मे हलन-चलन मच गई है···
पूरा शरीर प्रकम्पित हो रहा है
वास्तव मे अनुभव करे कि आत्म-प्रदेशो मे एक प्रकम्पन उत्पन्न हो गया है
सारा शरीर स्पन्दित हो रहा है
मान मोहनीय कर्म के स्कन्ध इधर-उधर दौडने लग गए है
देखे अपने ही अन्दर देखे अहकार के परमाणु कितनी तेज गति से दौड रहे है·
जैसे किसी मकान मे आग लग गई हो और अन्दर रहने वाले लोग इधर-उधर जिधर मार्ग मिलता है भागने लगते है ·
उसी प्रकार हमारे भीतर ध्यान की ज्योति जल गई है और अहकार के परमाणु अब भागने को मार्ग खोज रहे है
भाव करे
अहकार के सभी परमाणु गले-गरदन के आस-पास एकत्रित हो रहे है ··
क्योकि अहकार का सम्बन्ध हमारी गर्दन से विशेष है।
अहकार के समय हमारी गर्दन अकड जाती है ··
चिन्तन करे अहकार के परमाणु गरदन के निकट एकत्रित हो गए है
कल्पना करे भाव करे
गले के आस-पास का हिस्सा अकड गया है
गले मे कुछ भारीपन-सा महसूस हो रहा है
सारा अहकार वहाँ केन्द्रित होकर घनीभूत हो गया है
अब वे सभी परमाणु वहाँ से बाहर निकलने को उतावले हो रहे है
वे ऊपर उठने लगे हैं
अनुभव करे, वे गले मे ऊपर उठ रहे है

अन्दर वे परमाणु पर्त हर पर्त जमे हुए थे, बाहर आकर फूल गए है, फैल गए है

कही वे परमाणु पुन अन्दर प्रवेश कर आत्मा को फिर से अहकारी न बना दे, अत हमे उन्हे बाहर भी नही रहने देना है

अब कल्पना करे अनुभव करे

उन परमाणुओ के पीछे-पीछे नाक से ही ध्यान ऊर्जा से उत्पन्न दो तेज किरणे बाहर निकलती है

और वे अहकार के स्कन्धो पर पड रही है

देखे अन्तर दृष्टि से देखे

उन अहकार के स्कन्धो मे आग लग गई है

ज्वालाएँ ऊपर उठ रही है

अपने सामने ज्वालाएँ ऊपर उठती हुई देखे

अहकार के सारे गन्दे तत्त्व उस आग मे जल रहे है

हम अपने ही अहकार को अपने सामने जलते हुए देख रहे है

अनुभव करे

ज्वालाएँ एकदम ऊपर उठकर अब शात होती जा रही है

आग शात हो गई है ·

अब देखे अपने चारो ओर राख फैली हुई है

देखे शान्त-सौम्यभाव से राख ही राख है

उस राख को भी हमे वहाँ रहने नही देना है। अहकार को उत्तेजित करने वाला एक भी परमाणु हमारे इर्द-गिर्द नही रहना चाहिए

अन्तरग से अनुभव करे

भीतर से-ध्यान ऊर्जा से उत्पन्न हवा का एक वेगशाली झोका उठ रहा है

वह हवा मण्डलाकार मे फैलती हुई, सारी राख को लेकर उडती चली जा रही है

कल्पना करे देखे साक्षात् देखे

मण्डलिया वायु का मण्डल राख लिये उडा जा रहा है

अब हमारे चारो ओर शुद्ध, स्वच्छ वायु मण्डल हो गया है

हमारा बहिरग और अन्तरग दोनो स्वच्छ–निर्मल निरभिमानी एव हल्के हो गए है

भाव करे सभी आत्म-प्रदेश अहकार की कालिख से रहित हो गए है

हमारा यह आनन्द बढता चला जाय
हमारा हल्कापन बढता चला जाय
हमारी विनम्रता बढती चली जाय
हमारी आत्म-शान्ति बढती चली जाय
इसी भावना इसी सकल्प इस भावोन्मेष के साथ
ध्यान से बाहर आ जाएँ
धीरे-धीरे प्रकृतिस्थ हो जाएँ
अपने तन-मन-प्राणो को एकदम हल्का अनुभव करे



दूसरो के प्रति हमारे विचार क्षुद्र बन जाते है
हम स्वय को ही सर्व श्रेष्ठ मान बैठते है ··
श्रौर यह क्षुद्र भाव हमारे विकास को सर्वथा रोक देता है
श्राज हम इस क्षुद्रता से विपरीत भाव करे
देखे अपने श्रापकी, क्षुद्रता को एव दूसरो की महानता को देखे
जरा श्रन्तर मे झाँक कर देखे
हम कितनी क्षुद्र भावनाश्रो से भरे है
हम दुनिया से श्रपने को श्रेष्ठ मानते है किन्तु हम किस दृष्टि से श्रेष्ठ है
जरा श्रपनी सहजता मे श्रपनी योग्यता को देखे
क्या हम दुनिया के सर्व श्रेष्ठ विद्वान् है ?
क्या हम सर्वश्रेष्ठ बुद्धिमान हैं ?
क्या हम सर्वाधिक सुन्दर है ?
क्या हम सबसे ज्यादा घनवान् है ?
क्या हम सबसे उच्चकोटि के वक्ता–व्याख्याता है
किन्ही भी अर्थों मे हम दुनिया मे सर्वाधिक महान् नही है
फिर यह बडप्पन का भाव क्यो'
श्राज हम श्रपने भीतर रहे इस क्षुद्र भाव का विरेचन करेगे
श्रभी हम तुलना करे· हमसे कितने उच्चकोटि के विद्वान्, व्याख्याता, प्रवक्ता, साधक एव महान् व्यक्ति दुनिया मे भरे पडे है··
विशाल ससार मे हमारा नम्बर ही कहाँ श्राता है
हम श्रपने श्रापमे एक सामान्य साधक हैं
हमे बडप्पन के भावो मे उलझ कर अपने विकास को श्रवरुद्ध नही कर देना है
हमे बडप्पन की उच्च भूमिका तक पहुँचना है
श्रब हम श्रब तक की समस्त क्षुद्र भावनाश्रो को बाहर निकाल रहे है
श्रब हम श्रपने से भिन्न व्यक्तियो को, जो वास्तव मे श्रपने से श्रेष्ठ हैं, श्रेष्ठ मानेगे श्रौर श्रपने श्रापको सामान्य
देखे श्रपने श्रन्तरग मे गहरा भाव करे
श्रपने भीतर के बडप्पन सम्बन्धी क्षुद्र भावनाश्रो के परमाणु बाहर निकलते जा रहे है

छल-छद्म: समीक्षण और निर्जरा

ध्यान मुद्रा बनाले .
(प्रथम तीन प्रक्रिओ को अच्छी तरह दोहराए) .
भाव करे ..
शरीर एक दम हल्का हो गया है ..
शरीर का हल्कापन अति सीमा तक पहुँच गया है
शरीर ऊपर उठने को आतुर है
किन्तु मन मे अभी भी बहुत भार भरा पडा है
मन का भारीपन अनेक कारणो से हे
मन अगणित प्रकार के भावो से लदा है .
अब हमे मन के समस्त भार को उतार फैकना है
मन को एकदम हलका बना लेना है
हमे यह ज्ञात हो चुका है कि हमारे मन पर कौन-कौन सा भार पडा है.
यह भाव मन अनादि काल से अनेक प्रकार के भार .. ढोता चला आ रहा है ..
अरे, यह मन तो माध्यम है ..भार ढोने वाली तो आत्मा है .
इस आत्मा पर क्रोध, अहकार, छल-छद्म, लोभ-लालच विषय-वासना आदि के अनेक प्रकार के परमाणुओ ने प्रभाव जमा रखा है .
इनमे से अभी हमने क्रोध एव अहकार के भार को हल्का करने का प्रयास किया है
अब हम छल-कपट, अर्थात् माया जाल सम्वन्धी आवरणो को हटाने का प्रयास करेगे ..
अव जरा हम आत्म-समीक्षण करे
वास्तव मे अनुभव करे कि अव हम अन्तर्यात्रा प्रारम्भ कर रहे है ..
इस समय हमारी दृष्टि बाहर की दुनिया से दूर .
वहुत दूर अपने ही भीतर की ओर दौड रही है
हमारा मन अपनी ही अच्छी वुरी वृत्तियो का अवलोकन कर रहा है
हम अपनी वृत्तियो का भाव-पूर्ण समीक्षण कर रहे है .
जरा अनुभव करे ..
हमे अभी अपने अन्तरग मे क्या दिखाई दे रहा है .....

ओ, हो, वहा तो अभी कालिमा ही कालिमा दिखाई दे रही है .. .

क्रोध, अहकार की कालिमा तो कुछ कम हो गई है ... फिर भी अभी छल-छद्म, झूठ फरेव, लोभ-लालच, विषय-वासना आदि के अगणित काले दाग या काले परमाणु आत्मा पर प्रभाव जमाए हुए हैं

हमे अपने अन्तरग मे कालिमा ही कालिमा दिखाई दे रही है

अभी हमारा ध्यान छल-कपट-माया के परमाणुओ पर ही टिक रहा है

देखे यह माया का जाल हम पर कितने रूपो मे हावी हो रहा है

जिधर देखे उधर छल, छद्म, कपट, माया ही माया ने मन को-आत्मा की सरल वृत्ति को घेर रक्खा है

न जाने कितने जन्मो से, नही, नही अनन्त काल से माया ने आत्मा के सहज-सरल मूलभूत गुण को आवृत कर रक्खा है

अरे, यह ठगिनी माया हमारे द्वारा दूसरो को और दूसरो के द्वारा हमे या स्वय-स्वय को ही कैसे जाल मे फसाती है

कैसे नाच नचाती है

इसने हमे कितनी कुटिल चाले सिखायी है

और हम इसके जाल मे फँसकर स्वय को ही प्रताडित करते रहे है . स्वय को ही ठगते रहे हैं .

देखें, जरा अपनी इस दूषित वृत्ति का अवलोकन, समीक्षण करे

अपनी अन्तरग दृष्टि पर के सभी ऊपरी पर्दों को हटादें . अपनी चित्त वृत्तियो के आर पार देखे . .

भाव करें

अब हमे अपनी अन्तरग समीक्षण ध्यान की दृष्टि से आत्मा के आर-पार सब कुछ दिखायी दे रहा है

माया के विविध रूप हमे दिखाई दे रहे हैं .... .

अपनी तुच्छ, स्वार्थी भावनाओ मे हम अच्छे-अच्छे बुद्धि-जीवियो को, सरल चेता धर्मात्माओ को एव भावुक लोगो को कैसे जाल मे फँसा लेते है .

इसी छद्म वृत्ति के कारण हम कितने रूप, मुखौटे धारण करते रहते है

कैसे-कैसे स्वाग लेकर लोगो के सामने उपस्थित हो जाते है

४११८७

११

छल-छद्म: समीक्षण और निर्जरा

ध्यान मुद्रा बनाले .
(प्रथम तीन प्रक्रिओ को अच्छी तरह दोहराए). . .
भाव करे ...
शरीर एक दम हल्का हो गया है .
शरीर का हल्कापन अति सीमा तक पहुँच गया है
शरीर ऊपर उठने को आतुर है
किन्तु मन मे अभी भी बहुत भार भरा पडा है . .
मन का भारीपन अनेक कारणो से हे
मन अगणित प्रकार के भावो से लदा है . .
अब हमे मन के समस्त भार को उतार फेंकना है
मन को एकदम हलका बना लेना है
हमे यह ज्ञात हो चुका है कि हमारे मन पर कौन-कौन सा भार पडा है .
यह भाव मन अनादि काल से अनेक प्रकार के भार . ढोता चला आ रहा है . .
अरे, यह मन तो माध्यम है . भार ढोने वाली तो आत्मा है ..
इस आत्मा पर क्रोध, अहकार, छल-छद्म, लोभ-लालच विषय-वासना आदि के अनेक प्रकार के परमाणुओ ने प्रभाव जमा रखा है
इनमे से अभी हमने क्रोध एव अहकार के भार को हल्का करने का प्रयास किया है
अब हम छल-कपट, अर्थात् माया जाल सम्वन्धी आवरणो को हटाने का प्रयास करेगे .
अव जरा हम आत्म-समीक्षण करे
वास्तव मे अनुभव करे कि अब हम अन्तर्यात्रा प्रारम्भ कर रहे है .
इस समय हमारी दृष्टि बाहर की दुनिया से दूर .
वहुत दूर अपने ही भीतर की ओर दौड रही है .
हमारा मन अपनी ही अच्छी बुरी वृत्तियो का अवलोकन कर रहा है .
हम अपनी वृत्तियो का भाव-पूर्ण समीक्षण कर रहे है.
जरा अनुभव करे . .
हमे अभी अपने अन्तरग मे क्या दिखाई दे रहा है .....

ओ, हो, वहा तो अभी कालिमा ही कालिमा दिखाई दे रही है ...

क्रोध, अहकार की कालिमा तो कुछ कम हो गई है ..

फिर भी अभी छल-छद्म, झूठ फरेब, लोभ-लालच, विषय-वासना आदि के अगणित काले दाग या काले परमाणु आत्मा पर प्रभाव जमाए हुए हैं

हमे अपने अन्तरग मे कालिमा ही कालिमा दिखाई दे रही है

अभी हमारा ध्यान छल-कपट-माया के परमाणुओ पर ही टिक रहा है

देखे यह माया का जाल हम पर कितने रूपो मे हावी हो रहा है

जिधर देखे उधर छल, छद्म, कपट, माया ही माया ने मन को-आत्मा की सरल वृत्ति को घेर रक्खा है

न जाने कितने जन्मो से, नही, नही अनन्त काल से माया ने आत्मा के सहज-सरल मूलभूत गुण को आवृत कर रक्खा है

अरे, यह ठगिनी माया हमारे द्वारा दूसरो को और दूसरो के द्वारा हमे या स्वय-स्वय को ही कैसे जाल मे फसाती है

कैसे नाच नचाती है . .

इसने हमे कितनो कुटिल चालें सिखायी है

और हम इसके जाल मे फँसकर स्वय को ही प्रताडित करते रहे हैं . स्वय को ही ठगते रहे हैं .

देखे, जरा अपनी इस दूषित वृत्ति का अवलोकन, समीक्षण करे

अपनी अन्तरग दृष्टि पर के सभी ऊपरी पर्दों को हटादें .

अपनी चित्त वृत्तियो के आर पार देखें .

भाव करें

अब हमे अपनी अन्तरग समीक्षण ध्यान की दृष्टि से आत्मा के आर-पार सब कुछ दिखायी दे रहा है .

माया के विविध रूप हमे दिखाई दे रहे हैं .... .

अपनी तुच्छ, स्वार्थी भावनाओ मे हम अच्छे-अच्छे बुद्धिजीवियो को, सरल चेता धर्मात्माओ को एव भावुक लोगो को कैसे जाल मे फँसा लेते है .

इसी छद्म वृत्ति के कारण हम कितने रूप, मुखौटे धारण करते रहते हैं .

कैसे-कैसे स्वाग लेकर लोगो के सामने उपस्थित हो जाते है .

अपने आपको कितने रूपो मे प्रस्तुत करते रहते हैं
जो हमारे भीतर है, उसे हम माया की वृत्ति से छिपा लेते है .. . .
जो हमारे भीतर नही है, उसका प्रदर्शन करते रहते है
अरे यह माया ही तो है, जो हमारी चेतना के-आत्म-साधना के मूल गुण सरलता को ढक देती है

यह इस शरीर मे सर्वत्र अपना जाल फैलाए हुए है ....
प्रत्येक आत्म-प्रदेश पर क्रोध मोहनीय और मान मोहनीय के समान यह माया मोहनीय कर्म भी फैला हुआ है...
चू कि आत्म-प्रदेश पूरे शरीर के सचेतन भाग मे फैले हुए है
अत यह माया की वृत्ति भी सम्पूर्ण शरीर मे व्याप्त हो रही है ....
हम अभी इस छल छद्म की वृत्ति का समीक्षण कर रहे है .
अभी हमारा ध्यान अन्य वृत्तियो पर नही, केवल 'माया' वृत्ति पर है. .... .
हम अभी समस्त आत्म-प्रदेशो का साक्षात्कार कर रहे है .
वहा फैले हुए माया मोहनीय के परमाणुओ को हम स्पष्ट देख रहे है..
ओ हो ! कितने जन्मो मे की गई माया के स्तर वहा जमे हुये है ..

दो चार दिन या कुछ वर्षों की ही नही, अनेक जन्मो की मायावृत्ति ने आत्म-प्रदेशो पर आसन जमा रक्खा है

देखे . .जरा गहराई से देखे. .. .
चारो ओर माया मोहनीय के परमाणु ही दिखाई दे रहे हैं .
अभी हम छल-छद्म मे प्रवृत्त नही है. .

अभी हम अपने अन्तर मे बैठे इस दूषण के द्रष्टा बने हुए है
हम देख रहे है अपने भीतर देख रहे है .. .
अभी हम द्रष्टा भर बन गए है. .

अब हम द्रष्टा ही नही आत्मा के—मनोवृत्तियो के परिष्कर्ता बन रहे है . .

हम सकल्प करे कि इस माया के जाल को छिन्न-भिन्न कर देगे .

हम अब माया की वृत्ति को तहस-नहस करने के लिए सन्नद्ध हो गए हैं ..

अब हम माया मोहनीय कर्म स्कन्धो को बाहर निकालने की प्रक्रिया का प्रारम्भ कर रहे है

भाव करे .

हमारी ध्यान की शक्ति से

हमारे तीव्रतम सकल्पो के द्वारा

समस्त आत्म-प्रदेशो मे तीव्र प्रकम्पन हो रहा है

देखे वास्तव मे फीलिग करे

सम्पूर्ण शरीर मे सभी आत्म-प्रदेश तीव्रगति से काँप रहे हैं

हमे अपने शरीर मे कम्पन अनुभव हो रहा है

अब माया मोहनीय कर्म परमाणुओ मे हलन-चलन मच गई है

वे बडी तेजी से इधर-उधर दौड रहे हैं

माया के परमाणु, जो कितने ही जन्मो से आत्मा पर चिपके हैं

वे आत्म-प्रदेशो से अलग छिटक रहे हैं

अनुभव करें, सम्पूर्ण शरीर मे एक सनसनाहट फैल रही है

जैसे बुखार के पूर्व मलेरिया के पूर्व कँपकँपी लगकर ठडी लगती है

उसी प्रकार शरीर के आन्तरिक भाग मे कँपकँपी हो रही है

भाव करे

माया के परमाणु सारे शरीर मे इधर-उधर दौड रहे हैं

उनमे तीव्रतम गति उत्पन्न हो गई है ..

पैरो की ओर के समस्त परमाणु ऊपर की ओर उठ रहे हैं

ऊपर-सिर की ओर के समस्त परमाणु नीचे कमर की ओर बढ रहे हैं

देखें, वे सारे माया के स्कन्ध कमर के निकट अन्दर की ओर ही इकट्ठे हो रहे हैं

अनुभव करे

माया के सभी स्कन्ध कमर के पास इकट्ठे हो गए हैं .

भाव करे

कमर का हिस्सा कुछ भारी हो गया है. ..

बाकी पूरा शरीर हलका हो रहा है

अनुभव करें .

कमर मे जैसे वायु भर गई है वादी आ गई है . ....
कमर के आस-पास बडा भारीपन लग रहा है . . .
अब वे माया के परमाणु बाहर निकलने को मार्ग ढूढ रहे है
वे अब शीघ्र बाहर निकल जाना चाहते है . ....
सकल्प करे तीव्रतम सकल्प करे . ....
अब वे माया के परमाणु कमर से कुछ नीचे खिसक रहे है
देखे अन्तर चक्षुओ से देखते रहे .
वे परमाणु रीढ की हड्डी के मध्य सुपुम्ना नाडी मे प्रवेश कर रहे है
अब वे उस मेदण्ड-सुपुम्ना के अन्दर ऊपर उठ रहे है .
अनुभव करे... कमर मे हल्कापन आ रहा है और मेरुदण्ड-रीढ की हड्डी मे सरसराहट फैल रही है ...
अब माया के सब परमाणु बडे वेग के साथ उपर उठते चले जा रहे है .
वे नाभि तक पहुँच गए है
और ऊपर, अनुभव करे .
वे सीने से ऊपर उठ रहे है ....
अब वे गले मे प्रवेश कर गए है
भाव करे
पूरे मेरुदण्ड मे गले तक एक सरसराहट हो रही है....
हल्के हल्के कम्पनो का अनुभव करे.... .
अब माया के परमाणु बाहर निकलने को मार्ग ढूढ रहे है
अब उन्हे मार्ग मिल गया है .
दोनो कानो से वे बाहर निकल रहे है
अनुभव करे
दोनो कानो से तेज हवा निकल रही है .
कानो के पर्दो पर माया के परमाणुओ का स्पर्श हो रहा है .
कमर के निकटवर्ती परमाणु ऊपर उठते जा रहे है
सुषुम्ना के सहारे वे परमाणु ऊपर उठते जा रहे है
और गले से ऊपर उठकर कानो के छिद्रो से बाहर निकलते जा रहे है -
देखे अन्तर की आँखो से देखे
अपने दाये-बाये दोनो ओर काली झाई लिए गहरे आसमानी (जामूनी) कलर के परमाणुओ का ढेर लग रहा है

अब अन्दर से माया के सभी परमाणु बाहर निकल गए है
अब कमर का हिस्सा एक दम हल्का हो गया है.
पूरा शरीर हल्का हो गया है . मन भी हल्का हो गया है
अपने दोनो ओर काली झाँई लिये बैंगनी परमाणुओ का ढेर लगा हुआ है
हमारा अन्तरग एक दम हल्का हो गया है .
तन-मन-प्राण सभी कुछ सरल हो गए है .
इतनी सहजता-सरलता का अनुभव हमने कभी नही किया था
हम आज एक शिशु की तरह सरल चित्त हो गए हैं
आज हमारी सारी वन्दना-कुटिलता न जाने कहा गायब हो गई है
हमारा हृदय सरलता की मूर्ति ही बन गया है
हमारा व्यवहार एकदम सरल हो गया है और हर व्यक्ति हमे सहज, सरल दिखाई दे रहा है
माया ही तो वन्दना है
वही हमे कुटिल जाल बुनने को प्रेरित करती थी .
अब वह बाहर निकल गई है .
अब मन इतना सरल हो गया है कि उसमे धर्म का सहज अवतरण हो रहा है
प्रभु महावीर का सिद्धान्त है कि "सो हिउज्जुय भूयस्य धम्मो सुद्दस्स चिट्ठई" अर्थात् ऋजुभूत चित्त मे ही धर्म का निवास होता है
अत अब हमारा मन धर्म का पात्र बन गया है . .
इतने समय तक हमारा मन कुटिल बना हुआ था
वह अनेक कुटिल चालें चलता
चाहे जिसको फँसाने का प्रयास करता
किन्तु अब वह इस कुटिलता से मुक्त हो गया है .
वक्रता माया के तिरोहित हो जाने से आज हमारा मन कितना सरल-हल्का एव प्रफुल्लित हो रहा है
आत्मा कितनी आनन्द-मग्न हो रही है
हमारी पूरी चेतना आनन्द-मग्न हो रही है
अब हमारी चेतना एकदम निष्कपट-निश्छल हो गई है
अब कोई भी प्रवृत्ति हम मे कपट उत्पन्न नही कर सकती है
हमारा अन्तरग-आत्मा का प्रत्येक प्रदेश निश्छल सा हो गया है .

किन्तु किन्तु . ..
अभी हमारे बाहर दोनो तरफ माया के परमाणु-स्कन्धो का ढेर लग रहा है . .
कही ये स्कन्ध पुन भीतर प्रवेश कर जावे
इसके लिये हमे बाहर की भी पूर्ण सफाई करनी है.
अनुभव करे देखे .
अपने दोनो ओर बैंगनी कलर के परमाणु स्कन्धो का ढेर लग रहा है ..
जैसे कोई बेंगनी कलर की रूई के ढेर लग रहे हो ....
दोनो ओर दो बडे फूले हुए ढेर है...... .
अन्दर वे एक दूसरे पर पर्त्त दर पर्त्त जमे हुए थे
बाहर निकलते ही फैल गए है
अब हम उन्हे वहा से भी साफ कर रहे है .
वे पुन भीतर प्रवेश न कर जावे अत हम उन्हे नेस्त-नाबूद कर देना चाहते है .
भाव करे .
शरीर मे मन मे ज्योही सरलता आई एक शक्ति का जागरण हो गया है .
यह शक्ति है ऊर्जा
अब हमारे मूलाधार से ध्यान ऊर्जा की सशक्त किरणे ऊपर उठ रही है
प्रकाश की दो दिव्य रेखाएँ गले से ऊपर उठकर दोनो कानो की ओर फैल गई है
अनुभव करे भाव करे
कानो के बाहर निकलते ही दोनो दिव्य रेखाएँ अग्नि की चिनगारियो के रूप मे बदलती जा रही है
देखे वे चिनगारिया माया के स्कन्धो मे लग गई है .
अनुभव करे
हमारे दोनो ओर आग लग रही है ..
ज्वालाए ऊपर उठ रही हैं
हम एकदम शान्त बैठे है
आग का हम पर कोई प्रभाव नही हो रहा है
ज्वालाए ऊपर उठती जा रही है
अन्दर की आँखो से साक्षात् अनुभव करे
कितनी तेज ज्वालाए उठ रही है
और हम पर उन ज्वालाओ का कोई असर नही हो रहा है, अब आग शान्त हो रही है
देखे अपने दोनो ओर-दाये बाये अगारे धधक रहे है
यह समाप्त होती हुई माया का पूर्व उत्तेजित रूप है

अब यह रूप भी शान्त हो रहा है
देखे अगारे मन्द पड रहे हैं
अब अपने दायें-बाये राख ही राख बच गई है ...
ज्वालाए बुझ गई अगारे शात होई गए
राख ही राख रह गई है . .
एकदम सफेद राख माया का कालापन समाप्त हो गया है
केवल राख का ढेर बच गया है ..
किन्तु इसे भी रहने नही देना है
माया का जाल पुन फैल सके ऐसा एक भी दूषित परमाणु अपने इर्द-गिर्द नही रहना चाहिए
अब भाव करे गहराई से भाव करे
कमर के निकट से ही बडे वेग से हवा का झौका ऊपर उठ रहा है
दोनो कानो से ध्यान ऊर्जा से उत्पन्न वायु बडे वेग से बाहर निकल रही है .
जैसे फुटबाल के ब्लेडर का मुह एक दम खुल गया हो
उसी प्रकार दोनो कानो से बडे वेग से हवा निकल रही है
और वह राख उस हवा के द्वारा दूर सुदूर उडती जा रही है
हम राख के दोनो ओर दूर तक उडते हुए गोटो को देख रहे हैं
अपनी अन्तरग दृष्टि से अपनी माया को—उसके दूषित परमाणुओ को उडते देख रहे हैं
भाव करें
सारी राख उड गई है
अब अपने आस-पास का पूरा वातावरण विशुद्ध हो गया है .
अब हमारा अन्तरग एव बहिरग-दोनो स्वच्छ, निर्मल सरल हो गए हैं
हमारे चारो ओर सहज सरलता निश्छलता व्याप्त हो गई है .
भाव करें
अब हमारे सभी आत्म-प्रदेश माया के परमाणु से रहित हो गए हैं
वहाँ सहजभावी ऋजुता ही ऋजुता बच गई है .
अब कोई भी निमित्त हमे छली, कपटी या मायावी नही बना सकता है

माया-मोह के परमाणु ही नही रहे तो वक्रता आएगी ही कहाँ से
अब हमारे स्वभाव मे वक्रता नही, सरलता ही सरलता रहेगी
अन्तरगता पूर्वक फीलिग करे ·
सहज सरलता का भाव हमारे भीतर गहराता जा रहा है· ··
हमारी नस-नस मे ऋजुता की सरसराहट फैल रही है
हमारा पूरा शरीर पुलकित-रोमाचित हो रहा है
सभी आत्म-प्रदेश प्रफुल्लित हो रहे है··· ·
माया का सारा भार उतर गया है ··
बस अब तो मन और आत्मा मे हल्कापन ही शेष रहा है ·
ज्योही भीतर से माया हटी कि आत्मा एक अनुपम आनन्द से भर गई है·
हम इस समय आनन्द के सागर मे तैर रहे है · ·
ये क्षण बडे मूल्यवान् क्षण है··· ·
इस समय हम ससार की सभी छल-छद्म वृत्तियो से दूर केवल आनन्द मग्न हो रहे है ·
ओ हो, सरलता मे कितना आनन्द भरा है ·
मन कितनी ऊर्जा से भर गया है
सरलता आते ही आत्मा अपने सहज रूप मे स्थित हो जाती है ·
सहज आत्मा मे ही ऊर्जा का जागरण होता है··· ·
अब हमारे तन-मन प्राण सब ऊर्जा से भर गए है·
यह सहजता के आनन्द की ऊर्जा है ·
वक्रता गई कि सहजता आई ·
सहजता आई कि आनन्द उपलब्ध हुआ, अब हमारे चारो ओर आनन्द ही आनन्द की वृष्टि हो रही है··
हमारा तन-मन-प्राण सभी कुछ अलौकिक शान्ति से व्याप्त हो गए है
हमारी यह शान्ति वढती चली जाय ··
हमारी यह ऋजुता वढती चली जाय·
हमारा यह तन-मन का हल्कापन वढता चला जाय
हमारी समस्त चेतना आनन्द से आप्यायित वनी रहे·
इसी भावोन्मेष इसी सकल्प के साथ ध्यान से वाहर आ जाँय ·
धीरे-धीरे प्रकृतिस्थ हो जाँय
अपने तन-मन प्राणो को एकदम हल्का अनुभव करे



१२

असूयावृत्ति : समीक्षण और निर्जरा

ध्यान मुद्रा बनाले
(प्रथम तीन प्रक्रियाओ को दोहराए)
भाव बनाए
शरीर एक दम हलका हो रहा है· ·
शरीर का हलकापन बहुत गहरा हो गया
शरीर तो निर्भार गुब्बारे जैसा हो गया है
किन्तु मन मे अभी भी भार पडा है·
हमारे मन को हलका बनाने की प्रक्रिया गतिशील है

आत्मा पर से क्रोध, मान और माया जैसे भयकर आवरणो—पर्दों को हटाने का प्रयास हमने किया है

अब हम माया के ही एक सूक्ष्म रूप ईर्ष्यावृत्ति का विवेचन करने का प्रयास करेंगे

हमारे मन मे ये छोटे-छोटे विकार—आत्म-शत्रु घर किये बैठे है
अनेक प्रकार की दुर्वृत्तियो ने आत्मा पर सूक्ष्म जाल फैला रक्खा है
ऐसे सूक्ष्म रूप है, इन दुर्वृत्तियो के कि हम बहुत बार इन्हे समझ भी नही पाते हैं
बडे-बडे विकारो को हम निकाल देते हैं
उनको परास्त कर देते हैं
किन्तु ये सूक्ष्म शत्रु अनेक रूपो मे छिपकर रह जाते हैं

उन्ही सूक्ष्म विकारो—आत्म-शत्रुओ मे से एक है असूया-वृत्ति-ईर्ष्या की आग

बहुत बार हम दूसरो की पद-प्रतिष्ठा, धन-वैभव के रूप मे वृद्धि देखकर मन-ही-मन कुढने लगते हैं ·

हम अपने प्रतिद्वन्दी की प्रशसा या बढती प्रतिष्ठा को सुनकर बौखला उठते हैं
कोई व्यक्ति हमसे किसी भी कार्य क्षेत्र मे अधिक तरक्की कर जाता है तो हम मन ही मन जल-भुन जाते हैं

यह हमारे मन की एक बहुत बडी कमजोरी है कि हम दूसरे के विकास को अपना ह्रास मान बैठते हैं

और ऐसी स्थिति मे क्षुद्र भावनाओ से भरकर उसे नीचा गिराने का सकल्प कर बैठते है

इस छोटे-से विकार के कारण हम दूसरो का ही नही, स्वय का भी बहुत बडा नुकसान करते रहते है ·

जब कभी हम ईर्ष्या की आग मे जलते है ·

हमारा मन अत्यन्त कालुष्य से भर जाता है

मन का कालुष्य ही तो कर्मबन्धन का मूल कारण है

और इस रूप मे हम प्रतिपल-प्रतिक्षण नये-नये कर्मो का बन्धन करते चले जाते है ··

बहुत बार ईर्ष्या की ज्वालाओ मे झुलसता हुआ हमारा मन स्वय के वर्तमान जीवन को भी तहस-नहस कर देता है

ऐसी अनेक घटनाए हम सुनते और पढते है कि ईर्ष्या की आग मे जलता हुआ व्यक्ति स्वय अपने ही घर मे आग लगा देता है·

अपने ही लालो· आखो के तारो ·· लाडले बेटो के गले घोट देता है

अपनी ही आँख फोड लेता है

यह ईर्ष्या की आग हमे इतनी सूक्ष्मता और गहराई से जलाती है, जिसका कि हमे अहसास भी नही हो पाता है

आज हम अपनी चेतना से इस क्षुद्रतम वृत्ति का निष्कासन करेंगे

आज इस छिपे हुए शत्रु को निकाल भगाएगे

आज इस अशुभ वृत्ति का विवेचन करेगे

अन्त समीक्षण के द्वारा अब हम दुर्वृत्ति का पयवलोकन कर रहै है

कितने रूप लिए हुए यह हमारे भीतर बैठी हुई है

हमारी दुकान से सामने वाले की दुकान अच्छी चल रही हो तो हम ईर्ष्या से भर जाते है

हमारे भवन से किसी ने अधिक सुन्दर भवन खडा कर दिया तो

यद्यपि उसने हमारे भवन को काँट-छाँट कर छोटा या कुरूप नही कर दिया है

किसी का बच्चा हमारे बच्चो से अधिक सुन्दर प्रतिभाशाली है तो किसी का रहन-सहन, खान-पान हम से ज्यादा अच्छा है तो

कोई दो भाई बडे प्रेम से रह रहे हो तो ·

यही नही कोई हमसे ज्यादा धर्म साधना करता है, उसकी समाज मे हमसे अधिक पूछ-प्रतिष्ठा है तो

हम ईर्ष्या से भर जाते है
ऐसे अगणित रूप है, ईर्ष्या के जो छिपे चोर की भाति हमारे भीतर छिपे बैठे है

भाव बनाए
हम अपने प्रत्येक आत्म–प्रदेश पर पैनी दृष्टि दौडा रहे है
अनुभव करे हमे अपने भीतर ईर्ष्या के अनेक रूपो मे अनेक स्तर दिखाई दे रहे है
अब हम एक-एक रूप को एक-एक स्तर को चुन-चुन कर बाहर निकाल रहे है
हमारे भीतर सर्वजन विकास, सर्वजन हित की प्रशस्त भावना गहराती जा रही है
अपने प्रतिद्वन्दी के लिये भी हमारे भीतर सर्व प्रकार के विकास की भावना बलवती होती जा रही है

जब सर्व जन विकास की भावना बलवती बन गई तो ईर्ष्या के कीटाणु-परमाणु वहाँ रह ही कैसे सकते है

अब हम अपने पडौसी या प्रतिद्वन्दी को अपने से श्रेष्ठ बनाने की भावना से सन्नद्ध हो गये हैं
हमे अब दूसरो को विकसित होते देखकर अच्छा लगता है
हमे पडौसियो की प्रगति देखकर प्रसन्नता होती है
ऐसी स्थिति मे ईर्ष्या के परमाणु—स्कन्धो मे भगदड मच जाना स्वाभाविक है
भाव करे वास्तव मे अनुभव करें
अब भीतर कुछ तहलका मच गया है
ईर्ष्या के परमाण एक दम ठण्डे पड गये है
अन्तर मे प्रतिपल जलने वाली वह आग शात हो रही है
ईर्ष्या की ज्वालाए बुझ गई हैं
ईर्ष्या के सारे परमाणु-स्कन्ध तरल बन गये है
ठण्डे पानी के समान वे हमारी नसो मे बह रहे हैं
कल्पना करे
वे हमारी नसो मे सरसराहट करते हुए दोड रहे है
अनुभव करें
हमारी नसो मे शीत लहर-सी दौड रही है
सारे शरीर मे ठण्डी लगने जैसी कँप-कँपी हो रही है
हमारे ध्यान की ऊर्जा सक्रिय हो रही है
ईर्ष्या के स्कन्धो से बने उस तरल पदार्थ को वह ऊर्जा बाहर निकाल देना चाहती है

अनुभव करे
ध्यान ऊर्जा ने एक वेग पकड लिया है
उस तरल पदार्थ के पीछे-पीछे ध्यान ऊर्जा भी दौडने लगी है
फीलिग करे
हमारी नसो मे तरल पदार्थ एव शक्ति के प्रवाह के कारण सनसनाहट उत्पन्न हो गई है
ईर्ष्या के स्कन्ध बाहर निकल भागने को मार्ग ढू ढ रहे है
अब उन्हे मार्ग मिल गया है
वे हाथ और पैरो की अगुलियो से बाहर निकल रहे है
अनुभव करे
हाथो एव पैरो की अगुलियो से शीतल जल की धाराए छूट रही है…
अन्तर् चक्षुओ से देखे
सोलह अगुलियो से धाराए छूट रही है
जैसे फव्वारे छूट रहे है
भाव करे
फब्बारे बहुत ऊचे उठते जा रहे है‥
अन्दर से उन्हे बडा वेग मिल रहा है
ईर्ष्या के स्कन्धो से बना वह तरल पदार्थ बडो तेजी से बाहर निकल रहा है‥
वह फव्वारे बनकर उड रहा है और कही अदृश्य होता जा रहा है
भाप (वाष्प) बनकर आकाश मे विलीन होता जा रहा है
देखे अनुभव करे ईर्ष्या-असूया के समस्त कीटाणु बाहर निकल गये है
अब हमारे मन मे एक सहज हलकापन आ गया है
अब हमारी चेतना मे सहज आत्मीय भावना का विस्तार होता जा रहा है
अब हमे दूसरो का विकास अपना ही विकास दिखाई देता है
अब हमे ईर्ष्या की आग जला नही सकती
अब वह आग शान्त हो गई है
आत्मा मे एक दम हलकापन महसूस हो रहा है
अब हमारे भीतर एक विकासशील ऊर्जा का जागरण हो गया है ·

हमारी जो ऊर्जा ईर्ष्या की धधकती ज्वालाओ मे जल जाती थी
अब वह ऊर्जा स्वय के विकास मे लग गई है
अब हमारी अपनी कार्य विधियो को सहज ही अधिक ऊर्जा मिलने लग गई है
अब हमारे सभी कार्य सहज विकसित होने लगे हैं
कितनी अद्‌भुत बात है यह
ध्यान के द्वारा अपनी ही शक्ति को हमने ह्रास से विकास की ओर गतिशील कर दिया है
अब हमारी मनोवृत्तियो मे कितनी शान्ति का सचार हो रहा है
असूया–निर्जरा के इस प्रयोग से हमारा मन कितना हल्का हो गया है
इन बहुमूल्य क्षणो मे हमारा मन कितना शान्त-प्रशान्त बन गया है
हमारे चारो ओर अनूठी शान्ति का सचार हो रहा है
हमारी यह शान्ति बढती चली जाय
हमारी चेतना ईर्ष्या–शून्य बनी रहे
इसी भावोन्मेष इसी सत्सकल्प के साथ ध्यान से बाहर आजाए
अब सहज प्रकृतिस्थ हो जाँय·
अपने तन, मन एव प्राणो को एक दम हलका अनुभव करें



१३

लोभ : समीक्षण और निर्जरा

ध्यान मुद्रा बनाले
(प्रथम तीन प्रक्रियाओ को दोहराएँ)
अत्यन्त गहराई से भाव करे कि शरीर एकदम हल्का हो गया है
शरीर के हल्केपन के भाव को गहरा बनाते जाएँ
शरीर का हलकापन अद्भुत दशा तक पहुँच गया है·
शरीर का भार गैस के फुगे जितना-सा रह गया है
शरीर गगन की निर्बाध सैर करने को तत्पर है
किन्तु अभी मन पूरा निर्भार नही हुआ है
मन को स्वच्छ, निर्मल, निर्भार बनाने की प्रक्रिया चालू है
अभी हमारी ध्यान साधना इसी कार्य मे प्रवृत्त है ·
मन की निर्मलता ही तो आत्म-साधना की भूमिका है
मन निर्मल हुआ कि आत्मा का मलिन होना अपने आप बन्द हो जायेगा
क्योकि मन की मलिनता ही तो कर्मो का बन्धन करवाती है·
मन की निर्मलता ही तो नये कर्म बन्धन को रोक देती है
नये कर्म बन्धन का रुकना और पुराने कर्मो का झडना (निर्जरा होना) ही तो आत्म-पवित्रता या आत्म-कल्याण है ·
इस रूप मे मन की निर्मलता साधना की भूमिका है
अभी हम भूमिका निर्माण या भूमिका शुद्धि का कार्य कर रहे है
अब तक हमने अपने ध्यान-साधना के प्रयोगो द्वारा क्रोध-मान-माया, ईर्ष्या जैसे बडे-बडे भारो से मन को हल्का करने का प्रयास किया है·
वास्तव मे हमे अपना मन कुछ-कुछ हल्का, निर्मल-साधना की भूमिका योग्य लगने लगा है
फिर भी अभी यह बहुत से भार से लदा है
हमे इस मन को बिलकुल निर्भार बना देना है·
इसके लिये इसके प्रत्येक भार को चुन-चुन कर उतार फेंकना है

ग्रौर जब हमारी धन, यश, पद, प्रतिष्ठा की कामनाएँ पूरी नही होती है · तो तृष्णा की आग ऐसी भडक उठती है कि मन ग्रनहोनी-क्रूरता से भर जाता है···
धन-यश ग्रौर पद की कामनाओ ने ग्रनेक मनुष्यो के मन को ऐसा उन्मादी बनाया है कि कामनाग्रो की पूर्ति नही होने पर लाखो लोगो को बेमौत मौत के घाट उतार दिया गया· ··
महाभारत ग्रौर राम-रावण के युद्ध तृष्णा की उद्दाम लालसाग्रो के कारण ही तो हुए है·· ·
जितने भी युद्ध हुए है · हो रहे है· ·उन सबके पीछे किसी न किसी व्यक्ति की तृष्णा ही तो काम कर रही है····
तृष्णा का यह ग्रावेग उन उन्मादी लोगो मे ही था ऐसी बात नही है ··
हमारे मनो मे भी वैसा ही विकराल जाल फैला हुग्रा है··
सामर्थ्य के ग्रभाव मे ही हम उस ओर दौड नही लगा रहे है· ·
यदि हममे लखपति से करोडपति या चैयरमैन से विधायक बनने तक का सामर्थ्य है तो उतनी दौड तो लगाते ही है
ग्रौर वहाँ पहुँचने पर मन फिर ग्रगली दौड की तैयारियो मे जुट जाता है·· ·
इसीलिये कहा जा रहा है कि हमारे मन मे लोभ-तृष्णा का महाजाल फैला हुग्रा है ···
ग्राज से नही ·· सदियो से नही· ग्रनन्त-ग्रनन्त काल से यह मन-ग्रात्मा लोभ-लालच-तृष्णा के महाजाल मे फसा है····
किन्तु ग्राज हम तृष्णा के इस महाजाल को छिन्न-भिन्न करके रहेगे
ग्रब हम ग्रपने भीतर फैले हुए इस महाजाल का समीक्षण कर रहे है
हम ग्रात्म-प्रदेशो पर फैली लोभ की पर्तो को देख रहे हैं····
हम ग्रात्म समीक्षण कर रहे है ·
हमे दिखाई दे रहा है ··
प्रत्येक ग्रात्म-प्रदेश पर अनन्त-ग्रनन्त लोभ मोहनी कर्म-परमाणुग्रो ने ग्रपना प्रभाव जमा रखा है ·
इन परमाणुग्रो ने ग्रात्मा की ग्रनन्त मौलिक शक्ति को दबा दिया है· ·
इस लोभ-वृत्ति के कारण ही तो ग्रात्मा मे ग्रनेक दुर्वृत्तियो-दोषो ने घर कर लिया है····

भगवान महावीर ने कहा है
'लो भाविलो नरो आयपइ अदज"
लोभी व्यक्ति चोरी करता है'
चोरी ही नही, झूठ, हिंसा आदि अनेक दुर्गुण इस लोभ के कारण आत्मा मे प्रवेश कर जाते है
यदि हमे आत्मा को स्वच्छ-निर्मल बनाना है '
यदि आत्मा को अपने सहज-मूल रूप मे प्रतिष्ठित करना है तो इन लोभ मोहनीय के परमाणु स्कन्धो को निकाल कर फेंक देना होगा'
और यही कार्य आज हम अपनी ध्यान साधना के द्वारा कर रहे हैं
अब हम तीव्रतम भाव करे
हमे आत्म-प्रदेशो पर लगे हुए अनन्त-अनन्त परमाणु-स्कन्ध स्पष्ट दिखाई दे रहे है
हम उन्हे बाहर निकालने को सन्नद्ध हो गये हैं
देखें अन्तर्, चक्षुओ से देखें
अनन्त-अनन्त जन्मो के—चालीस कोडाकोडी सागरोपम तक की स्थिति के लोभ मोहनीय के परमाणु-आत्म प्रदेशो पर चिपके दिखाई दे रहे है
वे परमाण प्रत्येक आत्म-प्रदेश पर पर्त दर पर्त चिपके हुए हैं'
सबसे ऊपर वाली पर्त मे हल्के लोभ मोहनीय के परमाणु हैं
जिन्हे आगमिक भाषा मे सज्वलन लोभ कहते हैं
उसके अन्दर वाली पर्त मे प्रत्याख्यानावरण और उसके अन्दर वाली पर्तों मे क्रमश अप्रत्याख्यानावरण एव अनन्तानुबन्धी क्रोध के परमाणु चिपके हुए है
अन्दर-अन्दर के स्कन्ध अधिक-अधिक प्रगाढता लिये हुए है
आज हम अपनी सूक्ष्म प्रज्ञा से लोभ मोहनीय की सभी पर्तों का समीक्षण कर रहे है
हमे वे पर्तें बहुत स्पष्ट दिखाई दे रही है
अब हम उन पर्तों को उलट-पलट कर बाहर निकालने का क्रम प्रारम्भ कर रहे हैं
भाव करें' '
हमारे सभी आत्म-प्रदेशो मे तीव्र कम्पन पैदा हो गये है
अनुभव करें
लोभ के स्कन्धो की पर्तो मे तीव्रतम उथल-पुथल मच गई है'

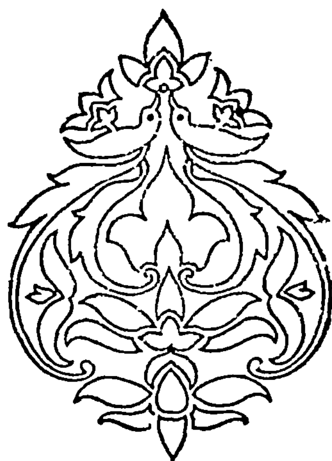
वे पर्ते ऊपर की नीचे और नीचे की ऊपर हो रही है·
हमारे ध्यान की शक्ति बढ गई है
ध्यान ऊर्जा की तीव्रता ने आत्म-प्रदेशो मे तीव्रतम प्रकम्पन उत्पन्न कर दिये है
हमारे शरीर की नस-नस काप कर रही है·
उसके साथ आत्म-प्रदेशो मे प्रकम्पन का अनुभव हो रहा है
फीलिग करे
अन्दर की पर्त बाहर और बाहर की अन्दर हो रही है
तीव्र स्थिति वाले लोभ मोहनीय के स्कन्ध अल्प स्थिति वाले बनकर ऊपर की ओर चले जा रहे है ·
जिसे कर्म सिद्धान्त की भापा मे अपवर्तन एव सक्रमण कहते है
हम उस कर्म अपवर्तन एव सक्रमण की सूक्ष्म प्रक्रिया का साक्षात् अनुभव कर रहे है
भाव करे·
एक दो वर्षो से नही जन्म-जन्मो से आत्म-प्रदेशो मे चिपके लोभ के परमाणु इधर-उधर भागने लगे है
उन स्कन्धो मे बडी खलबली मच गई है
अनुभव करे जैसे हमारी नसो मे रक्त की गति बहुत तीव्र हो गई हो
रक्त की गति के साथ लोभ के परमाणु भी बडी तेज गति से दौडने लगे है
नीचे वाले परमाणुओ की गति ऊपर की ओर तथा ऊपर वाले परमाणुओ की गति नीचे की ओर हो रही है
वे सभी परमाणु पेट के स्थान पर नाभि के आस-पास एकत्रित हो रहे है
पूरे शरीर मे एक तीव्रतम सनसनाहट फैल रही है
भाव करे
लोभ-तृष्णा के सभी परमाणु पेट के अन्दर एकत्रित हो गये है
अब पूरे शरीर मे हल्कापन लग रहा है
किन्तु पेट एकदम भारी अनुभव हो रहा है
जैसे पेट एकदम वायु से भर गया हो
ज्यो-ज्यो परमाणु वहाँ एकत्रित हो रहे है त्यो-त्यो पेट का भारीपन बढता जा रहा है
अनुभव करे··
पेट एकदम फूल रहा है फुलावट इतनी अधिक हो गई है कि वह सहन शक्ति के बाहर है

अब वे सब परमाणु बाहर निकलने को उद्यत हो गये हैं ·
वे बाहर निकलने का मार्ग ढूढ रहे है
अन्य मार्ग नही मिलने से वे नाभि पर जोर लगा रहे है
भाव करें ··
नाभि मे एक छोटा-सा छिद्र हो गया है
और लोभ के परमाणुओ ने बाहर निकलने का मार्ग बना लिया है
छिद्र कुछ-कुछ बडा होता जा रहा है ·
बडे वेग के साथ वे तृष्णा के परमाणु बाहर निकलने लगे हैं
जैसे किसी ट्रक के ट्यूब मे बडा-सा पक्चर हो गया हो या कोई कट लग गया हो और बडे वेग से हवा बाहर निकल रही हो
अनुभव करें
बडे वेग से हवा की तेज धारा हमारे नाभि मण्डल से बाहर निकल रही है
वह हवा केवल हवा नही, तृष्णा के परमाणु हैं
काली झाई लिये गहरे कत्थई रग के वे परमाणु बडी तीव्र गति से बाहर निकल रहे हैं ·
धारा इतनी तेजी से निकल रही है कि वे परमाणु ५-७ फिट दूर गिरते जा रहे हैं
भाव करे
हमारे सामने ५-७ फिट दूर कत्थई परमाणुओ का ढेर लग रहा है
अन्दर के सभी लोभ-लालच-तृष्णा के परमाणु बाहर निकलते जा रहे है ·
हमारा पेट हलका होता जा रहा है ·
अब समस्त तृष्णा के दूषित परमाणु बाहर निकल गये है
अब हमारा अन्तरग पूरा मन हलका हो गया है·
हमारा मन एकदम भार रहित हो गया है ·
आज हमारी समस्त आशाएँ-तृष्णा की वासनाएँ क्षीण हो गई है
हमारे अन्तरग मे निर्लोभ वृत्ति छा गई है ·
हमारा मन निर्लोभी हो गया है
किन्तु अभी हमारे सामने लोभ के परमाणुओ का ढेर लग रहा है
हम अन्तरग चक्षुओ से देख रहे हैं
अन्दर और बाहर दोनो ओर हमारी दृष्टि फैली हुई है

अन्तर मे निर्मलता है तो बाहर अभी जहरीले परमाणु दिखाई दे रहे हैं···
तृष्णा एक जहरीली नागिन है और उसका जहर अभी हमारे सामने पडा हुआ है····
कही वह जहर पुन· अन्दर प्रवेश न कर जाए····
अत हमे उन जहरीले परमाणुओ को दूर-सुदूर खदेड देना है·
देखें अन्तर दृष्टि से देखे
हमारे सामने तृष्णा के जहरीले परमाणुओ का कितना ऊँचा ढेर लगा हुआ है
अन्दर तो वे परमाणु पर्त दर पर्त जमे हुए थे
किन्तु बाहर निकल कर फैल गये है
फूल गये है
हमे अपने सामने कत्थई रग के परमाणुओ का बहुत ऊँचा ढेर दिखाई दे रहा है
कितनी गन्दी हवा फैल रही है उन परमाणुओ मे
कितनी जहरीली गैस फैल रही है हमारे चारो ओर···
पूरा वायुमण्डल विषाक्त बनता जा रहा है
अब हम इस वायुमण्डल को भी पवित्र कर रहे है
भाव करे··
तृष्णा के जहरीले कीटाणुओ के बाहर निकलते ही हमारे भीतर ध्यान की ज्योति जल उठी है
तीव्रतम ऊर्जा का जागरण हो रहा है
इसी ज्योतिर्मय ऊर्जा से बडी तीव्र किरणे नाभि मण्डल से ही बाहर निकल रही है
उन किरणो मे बडे तेज स्फुलिग उठ रहे है
वे स्फुलिग तृष्णा के जहरीले कीटाणुओ मे जाकर गिर रहे है
तृष्णा के परमाणुओ मे आग लग गई है
अग्नि की ज्वालाएँ ऊपर उठती जा रही है
हमारे सामने ही हमारी तृष्णा के परमाणु जल रहे है ·
सभी परमाणु जल कर राख हो गये है
अब हमारे सामने राख ही राख का ढेर दिखाई दे रहा है
फिर अन्तरग से भाव करे
हमारी नाभि से बडी तेजी से मण्डलिया वायु का वेग निकल रहा है ·
वह वायु बडी तीव्र गति से गोलाकार मे घूम कर सारी राख को उडाकर ले जा रही है·

वह राख दूर-सुदूर उडती जा रही है
हम अपनी अन्तर्दृष्टि से उस राख को उडते हुए देख रहे हैं
हमे स्पष्ट दिखाई दे रहा है
मानो बदली की छोटी-सी टुकडी आकाश मे तैरती जा रही है
यह बदली बहुत दूर-सुदूर चली गई है
अब हमारे बाहर का वायुमण्डल भी स्वच्छ-निर्मल हो गया है
भाव करे
नाभि से चन्दन की सुगन्ध लिए हुए वायु की वेगवती धारा निकल रही है
सारा वायुमण्डल चन्दन की महक से सुवासित हो गया है
वास्तव मे अनुभव करें
चारो ओर चन्दन ही चन्दन की महक फैल गयी है··
हमारा मन—हमारे सभी आत्म-प्रदेश तृष्णा शून्य हो गये हैं
हमे अन्तर-बाहर दोनो ओर एकदम हल्कापन लग रहा है
लोभ वृत्ति का सारा भार आत्मा से अलग हट गया है
लोभ गया कि परम आनन्ददायक सन्तोष आया
हमारा मन परम सन्तोष के सागर मे तैर रहा है
अब हमे ससार का कोई भी पदार्थ लुभा नही सकता है
हमारी लोभ वृत्ति क्षीण हो गई है
निर्लोभ चित्त ही मुक्ति साधना कर सकता है
अत अब हम मुक्ति-साधना के लिये सर्वथा योग्य हो गये हैं
इतने वर्षो तक हमारा मन तृष्णा के भँवर मे गोते खाता रहता था
अनेक आकाक्षाओ के ताने-बाने बुनता रहता था
किन्तु आज वह सभी भौतिक आकाक्षाओ से ऊपर उठ गया है
आकाक्षाओ के क्षीण होते ही हमारी चेतना आनन्द से भर गई है
हमारी पूरी चेतना आनन्द से ऊर्मिल हो रही है···
सन्तोष वृत्ति का ऐसा आनन्द हमने कभी अनुभव नही किया
भाव करें

आकाक्षा रहित चेतना कितने आनन्द से भर जाती है····
तृष्णा के भार के हटते ही ऊर्जा का कैसा जागरण होता है
हमारी सम्पूर्ण चेतना ऊर्जा की सवाहक भर बन गई है ·
यह ऊर्जा का प्रवाह अलौकिक है
ये आनन्द के क्षण अनुपम है
इन क्षणो मे हमारे तन-मन-प्राण सभी कुछ अलौकिक आनन्द से भर गये है
हमारे चारो ओर शान्ति शान्ति शान्ति व्याप्त हो गई है
हमारी यह शान्ति निरन्तर बनी रहे
हमारी चेतना इसी प्रकार सदा-सर्वदा आनन्द के सागर मे तैरती रहे
हमारे तन-मन सभी ऐसे ही हलके बने रहे·
यह हलकापन बढता जाय ··
इसी भावमयता इसी सत्सकल्प
इसी तन्मयता के साथ ध्यान से बाहर आ जाये
धीरे-धीरे प्रकृतिस्थ हो जाएँ
अपने तन-मन-प्राण सभी को एकदम हल्का आनन्द परिपूर्ण अनुभव करे



१४

मिथ्यात्व अज्ञान : समीक्षण और निर्जरा

ध्यान मुद्रा बनालें
(प्रथन तीन प्रक्रियाओ को तन्मवता से दोहराएँ)
तन और मन के हल्का होने के भावो को खूब गहरा बनाए
भाव करे
शरीर एकदम हलका हो गया है
मन का हलकापन भी बढता जा रहा है
आत्मा पर लगी हुई कषायो की पर्तें बहुत हलकी होगई हैं
अब हमारी आत्मा मे सहजता, निर्मलता, क्षमाशीलता एव विनम्रता का भाव बढता जा रहा है
अब हमे कुछ हलकापन महसूस होने लगा है
फिर भी यह हलकापन अभी बाह्य दृष्टि का हलकापन है
अभी तक की यात्रा द्रव्ययात्रा या व्यावहारिक शुद्धि की यात्रा कही जा सकती है
क्योकि अभी हमारे भीतर आत्मसाधना का प्रबलतम शत्रु बैठा हुआ है,
जो साधना की भूमिका का ही निर्माण नही होने देता है
वह शत्रु है अनादिकालीन 'मिथ्यात्व'
प्रवलतम अज्ञान
यह मिथ्यात्व ऐसा प्रबलतम शत्रु है जो हमे सत्-असत् या धर्म-अधम का विवेक ही नही करने देता है
जीव-अजीव और सुमार्ग-उन्मार्ग का भेद ही नही समझने देता है
मिथ्यात्व मोह एक ऐसी नशोली मदिरा है, जिसे पी लेने के बाद सारी सुध-बुध खो जाती है
जैसे शराब पी लेने पर व्यक्ति मां को पत्नी और पत्नी को माँ कह देता है
घोडे को गाय और गाय को घोडा कह देता है
उसे किसी भी प्रकार का भान नही रहता है
ठीक उसी प्रकार हमारी आत्मा के साथ लगा हुआ अनादिकालीन मिथ्यात्व हमे स्वय के सही स्वरूप को ही समझने नही देता है

और स्वरूप-बोध के अभाव मे धर्म-अधर्म एव जीव-अजीव का ज्ञान तो हो ही नही सकता है
और उसके अभाव मे मोक्ष की साधना तो किसी भी तरह असम्भव है ·
इस प्रकार ७० कोडा कोडी उत्कृष्ट स्थिति वाला यह मिथ्यात्व मोहनीय ही हमारी आत्मा का मूलभूत शत्रु है ·
या यो कहे
यह सभी शत्रुओ का राजा अथवा मुखिया है
इस मुखिया को पराजित किया कि बाकी की सारी दुर्वृत्तियाँ अपने आप क्षीण होने लगेगी ·
सेनापति मरा कि सेना अपने आप तितर-बितर होने लगेगी
अभी तक हमने कषायो के ऊपरी स्तरो को हटाने का प्रयास किया है
किन्तु अभी कषायो का मूल उत्प्रेरक केन्द्र मिथ्यात्व जब तक बैठा है ...
कषाये पुन -पुन उत्तेजित होती रहेगी ....
अत अब हमे इस सेनापति को ही कुचल डालना है ·
मिथ्यात्व को ही नष्ट कर देना है
आज हम इस मिथ्यात्व मोह को नष्ट करने का प्रयास करेंगे ..
पहले हम मिथ्यात्व का समीक्षण करेगे ·
देखे अपने अन्तरग मे देखे ·
हम जरा अन्तर्यात्रा करे
आत्म-समीक्षण करे
अनुभव करे ·
हमे आत्मप्रदेशो पर लगी मिथ्यात्व की काली-काली पर्ते दिखाई दे रही है
प्रत्येक आत्मप्रदेश पर दृष्टि दौडाएँ
वहाँ निबिडतम अन्धकार के समान काला ही कालापन दिखाई दे रहा है
यह कालापन मिथ्यात्व का है ·
यह सघन अन्धकार आत्म-अज्ञान का है
ओहो ! · इस मिथ्यात्व ने इस अज्ञान ने हमे जन्म-मरण की कितनी अन्धी गलियो मे भटकाया है
अनन्त-अनन्त बार निगोद एव नरक योनियो मे दु खो की खाई मे डाला है
यह मिथ्यात्व ही तो है, जिसने हमारी आत्मा को अभी तक ससार मे बाँध रक्खा है

मुक्ति सुख से—अनन्त आनन्द से वंचित कर रक्खा है
यह सभी आत्मप्रदेशो पर कैसे सघन श्याम वर्ण के रूप मे
छाया हुआ है
भाव करे
अब हम उस श्याम वर्ण को, उस अंधकार को हलका
होते हुए देख रहे हैं
अन्धकार छँटता जा रहा है और श्याम वर्ण छँटता जा
रहा है
अनुभव करे
विचारो मे उज्ज्वलता का संचार होता जा रहा है
इन क्षणो मे हम अपने विचारो के द्रष्टा बने हुए हैं
हमारे अध्यवसायो की विशुद्धि बढती जा रही है
भाव करें
मिथ्यात्व मोहनीय की सत्तर कोडा कोडी की स्थिति
घटती जा रही है
अध्यवसायो की पवित्रता से सहज ही न्यून होती
जा रही है
जिसे हम आगमिक भाषा मे स्थितिघात अथवा
अपवर्तनकरण कहते हैं
हम अपने कर्म की स्थिति को कम होते हुए देख रहे है—
अनुभव करे
मोहनीय कर्म की यह स्थिति अन्त कोडा कोडी तक आ
गई है
इतनी अल्प स्थिति के आते ही आत्मा मे करणो की
प्रक्रिया प्रारम्भ हो गई है
भाव करे
अभी हमारी आत्मा यथा प्रवृत्तिकरण से गुजर रही है
यथा प्रवृत्तीकरण अध्यवसायो की वह प्रक्रिया है जिससे
कर्मों की स्थिति घटने लग जाती है
आत्मा अब विशुद्धि की ओर गतिशील हो रही है
यथा प्रवृत्तोकरण की प्रक्रिया ने कर्मों की स्थिति को
बहुत कम कर दिया है
अब हमारे अन्दर का अनादिकालीन अज्ञान-अन्धकार
कुछ-कुछ छँटने लगा है
अब हम अध्यवसाय विशुद्धि की एक उच्चतम प्रक्रिया-
अपूर्वकरण से गुजर रहे हैं
अपूर्वकरण एक ऐसी प्रक्रिया का नाम है जिसमे आत्मा मे
ऐसा भाव उत्पन्न होता है जैसा जीवन मे कभी उत्पन्न
नही हुआ हो·

और स्वरूप-बोध के अभाव मे धर्म-
अजीव का ज्ञान तो हो ही नही सक
और उसके अभाव मे मोक्ष की साध
तरह असम्भव है
इस प्रकार ७० कोडा कोडी उत्कृष्ट
मिथ्यात्व मोहनीय ही हमारी आत्म
या यो कहे
यह सभी शत्रुओ का राजा अथवा म
इस मुखिया को पराजित किया कि
दुर्वृत्तियाँ अपने आप क्षीण होने लग
सेनापति मरा कि सेना अपने आप
लगेगी
अभी तक हमने कषायो के ऊपरी स्त
प्रयास किया है
किन्तु अभी कषायो का मूल उत्प्रेरक
तक बैठा है ...
कषाये पुन -पुन उत्तेजित होती रहेगी..
अत अब हमे इस सेनापति को ही कुचल
मिथ्यात्व को ही नष्ट कर देना है
आज हम इस मिथ्यात्व मोह को नष्ट कर
करेगे
पहले हम मिथ्यात्व का समीक्षण करेगे ..
देखे अपने अन्तरग मे देखे ·
हम जरा अन्तर्यात्रा करे ·
आत्म-समीक्षण करे
अनुभव करे ·
हमे आत्मप्रदेशो पर लगी मिथ्यात्व की काली-क
दिखाई दे रही है
प्रत्येक आत्मप्रदेश पर दृष्टि दौडाएँ
वहाँ निबिडतम अन्धकार के समान काला ही काला
दिखाई दे रहा है
यह कालापन मिथ्यात्व का है ·
यह सघन अन्धकार आत्म-अज्ञान का है ·
ओहो ! · इस मिथ्यात्व ने इस अज्ञान ने हमे जन्म-
मरण की कितनी अन्धी गलियो मे भटकाया है
अनन्त-अनन्त बार निगोद एव नरक योनियो मे दु खो
की खाई मे डाला है
यह मिथ्यात्व ही तो है, जिसने हमारी आत्मा को अभी
तक ससार मे बाँध रक्खा है ·

मुक्ति सुख से—अनन्त आनन्द से वचित कर रक्खा है
यह सभी आत्मप्रदेशो पर कैसे सघन श्याम वर्ण के रूप मे
छाया हुआ है
भाव करे
अब हम उस श्याम वर्ण को, उस अधकार को हलका
होते हुए देख रहे हैं
अन्धकार छँटता जा रहा है और श्याम वर्ण छँटता जा
रहा है
अनुभव करे··
विचारो मे उज्ज्वलता का सचार होता जा रहा है
इन क्षणो मे हम अपने विचारो के द्रष्टा बने हुए हैं
हमारे अध्यवसायो की विशुद्धि बढती जा रही है··
भाव करे
मिथ्यात्व मोहनीय की सत्तर कोडा कोडी की स्थिति
घटती जा रही है
अध्यवसायो की पवित्रता से सहज ही न्यून होती
जा रही है
जिसे हम आगमिक भाषा मे स्थितिघात अथवा
अपवर्तनकरण कहते हैं
हम अपने कर्म की स्थिति को कम होते हुए देख रहे हैं—
अनुभव करें
मोहनीय कर्म की यह स्थिति अन्त कोडा कोडी तक आ
गई है
इतनी अल्प स्थिति के आते ही आत्मा मे करणो की
प्रक्रिया प्रारम्भ हो गई है
भाव करे
अभी हमारी आत्मा यथा प्रवृत्तिकरण से गुजर रही है
यथा प्रवृत्तीकरण अध्यवसायो की वह प्रक्रिया है जिससे
कर्मों की स्थिति घटने लग जाती है
आत्मा अब विशुद्धि की ओर गतिशील हो रही है
यथा प्रवृत्तीकरण की प्रक्रिया ने कर्मों की स्थिति को
बहुत कम कर दिया है
अब हमारे अन्दर का अनादिकालीन अज्ञान-अन्धकार
कुछ-कुछ छँटने लगा है
अब हम अध्यवसाय विशुद्धि की एक उच्चतम प्रक्रिया-
अपूर्वकरण से गुजर रहे हैं· ·
अपूर्वकरण एक ऐसी प्रक्रिया का नाम है जिसमे आत्मा मे
ऐसा भाव उत्पन्न होता है जैसा जीवन मे कभी उत्पन्न
नही हुआ हो····

अध्यवसायो की अथवा भावो की इस उच्चता मे आत्मा मे सहज रूप से कुछ अभूतपूर्व गतिविधियाँ प्रारम्भ होती है

कर्म सिद्धान्त मे उन्हे स्थितिघात, रसघात, गुण श्रेणि गुण सक्रमण एव अपूर्व स्थितिबन्ध के नामो से पुकारते है

अभी हम इन पारिभाषिक शब्दो की व्याख्या मे नही जा रहे है

भाव करे

इन क्षणो मे हम ध्यान की इतना गहराई मे पैठ गये है कि हमे इन सभी स्थितियो का साक्षात्-प्रत्यक्ष अनुभव हो रहा है

अभी हम आत्म-समीक्षण एव कर्म-समीक्षण की प्रक्रिया मे सलग्न है

हमे आत्मप्रदेशो पर लगे कर्म परमाणुओ मे होने वाली सूक्ष्म प्रक्रिया का अनुभव हो रहा है

कर्म परमाणुओ मे बहुत अधिक हलन चलन मच रही है

कर्मो की स्थिति—फल देने की काल मर्यादा एकदम घटती जा रही है

कर्मों का रस फलानुभव का कटुकादि सामर्थ्य क्षीण होता जा रहा है …

हम अनुभव कर रहे है

कर्मों मे उथल-पुथल मच रही है

अभी अध्यवसायो के प्रकर्ष से अशुभ-कर्म शुभ मे परिणत हो रहे है

प्रतिक्षण असख्य गुण अधिक कर्म परमाणुओ की निर्जरा हो रही है

कर्म निर्जरा एव कर्मबन्ध की प्रक्रिया का हम स्थूल अनुभव कर रहे है

भाव करे

हम कर्म परमाणुओ मे पडने वाली स्थिति को देख रहे है

इन क्षणो मे हमारे बन्धन वाले कर्मो मे ऐसी अल्प स्थिति का बन्ध हो रहा है, जैसा अनन्त भूतकाल मे कभी नही हुआ

अपूर्वकरण की इस पच प्रक्रियात्मक विधि मे कषाये तो क्षीण हो ही रही हैं पर साथ मे मिथ्यात्व एव अज्ञान की पर्तें भी उतरती जा रही है

आत्मा मे हलका-हलका ज्ञान का प्रकाश फैलता जा

रहा है
जैसे चन्द्रमा सघन बादलो की ओट मे छिपा हो और
बादल धीरे-धीरे हल्के होते जा रहे हो—चाँदनी का
प्रकाश प्रसरता जा रहा हो
अथवा आत्मा कृष्णपक्ष से शुक्लपक्ष के प्रकाश की ओर
गतिशील हो रही हो
भाव करे
आत्मा मे प्रकाश फैलता जा रहा है, अन्धकार क्षीण
होता जा रहा है और इस प्रक्रिया का हम प्रत्यक्ष अनुभव
कर रहे हैं
अब हमारी चेतना मे अनिवृत्तीकरण की प्रक्रिया मे
प्रवेश करने की भूमिका का निर्माण हो गया है
अनिवृत्तीकरण उस प्रक्रिया को कहते हैं, जिसमे
अध्यवसायो में इतनी विशुद्धि आ जाती है कि आत्मा
आत्मबोधि स्वरूप दर्शन या सम्यग्दर्शन प्राप्त किये बिना
नही रहती है
हम अभिवृत्तीकरण मे प्रवेश कर रहे है'
भाव करे
आत्मा मे स्वरूप बोध की आभा फूटती जा रही है
देखे प्रत्येक आत्मप्रदेश को देखे
वहाँ का अन्धकार एकदम हलका होता जा रहा है
वहाँ नयनाभिराम दिव्य आलोक का उदय होता जा
रहा है
हलका-हलका नीलाभा लिये स्थायी कलर का मनमोहक
प्रकाश वहाँ फैल रहा है
अनिवृत्तीकरण के प्राप्त होते ही मिथ्यात्व मोहनीय कर्म
के पुद्गलो मे बडी भारी हलन-चलन मच गई है ·
उन्हे अपना आसन स्पष्ट हिलता हुआ दिखायी दे रहा है
उनका अनादिकालीन प्रभाव क्षीण हो रहा है
उनमे, अपनी पकड ढीली होने से एक प्रकार की
छटपटाहट उत्पन्न हो गई है
भाव करे
अपने अन्तरग मे अनिवृत्तीकरण के अध्यवसायो और
मिथ्यात्व मोहनीय के कर्म दलिको मे बडा भारी युद्ध
छिड गया है
अन्तरग मे होने वाले इस सघर्ष को हम प्रत्यक्ष देख
रहे हैं
देखें कितना तुमुल सग्राम हो रहा है
यह अज्ञान और ज्ञान का युद्ध है

यह अन्धकार और प्रकाश का सघर्ष है—
यह मिथ्यात्व और सम्यग्दर्शन की लडाई है·
अनुभव करे·
अज्ञान-मिथ्यात्व एव अन्धकार परास्त होता जा रहा है·
अनिवृत्तीकरण के अध्यवसायो ने मिथ्यात्व के कर्मदलिको को परास्त कर दिया है
देखे मिथ्यात्व मोह के अनादिकाल से लगे कर्म दलिक परास्त होकर भागने लगे है
अज्ञान तिरोहित होने लगा है
अन्धकार छँट गया है
आत्मा मे सम्यग्दर्शन का अलौकिक प्रकाश फैल गया है
ऐसा प्रकाश जो कभी नही देखा गया
ऐसा प्रकाश जिसमे हमे जीवादि तत्त्वो का सही ज्ञान हो गया है
आत्मा का सही बोध हो गया है
हेयज्ञेय उपादेय का परिज्ञान और सत्-असत् का सम्यग्ज्ञान हो गया है
ओ हो! कैसी अलौकिक अनदेखी प्रभा फैल रही है हमारी चेतना मे

यह हमारे अनादिकालीन जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण सबसे अलौकिक सर्वाधिक आनन्द का क्षण है
हम अनादिकालीन मिथ्यात्व से बाहर आ गए हैं·
हम आत्मदर्शी-सम्यग्दर्शी अथवा स्वरूपदर्शी बन गए है
सत्तर कोडा कोडी सागरोपम की स्थितिवाला मिथ्यात्व मोह कर्म आज हमारी आत्मा से विदा हो गया है·
उसी के साथ जुडा अनन्तानुबन्धी क्रोध-मान-माया और लोभ का स्तर भी विलीन हो गया है
अनुपम अद्भुत, अनिर्वचनीय सम्यक्त्व ज्योति हमारे भीतर जल गई है
उस ज्योति के प्रकाश मे अनादिकालीन मति-श्रुत-अज्ञान सम्यग्ज्ञान के रूप मे रूपान्तरित हो गए है
अब तक हम हेय को उपादेय और उपादेय को हेय समझ रहे थे
अब हमारी पूरी दृष्टि बदल गई है
अब हमे ससार के समस्त नाशवान् पदार्थ हेय लगने लगे है
केवल मोक्ष मार्ग की साधना ही उपादेय लग रही है
मिथ्यात्व के समस्त कर्म दलिक शरीर के रोम-रोम से मार्ग ढूढकर भाग गए है

आत्मप्रदेशो से सहज प्रकाश प्रस्फुटित हो रहा है "
यह प्रकाश कही बाहर से आगत नही, हमारी आत्मा का ही प्रकाश है जो आज तक कर्मावरण से आवृत्त था

भाव करे

अब हमे अपने चारो ओर पदार्थों का सही बोध हो रहा है

हमारे भीतर मुक्ति साधना के प्रति गहरे विश्वास का जागरण हो गया है

हमारी तत्व के प्रति सम्यग्ज्ञानपूर्वक सम्यग्श्रद्धा उत्पन्न हो गई हैं

हम आज अपनी आत्मा मे बहुत हल्कापन अनुभव कर रहे है

ऐसा हलकापन जो कल्पनातीत है

आज हमारी चेतना अनिर्वचनीय प्रकाश एव अलौकिक आनन्द से भर गई है

सम्यग्दर्शन का यह प्रकाश पूरे शरीर से बाहर फूटता सा दिखाई दे रहा है

आज हमारी चेतना मे सम्यग्दर्शन का सूर्योदय हो गया है

आज हम ऐसे आनन्द मे तैर रहे हैं जो वर्णनातीत है

सम्यग्दर्शन अथवा भेद विज्ञान की उपलब्धि के इस आनन्द मे मन नृत्य कर रहा है…

हमारे अन्तरग मे अध्यात्म साधना का सुन्दर सगीत उठ रहा है

भाव करें

यह आनन्द निरन्तर बढता चला जाय

हमारा सम्यग्दर्शन क्षायिक भाव मे रूपान्तरित हो जाए

हम इस आनन्द मे सदा-सदा लीन रहे

इसी भावोन्मेष इसी तीव्र अहोभाव के साथ

ध्यान से बाहर आ जाएँ

शरीर को प्रकृतिस्थ बनावें

अपने पूरे परिवेश को एकदम हलका अनुभव करें…



१५

ममता बंधन : समीक्षरण और निर्जरा

ध्यान मुद्रा बनाये
(प्रथम तीन प्रक्रियाओ को तीव्रतम सकल्पो के साथ दोहराए)
भाव करे
शरीर का हलकापन बहुत अधिक बढ गया है
मन का हलकापन भी बढता जा रहा है
आत्मा मे उच्चकोटि का हलकापन बढता जा रहा है
हमारा मिथ्यात्व का अन्धकार विलीन हो गया है....
कपायो की तीव्रता क्षीण हो गई है
आत्मा मे अति रमणीय प्रकाश का उदय हो गया है
फिर भी अभी वहाँ अनेक प्रकार के विकार भरे पडे है .
ऐसे छोटे-छोटे वैकारिक जन्तु वहा बैठे है जो अनन्त शक्ति सम्पन्न आत्मा को परेशान कर रहे है .
जैसे सुपुप्त सिह को मच्छर-मक्खियाँ भी परेशान कर देती है .
उसी प्रकार हमारे भीतर बैठे छोटे-छोटे विकार हमे परेशान कर देते है
आज हम उन छोटे-छोटे विकारो मे से एक विकार को चुन कर निकालने का प्रयास कर रहे है ...
वह विकार है 'ममत्व भाव' .
सम्यग्दृष्टि भाव के जागरण के बाद भी
कपायो की क्षीणता के उपरान्त भी ममता के बन्धन हमारी आत्मा मे सूक्ष्मता से छिपे रहते है
ये ममता के बन्धन अत्यन्त सूक्ष्म एव चिकने होते है, जिन्हे हम शीघ्र समझ भी नही पाते है
हमे अपने परिवार पर, मकान पर, धन सम्पत्ति पर, पद प्रतिष्ठा पर, प्रियजनो पर ममत्व होता है
यही नही हमे ऐसे अगणित पदार्थों पर ममत्व होता है, जो अभी हमारे पास नही है किन्तु उनकी प्राप्ति हेतु हम रात दिन प्रयास करते है .
यह ममत्व, जिसे आगमिक भाषा मे राग कहा जाता है

हमारी आत्मा मे गहरी जडे जमाए रहता है
द्वेष भाव तो फिर भी शीघ्र छूट जाता है किन्तु राग का छूटना बहुत कठिन माना गया है
राग भाव दसवें गुणस्थान तक रहता है
पति-पत्नी का राग, पिता-पुत्र, माता-पुत्री या भाई-बहिन का राग तो स्थूल राग है
इससे भी गहरा राग होता है उन अदृश्य तत्त्वो का जो अभी स्वाधीन नही हैं किन्तु मन उनके लिये प्रतिपल उद्विग्न बना रहता है.
हम जरा आत्म-समीक्षण करे
अपने ही अन्तरग मे झाके
हमे ममता के कितने ही सूक्ष्म स्तर वहाँ दिखाई दे रहे है
वहाँ ममता के ऐसे ताने-बाने लगे हुए हैं कि एक उलझा हुआ जाल फैल रहा है
ऐसा जाल, जिसे काट पाना बहुत कठिन है
ममता के इस जाल ने ही तो हमे ससार के बन्धनो मे जकड रक्खा है
इस जाल के कारण ही तो हम साधुत्व की उच्च भूमिका का स्पर्श नही कर पा रहे है
और इसी रेशमी बन्धन के कारण जन्म-मरण की शृ खला मजबूत होती जाती है
किन्तु आज हम ममता के इन बन्धनो को तोड देगे
अभी हम आत्म-प्रदेशो पर फैली हुई रेशमी जाली का समीक्षण कर रहे हैं
विविध रूपो मे फैले हुए ममता के बन्धन हमे स्पष्ट दिखाई दे रहे है
कही हमारा मन पारिवारिक बधनो से बँधा हुआ है तो कही पद-प्रतिष्ठा और वैभव के बन्धनो से
कही मन किसी सुन्दर रूप से जुडा है
तो कही स्वादिष्ट पकवानो से
कही गीत और सुगन्धित पदार्थों से चिपका है तो कही मनभावन स्पर्श सुखो से
इन क्षणो हम स्पष्ट देख रहे है कि ये सभी ममत्व के धागे हमारे मन के चारो ओर फैले हुए है
ये बडे महीन किन्तु अत्यन्त मजबूत धागे है
अब हम इन धागो को तोडने के लिए सक्रिय हो रहे हैं
हमारी ध्यान साधना के द्वारा हमारे भीतर एक पैने शस्त्र का निर्माण हो गया है

१५

ममता बंधन : समीक्षण और निर्जरा

ध्यान मुद्रा बनाये
(प्रथम तीन प्रक्रियाओ को तीव्रतम सकल्पो के साथ दोहराए)
भाव करे
शरीर का हलकापन बहुत अधिक बढ गया है
मन का हलकापन भी बढता जा रहा है
आत्मा मे उच्चकोटि का हलकापन बढता जा रहा है
हमारा मिथ्यात्व का अन्धकार विलीन हो गया है....
कषायो की तीव्रता क्षीण हो गई है
आत्मा मे अति रमणीय प्रकाश का उदय हो गया है
फिर भी अभी वहाँ अनेक प्रकार के विकार भरे पडे है
ऐसे छोटे-छोटे वैकारिक जन्तु वहा बैठे है जो अनन्त शक्ति सम्पन्न आत्मा को परेशान कर रहे है .
जैसे सुषुप्त सिंह को मच्छर-मक्खियाँ भी परेशान कर देती है
उसी प्रकार हमारे भीतर बैठे छोटे-छोटे विकार हमे परेशान कर देते है
आज हम उन छोटे-छोटे विकारो मे से एक विकार को चुन कर निकालने का प्रयास कर रहे है ...
वह विकार है 'ममत्व भाव' .
सम्यग्दृष्टि भाव के जागरण के बाद भी
कषायो की क्षीणता के उपरान्त भी ममता के बन्धन हमारी आत्मा मे सूक्ष्मता से छिपे रहते है
ये ममता के बन्धन अत्यन्त सूक्ष्म एव चिकने होते हैं, जिन्हे हम शीघ्र समझ भी नही पाते है
हमे अपने परिवार पर, मकान पर, धन सम्पत्ति पर, पद प्रतिष्ठा पर, प्रियजनो पर ममत्व होता है
यही नही हमे ऐसे अगणित पदार्थों पर ममत्व होता है, जो अभी हमारे पास नही है किन्तु उनकी प्राप्ति हेतु हम रात दिन प्रयास करते है
यह ममत्व, जिसे आगमिक भाषा मे राग कहा जाता है

हमारी आत्मा मे गहरी जडें जमाए रहता है
द्वेष भाव तो फिर भी शीघ्र छूट जाता है किन्तु राग का छूटना बहुत कठिन माना गया है
राग भाव दसवें गुणस्थान तक रहता है
पति-पत्नी का राग, पिता-पुत्र, माता-पुत्री या भाई-बहिन का राग तो स्थूल राग है
इससे भी गहरा राग होता है उन अदृश्य तत्त्वो का जो अभी स्वाधीन नही है किन्तु मन उनके लिये प्रतिपल उद्विग्न बना रहता है
हम जरा आत्म-समीक्षण करे
अपने ही अन्तरग मे झाके
हमे ममता के कितने ही सूक्ष्म स्तर वहाँ दिखाई दे रहे है . .
वहाँ ममता के ऐसे ताने-बाने लगे हुए हैं कि एक उलझा हुआ जाल फैल रहा है
ऐसा जाल, जिसे काट पाना बहुत कठिन है
ममता के इस जाल ने ही तो हमे ससार के बन्धनो मे जकड रक्खा है
इस जाल के कारण ही तो हम साधुत्व की उच्च भूमिका का स्पर्श नही कर पा रहे हैं
और इसी रेशमी बन्धन के कारण जन्म-मरण की शृ खला मजबूत होती जाती है
किन्तु आज हम ममता के इन बन्धनो को तोड देंगे
अभी हम आत्म-प्रदेशो पर फैली हुई रेशमी जाली का समीक्षण कर रहे है
विविध रूपो मे फैले हुए ममता के बन्धन हमे स्पष्ट दिखाई दे रहे हें
कही हमारा मन पारिवारिक वधनो से बँधा हुआ है तो कही पद-प्रतिष्ठा और वैभव के बन्धनो से
कही मन किसी सुन्दर रूप से जुडा है
तो कही स्वादिष्ट पकवानो से
कही गीत और सुगन्धित पदार्थों से चिपका है तो कही मनभावन स्पर्श सुखो से
इन क्षणो हम स्पष्ट देख रहे है कि ये सभी ममत्व के धागे हमारे मन के चारो ओर फैले हुए हैं
ये बडे महीन किन्तु अत्यन्त मजबूत धागे हैं
अब हम इन धागो को तोडने के लिए सक्रिय हो रहे हैं
हमारी ध्यान साधना के द्वारा हमारे भीतर एक पैने शस्त्र का निर्माण हो गया है

भाव करे
हमे अपने अध्यवसायो मे ऐसी पैनी दृष्टि दिखाई दे रही है
जो इन ममता वन्धनो की क्षणिकता का वोव करा रही है
हमारी चेतना मे अनासक्ति भाव गहराता जा रहा हे
अभी हमे परिवार के सभी वन्धन क्षणिक एव स्वार्थी दिखायी दे रहे है
ओहो, कितना स्वार्थ भरा है इन सम्वन्वो मे .
पति पत्नी की इच्छाओ आवश्यकताओ की पूर्ति करता रहे तब तक तो ठीक, अन्यथा सघर्प चालू हो जाते है
यहि स्थिति पिता, पुत्र एव अन्यान्य सम्वन्धो की है
फिर इन सम्वन्धो मे ममत्व कैसा
ऐसे अनेक ऐतिहासिक उदाहरण हमारे सामने है जिनमे स्वार्थो मे जरा-सी वाधा आते ही एक-दूसरा प्रियजन एक दूसरे की हत्या तक कर देता है ..
अरे, इस स्वार्थी ससार मे अनेक पत्नियो ने अपने हाथो अपने प्रियतमो को मौत के घाट उतार दिया
अनेक पुत्रो ने अपने जन्मदाता पूज्य पिताओ को जेल के सीकचो मे बन्दकर तडप-तडप कर मरने को मजबूर कर दिया
भाई के पास पैसा है तो वह बहिन का प्यारा भाई है
नही तो बहिन उसे फूटी कौडी के मोल भी नही पूछे...
हा, हा, कितना स्वार्थो से भरा यह ससार है .
फिर किस पर ममता रक्खी जाए ...
भाव करे. ..
अभी हमे अपने अन्तरग मे बने सभी रिश्ते एकदम स्वार्थी एव क्षणभगुर दिखाई दे रहे है
यहि स्थिति पद-प्रतिष्ठा और धन दौलत की ममता की है
ये सभी तो चचल है । आज का करोडपति कल कगाल बन जाता है और आज का चपरासी कल मिनिस्टर बन कर पुन चन्द दिनो मे सडक छाप व्यक्ति बन जाता है .
फिर इनमे ममता कैसी
अनुभव करे
हमारे भीतर ध्यान की ऐसी तीक्ष्ण ऊर्जा उत्पन्न हो गई है
जिसने इन सम्बन्धो की स्वार्थता को समझ लिया है

अब वह ऊर्जा एक तीक्ष्ण कैंची की तरह अन्दर चल रही है
रेशमी धागे-सी वह जाली कटती जा रही है
हमारे मन से ममता के बन्धन टूटते जा रहे हैं
अनुभव करे
भीतर से एक पतली सी तीक्ष्ण कैंची सर-सर करती चल रही है
हमारे आत्म-प्रदेशो मे गुद-गुदाहट-सी हो रही है
ममता के बन्धन टूटते जा रहे हैं
हमारी आसक्ति क्षीण होती जा रही है
इन क्षणो मे हम बन्धनो की टूटन को साक्षात् अनुभव कर रहे है
हमे ममत्व की जाली टूटती हुई साफ दिखाई दे रही है
आत्म-प्रदेश एकदम मुक्त-मुक्त से लग रहे हैं
इन क्षणो हम सारे सम्बन्धो से परे अपने आपको एकाकी नि स्पृह-अकिचन अनुभव कर रहे हैं
अहा, इस एकाकीपन मे भी कितना आनन्द भरा हुआ है
ऐसा अलौकिक आनन्द जो शब्दातीत है आज हमे मन और आत्मा एकदम असग हलके अनुभव हो रहे है
आज हमारी चेतना मे अभूतपूर्व अनासक्ति अथवा निर्ममत्व भाव का जागरण हो गया है
हम अपने आपको सम्पूर्ण ससार मे अलग-थलग अनुभव कर रहे है
भाव करे
इन क्षणो हम एकान्त-निर्जन शून्य जगल मे एकाकी बैठे हुए है
अब हमारे सम्बन्ध अपने शरीर के अतिरिक्त किसी के साथ नही है
ससार की ना कुछ-सडी गली चीजो पर रहने वाली ममता स्वत दूर भाग गई है
हम अपने आप मे एकाकी है
"रागो ऽह नत्थि मे कोई' की आगम वाणी हमारे अन्तरग मे गू ज रही है
हमारे भीतर तीव्र अहोभाव उठ रहा है कि मैं एकाकी अनासक्त योगी हूँ। यहाँ मेरा कोई नही है और न मैं किसी का हूँ
किसका-किसकी और मेरा-मेरी के सारे सम्बन्धो एव सारे शब्दो से हमारी चेतना ऊपर उठ गई है

सम्बन्धों के क्षीण होते ही चेतना हल्की हो गई है ..
तीव्रतम भाव करें
अहो, एकाकीपन की मस्ती भी अजब है
यह आनन्द अद्भुत है .
यह असम्मत्व भाव का आनन्द अनवरत बना रहे
हमारी किसी भी पदार्थ पर ममता न रहे
हम अनासक्त योगी बने रहे
इसी भावात्मकता के साथ ध्यान से बाहर आ जाये .
प्रकृतिस्थ हो जाए अपनी चेतना को एकदम अनासक्त
एवं हल्का अनुभव करें



१६

द्वेष भाव : समीक्षण और निर्जरा

ध्यान मुद्रा वनालें
(प्रथम तीन प्रक्रियाओ को तीव्रतम निष्ठा के साथ दोहराए)
शरीर का पूर्णतया हलकापन अनुभव करें ·
मन के स्वच्छ-निर्मल हो जाने के भाव को गहरा वनाए
भाव करे
आत्मा एक दम उज्ज्वल होती जा रही है
हमने अपनी ध्यान साधना की अव तक की यात्रा मे अनेक विकारो-दुर्भावनाओ को वाहर निकाल दिया है
अभी भी हमारा यह क्रम चल रहा है
कर्म-मुक्ति के लिये हमे आत्मा से छोटे-वडे सभी विकारो को वाहर निकाल देना है
आज हम आत्मा के मूल-भूत दो शत्रु—राग और द्वेप मे से द्वेप को हटा देने को सन्नद्ध हो रहे हैं
जरा आत्म-समीक्षण करें
अपने अन्दर झाके
वहाँ द्वेप भाव कितने रूपो मे छिपा हुआ है·
आगमिक दृष्टि से आत्मा के मूल-भूत दो ही शत्रु है
जिन्हे ससार वृक्ष के वीज कहा गया है—"रागोय दोसो विय कम्म वीय" राग द्वेप ये कर्म वीज हैं
आत्मा को ससार मे वाँधने वाले भी ये दो ही तत्त्व हैं—
"दो हिं वधणे हिं राग वधणेण दोस वधणेण"
ये दो शत्रु है प्रवलतम शत्रु जो हमारी मुक्ति मजिल को प्रतिवन्धित कर रहे हैं ·
इन दोनो शत्रुओ मे से राग-ममत्व का निष्कासन तो हमने कर दिया है·
आज हम द्वेप भाव का विरेचन करेंगे
द्वेष-भाव को निकाल फेकने का प्रयास करेंगे
पहले हम अपने आत्म-प्रदेशो पर दृष्टि दौडाए कि द्वेप कव से और किन-किन रूपो मे हमारी आत्मा पर छाया हुआ है ·

अब हम आत्म प्रदेशो का समीक्षण कर रहे है
वहाँ हमे द्वेष के परमाणु सुस्पष्ट दिखाई दे रहे है
एक दिन, दो दिन या कुछ वर्षों के ही नही अनन्त-अनन्त काल के द्वेष भाव के पुद्गल हमारी आत्मा पर छाये है
वे ही पुद्गल हमारे मन मे द्वेष भाव उत्पन्न करते है·
हम देखे अपने मन के समस्त वैकारिक विचारो को
मन के आर-पार देखे
भाव करे · · हमे वहाँ तेरे-मेरे की अनेक भेद रेखाये सगीन दीवाले दिखाई दे रही है ·
वहाँ मुझ पर राग और तुझ पर द्वेष की प्लेटे लगी हुई है
हमे अपने अन्तर मन मे · उन दीवालो पर वे प्लेटे—नाम पट्ट स्पष्ट दिखाई दे रहे है·
आज तक कितने व्यक्तियो को, कितने पदार्थों को अपना मान कर हमने उन पर राग किया है ·
कितनो को पराया मानकर द्वेष किया है··
किन्तु क्या अपने, सदा अपने बने रहे है
क्या पराये सदा पराये ही बने रहे है
हमे अपने अतीत के चलचित्र मन के पर्दे पर साफ दिखाई दे रहे हैं ·
अतीत काल मे अनेकानेक आत्माओ एव पदार्थों को हमने अपना माना, किन्तु वे सभी काल के प्रवाह मे बह गये—पराये हो गये
आज उनके साथ हमारा कोई सम्बन्ध नही, जो राग के पात्र थे वे ही द्वेष के पात्र हो गये
आज जिन्हे हम पराया समझ कर द्वेष कर रहे है, वे कभी अपने बनकर राग के निमित्त बने रहे है
आगे भी कभी राग के निमित्त बन सकते है
फिर भी एक गहरा अज्ञान हमारी आत्मा मे छाया हुआ है, अत हमारा तेरे-मेरे का भाव समाप्त नही होता है·
आज हम इस भाव को समाप्त करने का प्रयास कर रहे है
भाव करे अभी हमारा जिन-जिन व्यक्तियो एव पदार्थो पर द्वेष भाव है वे व्यक्ति एव पदार्थ अभी हमारी दृष्टि मे आ रहे है
हम अन्तर्चक्षुओ से उनका साक्षात्कार कर रहे है·

जिसने हमारे साथ दुर्व्यवहार किया ... जिसने हमारा बुरा चाहा उसके प्रति हमारे मन मे द्वेष भाव बैठा हुआ है· ·
उस द्वेष भाव मे हम सदा उसके प्रति असत्सकल्पो से भरे रहते है· ·
और बुरे कर्मों का वन्ध करते रहते हे· ·
हम जिसे चाहते हे· · ·उस पर यदि कोई दूसरा व्यक्ति अधिकार जमा लेता है तो हम उसके प्रति द्वेष से भर जाते हैं·
कई वार उस द्वेष की ऐसी विकराल स्थिति वन जाती है कि उसकी हत्या तक को तैयार हो जाते हैं· ·
किसी ने हमारी प्रतिस्पर्धा मे खडे होकर हमसे अधिक प्रतिष्ठा कमा ली प्रतिद्वन्द्विता मे वह विजयी हो गया तो भी हमारा मन उसके प्रति द्वेप से भर जाता है· ·
हम किसी के प्रिय पात्र-चहेते वनना चाहते हैं और किसी दूसरे ने वह स्थान ले लिया तो हम उसके प्रति द्वेष करने लग जाते है·
इस रूप मे हमे अपने मन के पर्दे पर अनेक घटना चक्र दिखाई दे रहे हे·
इतने प्रसग हमारी दृष्टि के समक्ष चले आ रहे है कि हम आश्चर्य चकित है· ·
हमने कभी कल्पना भी नही की कि हमारे भीतर द्वेप की ऐसी गाठे पडी हुई होगी·
हमारा मन इतना विद्वेप पूर्ण भी हो सकता है, यह हमने कभी सोचा ही नही
ओ हो ! इस द्वेप भाव मे हमने कितनो के साथ अभद्र व्यवहार किया
कितनो को आर्थिक हानिया पहुँचाई ··
कितनो को मानसिक सक्लेश पहुँचाये
न जाने कितने व्यक्तियो को हत्याये करवा दी हैं ·
जन्म-जन्म के ये चित्रपट हमारी आँखो—अन्तर्चक्षुओ के समक्ष साफ झलक रहे है
हा, हा ! इन सभी दुर्वृत्तियो मे हमने कैसे चिकने कर्मों के वन्धन कर लिये है
क्या होगा हमारी इस आत्मा का
यह द्वेप हमे कितनी वार पशु योनि मे ले गया
कितनी वार नरक के दु खो मे ले गया
ओ हो ! अनन्त-अनन्त यातनायें इसने हमे दी हैं
और अव भी यह हमे कितनी योनियो मे भटकायेगा

नही-नही अब हम इस भटकाव को रोक देगे
अब हम इस द्वेष भाव को समाप्त कर देगे
अब हम इन विविध योनियो मे भटकने के प्रमुख कारण राग-द्वेष को समाप्त करने के लिये सन्नद्ध हो गये है

भाव करे

हमारे भीतर राग-द्वेष के विरुद्ध समत्व भाव का जागरण हो रहा है
हमारे अन्दर से तेरे-मेरे का भाव तिरोहित होता जा रहा है ·
भावनाओ का उद्रेक ऐसा बढ रहा है कि अन्दर के द्वेष के पर्दे फटते जा रहे है ·
भेद की दीवाले टूटती जा रही हैं
तेरे-मेरे की सब प्लेटे हट गई है
समस्त प्राणियो पर आत्मवत्, दृष्टि का जागरण हो रहा है
अब हमे कोई पराया लगता ही नही है· फिर किस पर द्वेष करे
हम से द्वेष करने वाला भी हमे हित-कर्ता ही लग रहा है
जिन पदार्थो के कारण मन मे द्वेष का जागरण हुआ वे सभी क्षणिक लग रहे है
इतना कुछ—क्षणिक पदार्थो के कारण किसी से द्वेष करना कहाँ की बुद्धिमत्ता है

भाव करे

हमारी प्रज्ञा पटु बन गई है अब उसमे आत्महित का बोध जागृत हो गया है
हम समस्त द्वेष भाव से ऊपर उठ रहे हैं ·
द्वेष के परमाणु आत्म-प्रदेशो से अलग हट रहे है

भाव करे

आत्म-प्रदेशो मे तीव्रतम कम्पन हो रहा है·
द्वेष के परमाणु सभी आत्म-प्रदेशो से अलग छिटक रहे है
वर्षो के चिपके परमाणु आज ऐसे झड रहे है जैसे कुत्ता अपने पूरे शरीर के चर्म को कम्पित करके लगी हुई धूलि को झाड देता है
जिन निमित्तो से हमारी आत्मा मे द्वेष उत्पन्न होता था वे निमित्त समाप्त हो गये है
हमारी चेतना मे समत्व भाव—वीतराग भाव गहराता जा रहा है

इन क्षणो न हमारा किसी पर राग है और न किसी पर द्वेष
प्राणिमात्र पर समत्व दृष्टि का जागरण हो गया है—अनुभव करें
आत्म-प्रदेशो से नीचे झड़े हुए द्वेष के परमाणु शरीर से बाहर निकल गये हैं
प्रत्येक रोम से पसीने की तरह वे बाहर चले गये हैं
हवा के तीव्रतम झोको से वे सब इधर-उधर उड़ गये हैं
अब कोई भी निमित्त हमारे मन मे द्वेष भाव का निर्माण नही कर सकता है
हमारी चेतना वीतराग भाव मे रमण कर रही है
अहा ! द्वेष और राग के विलीन होते ही चित्त वृत्तियो मे कैसी वीतरागता आ जाती है
और इस वीतरागता मे कैसी अनुपम मस्ती छिपी हुई है
इस वीतराग भाव मे कैसा अद्‌भुत आनन्द भरा है
कैसी अलौकिक शक्ति छा रही है हमारे भीतर
सारे दु खो के जनक तो राग-द्वेष ही हैं
राग-द्वेष गये कि वीतरागता आई
वीतरागता आई कि दु ख गये
हमारी सम्पूर्ण चेतना दु खातीत स्थिति का अनुभव कर रही है
इन क्षणो हम अनन्त-अनिर्वचनीय आनन्द मे लीन हैं
दु ख की कही कोई रेखा भी दिखायी नही देती है
ओ हो ! यह वीतराग भाव की रमणता बढती ही जा रही है
यह आनन्द बढता ही जा रहा है
हमारे चारो ओर आनन्द एव शान्ति की ही वृष्टि हो रही है
हमारा यह वीतराग भाव, यह आनन्द, यह अनासक्ति का भाव बढता ही चला जावे
हम राग-द्वेष से सदा दूर रहें
हमारे भीतर विश्व वात्सल्य का स्रोत बहता रहे
इसी भाव मयता के साथ ध्यान से बाहर आ जाये
प्रकृतिस्थ हो जाये
अपनी चेतना को अपने तन, मन, प्राणो को एकदम सहज, सरल, हलका अनुभव करें
आनन्द के सागर मे तैरते रहें

• ▭ •

१७

वासना : समीक्षण और निर्जरा

ध्यान मुद्रा बनाले
(प्रथम तीन प्रक्रियाओ को अनन्य तन्मयता के साथ
दोहराएँ)
भाव करे ·
शरीर सीमातीत हल्का हो गया है ·
ऐसा हल्कापन जो गुब्बारे मे भी नही है · ·
मन की वृत्तियाँ भी एकदम हल्की होती जा रही हैं ·
मन से बहुत कुछ भार नीचे उतर गया है · ·
मन के हल्केपन के साथ आत्मा मे ऊर्ध्वारोहण की शक्ति
बढती जा रही है ·
मन और आत्मा पर से बहुत कुछ बोझ हमने उतार
दिया है
किन्तु ज्यो-ज्यो पर्ते उघडती है त्यो-त्यो भीतर
नये-नये बोझ, नये-नये आवरण निकलते जाते है··
आज मन की अनेक पर्तों मे छिपी हुई एक सघन पर्त का
हम समीक्षण कर रहे है ·
ऐसी सघन पर्त—ऐसा सघन आवरण जो बडे-बडे योगियो
की साधना को धूल धूसरित कर देता है·
वे पर्ते है वासना की—विकारो की—इन्द्रियो के
आकर्षणो की
वासना के कीटाणु टी० बी० और कैन्सर के कीटाणुओ
से भी खतरनाक है जो हमारी आत्मा मे छिपे बैठे है
आज हम इन जहरीले कीटाणुओ का—इनकी प्रवृत्तियों
का समीक्षण करेंगे
इनकी भयकरता को समझने का प्रयास करेगे
और अन्त मे इन्हे निकाल फैकने का प्रयास करेंगे ·
सर्वप्रथम हम वासना की भयकरता को समझने के लिये
अन्तर मे नही, बाहर देखे और वह भी पुरातन
इतिहास के सन्दर्भ मे
हम जरा ऐतिहासिक एव प्रागैतिहासिक घटनाओ पर
दृष्टि डाले
इतिहास-महाभारत एव रामायण के ये पृष्ठ हमे स्पष्ट
दिखाई दे रहे है
वे दृश्य हमारी आँखो के सामने तैर रहे है जिनमे वासना

की आँधी ने कितना भयकर ताण्डव नृत्य किया है
कितने लोगो को मौत के घाट उतार दिया है एव कितनी ललनाओ को वैधव्य का दु ख भोगने को विवश कर दिया है
कितने बच्चो को अनाथ जैसी जिन्दगी जीने को बाध्य कर दिया है
ओहो ! इन्द्रियो की भोग-तृप्ति के लिये क्षणिक सुख के लिये इन्सान ने कितने और कैसे-कैसे जघन्य अपराध किये है
महाभारत काल के कीचक, दुर्योधन, कस, जरासघ एव शिशुपाल के काण्ड हमारे नेत्रो मे चमक रहे है
तो रामायण का रावण तो जन-जन के मुँह पर है
महाभारत एव रामायण के युद्ध वासना के क्षणिक आवेग के कारण ही तो हुए थे
क्या हुआ इन युद्धो मे
क्या किसी की वासना की पूर्ति हुई थी
लाखो के नर सहार के बाद भी क्या किसी को कुछ उपलब्धि हुई
अधिक दूर नही, निकट भूत के इतिहास को उठाकर देखे
चन्द बादशाहो की वासना-कामाग्नि के कारण जैसलमेर और चित्तौड के जौहर मे हजारो क्षत्राणियो को अग्नि की ज्वालाओ मे कूद जाना पडा
इतिहास के ऐसे हजारो उदाहरण हमारे सामने है
जो कामाग्नि के द्वारा होने वाले नर सहारो का खुला चित्रण हमारे सामने प्रस्तुत कर रहे है
किन्तु क्या इन घटनाचक्रो से हमारी आत्मा मे जरा भी कम्पन उत्पन्न हुआ है·
क्या कभी हमने इनसे कुछ भी सीख ली है
क्या आज भी हमारे मनो मे वही कामाग्नि की ज्वालाएँ नही सुलग रही है
अब हम इतिहास के उन घटनाक्रमो की ओर से दृष्टि को हटावे
अब जरा अपने अन्तरग का ही समीक्षण करे
भाव करे
हम अपने मन की पर्तो को देख रहे है
हमे मन मे उठने वाली अनेक तरगे स्पष्ट दिखाई दे रही है
अनुभव करे

हम मन के आर-पार देख रहे है
अभी हमारी दृष्टि मन की वासनात्मक तरगो पर अधिक दौड रही है
अभी हमारे मन मे वासना का उदय नही है…
अभी तक केवल वासना की पर्तो के द्रष्टा बने हुए है
ओहो ! हमे अपने मन मे वासना की कितनी पर्ते दिखाई दे रही हे

हमारा मन कितना विद्रूप बना हुआ हे·
रूप-सौन्दर्य की वासना और रस गन्ध की वासना कोमल गुदगुदी भरे स्पर्श सुखो की वासना, मधुर-कर्णप्रिय गीत सुनने की वासना—काम-विकार के स्मरण की वासना, न जाने कितने प्रकार की वासनाओ की पर्ते चढी हुई हैं हमारे मन के ऊपर ·
मधुर शब्दो की झकार सुनते ही कान कितनी तेजी से उस ओर खिच जाते है, मन कितना आकृष्ट होता हे उस ओर
अरे, यह चमडे का गोरापन—रूपछटा नेत्रो को कितनी लुभावनी लगती है
मन कितना हर्षित होता है इस क्षणिक सौन्दर्य को देखकर—स्पर्श सुखो के लिये तो यह बार-बार दौडता ही रहता है
कैसी-कैसी अगणित कामनाओ से भरा है यह मन
अनुभव करे
इन कामनाओ ने कितने जीवनो को नष्ट किया है
कितने परिवारो मे आग लगाई है
यह सब हमारी इस आत्मा ने भी अनन्त बार किया है· ·
उन कलुषित कर्मों के जो दाग इस आत्मा पर लगे है
वे बहुत गहरी जडे जमाए हुए है
अब हमे इन जडो को ढीला कर देना है··
भाव करे
अब हम अपने मन को उघाडने का प्रयास कर रहे है
अन्दर जमे हुए वे विषैले परमाणु हमे स्पष्ट दिखाई दे रहे है
मन पर जमी वासना की पर्तो मे बडी भारी उथल-पुथल मच गई है·
आज-कल-परसो के नही, कुछ वर्षों के नही, जन्म-जन्म के वैकारिक सस्कार उभरकर ऊपर आ रहे है
हमे यह देखकर आश्चर्य हो रहा है कि वासना के कितने पुराने और गहरे सस्कार पडे हुए है हमारे मन पर

अभी हम चिर अतीत के सस्कारो को गौण कर निकट भूत के सस्कारो को देखे
भाव करें
हमे अपने भीतर वासना का एक जाल-सा बना दिखाई दे रहा है
कितनी नारियो-पुरुषो के सौन्दर्य दर्शन के द्वारा बने वासनात्मक सस्कार मन पर पडे हुए है
इन क्षणो उन सस्कारो मे दबी अनेक रूप छटाएँ उभर कर हमारे सामने आ रही हैं
ओहो । कितनो बार कितना विकृत बना है हमारा यह मन
इसकी विकृतियो का कोई ओर छोर ही नही है
एक के बाद एक सौन्दर्यमयी—लावण्यमयी आकृतियो के चित्र हमारे अन्तर्‌चक्षुओ के सामने से चित्रपट के समान गुजरते जा रहे है
स्मरण रहे
अभी हम इन आकृतियो के द्रष्टा मात्र हैं
द्रष्टा ही नही एक-एक आकृति को उठा-उठाकर मन से अलग हटाते जा रहे हैं
भाव कर
सभी आकृतियाँ हमारी आँखो के सामने से विलीन होती जा रही है
एक-एक सस्कार हमारी आत्मा से मिटता जा रहा है
देखे
हमारे मन पर बहुत समय से प्रभाव जमाए हुए सभी रूप छटाएँ सहसा गायब हो गई है
मानो बहुत रसीला पिक्चर यकायक गायब हो गया हो
रूप ही नही, इन्द्रियो के सभी आकर्षण क्षीण होते जा रहे है
सकल्प करे विकार विजय का तीव्रतम भाव हमारी चेतना मे उत्पन्न होता जा रहा है
ब्रह्मचर्य की ओजस्विता का भाव गहराता जा रहा है
ब्रह्मचर्य की ऊर्जा का पवित्र भावो के रूप मे जागरण हो रहा है
अनुभव करें
ओजस की शक्ति सम्पूर्ण शरीर की नस-नस मे सरसराहट के साथ दौड रही है
यह शक्ति एक प्रकार की प्रबल शक्ति सम्पन्न

औपधि है''
या वह अमृत ही है'
वासना के जहरीले कीटाणुओ के साथ वह सघर्ष करने मे
समर्थ है
तत्पर है''
भाव करे
सम्पूर्ण शरीर मे जैसे रक्त सचार की गति तीव्र हो
गई हो''
हमारे अन्तरग मे एक गहरा सघर्ष छिड गया है
द्वन्द्व युद्ध छिड गया हे
वासना के जहरीले कीटाणु भी कम शक्तिशाली
नही है
अनादिकाल से उन्होने आत्मा पर प्रभाव जमा
रक्खा है
इसकी सारी शक्तियो को दवोच रक्खा हे
आत्मा ज्योही उससे सघर्प करने को तत्पर होती है कि
वह अनेक रूपो मे वडे प्रभावशाली ढग से उसे पराजित
कर देता है
वासना का कोई एक ही रूप तो नही है '
न जाने कितने रूपो मे वह हमला करती हे
इन्द्रियो के विपयो के रूप मे, मन के विकारो
के रूप मे
पूर्व के कामयोगो के सस्मरण के रूप मे
दृष्टि राग के रूप मे
स्पर्श सुखो की कामना के रूप मे
और भी अगणित रूपो मे यह जहरीली ज्वाला भडकती
रहती है और अनन्त शक्ति सम्पन्न आत्मा को भी परास्त
करती रहती है
आत्मा की समस्त शक्तियो के जागरण मे सबसे बडी
बाधा है—वासना
यह शारीरिक-मानसिक सभी शक्तियो के विकास को
अवरुद्ध कर देती है
इन्द्रियाँ स्वरूपोन्मुख होती है—दृष्टा बनती है कि यह
वासना उन्हे भोक्ता बना देती है
मन अध्यात्म की दिशा मे आत्म-स्वरूप के चिन्तन मे
लगता है कि वासना उसे अपनी ओर खीच लेती है
वीर्यक्षय के रूप मँ यह शरीर की मूलभूत शक्ति को क्षीण
कर देती है
यह वासना न उत्तम चिन्तन करने देती है और न उत्तम

आचरण
ध्यान-मौन, त्याग-तप आदि सभी प्रकार की साधना की
यह अर्गला है
शील की तो यह परम शत्रु ही है ·
बड़े-बड़े साधक इसमें परास्त हो गए
विश्वामित्र जैसे हजारो वर्षों के साधक वासना के क्षणिक
आवेग मे—मेनका के कटाक्षो मे फँस गए
यही नही, रथनेमी जैसी चरमशरीरी आत्मा भी अपनी
सुरक्षा नही कर पायी
हल्के से निमित्तो ने उन्हे मानसिक विकारो की ओर
खीच लिया ·
इन सभी स्थितियो के आधार पर क्या यह निर्णय करलें
कि वासना पर विजय हो ही नहीं सकती है ·
नही-नही हमारे पास ऐसे सैकडो उदाहरण हैं
जो यह सिद्ध करते हैं कि वासना पर विजय प्राप्त करना
हमारे हाथ मे है
देखे जरा इतिहास के पृष्ठो को
भाव करे ·
हमारे सामने विजय कँवर और विजया कुवरी की
ब्रह्मचर्य साधना साकार हो रही है
दाम्पत्य जीवन में रहते हुए एक ही कक्ष मे रहते
हुए उन्होने प्रतिज्ञाबद्ध होने के कारण कैसी अखण्ड
शीलव्रत की आराधना की थी
अरे उन स्थूलिभद्र महा श्रमण के घटना प्रसग को तो
देखे
जिस वैश्या के यहाँ वर्षो तक भोग वासना मे रस लिया
वही अडोल ब्रह्मचर्य की साधना
कितने कठिन क्षण थे वे जिनमें वैश्या ने विचलित करने
म कोई कसर नही रक्खी· · किन्तु
आत्म-विजेता, विकार-विजेता स्थूलिभद्र के मन का
अनन्तवाँ भाग भी तो कम्पित नही हुआ
धन्य है उन आत्मजयी महामुनि प्रवर को ·
अरे ! उस भ्रातृभक्त लक्ष्मण की ओर तो देखे
कितना सयम था उसका अपनी दृष्टि पर
चौदह वर्षों तक महारानी सीता के साथ रहने पर भी
कभी पैरो की पायलो के अतिरिक्त किन्ही अग-आभूषणो
पर दृष्टि तक नहीं डाली
जिसका नाम इतिहास के पृष्ठो पर स्वर्णाक्षरो म
अकित है

उस महायोगी लक्ष्मण को इन क्षणो मे अवश्य स्मृति-पटल पर ले आएँ
वह महा वैरागी अप्रतिम त्यागी था —'जम्बूकुमार' अरे
अभी जिसने यौवन की देहलीज पर पाँव रक्खा ही था' '
आठ-आठ रमणियाँ रूपगर्विता पोडषियाँ अप्सराओ-सा सौन्दर्य लिये सामने बैठी है
कामदेव-सा रूप लिये उस आदर्श त्यागी युवक को विचलित करने का भरपूर प्रयास कर रही है'
अपने हाव-भाव एव कटाक्षो के तीखे वाण फेक रही है
अनेको उदाहरणो के द्वारा समझाने का कार्य कर रही है
किन्तु किन्तु युवा खून मे कही वासना का उवाल भी आया ???
कही मन के किसी कोने मे भी राग भाव उत्पन्न हुआ ??
क्या भोग वासना के प्रति कोई क्षीण रेखा भी उसके मन पर उभरी
अरे ! वह नरपु गव स्वय तो अनासक्त योगी वैरागी बना ही रहा
अपनी उस ब्रह्मचर्य की ओजस्विता से उसने उन पोडशियो को भी विरागी बना दिया—
त्यागी साधिका बना दिया
यही नही
उस युवा ब्रह्मचारी ने अपनी तेजस्विता से पाँच सौ चोरो को, क्रूरहृदयी क्रूरकर्मा लोगो के मानस को बदल दिया"
उन्हे सयम साधना जैसी उच्च भूमिका पर आरूढ कर दिया
धन्य है
लाख-लाख धन्य है उस महामुनि को, जिसने अरबो की सम्पत्ति और चारो ओर बिखरी मोहक सामग्री को ठोकर मार दी
वासना पर उसके उभार के पूर्व ही नियन्त्रण साध लिया '
यौवन के विस्फोट के पूर्व ही आत्म-समाधि मे लीन हो गया
सम्पूर्ण यौवन को साधना का हुताशन बना दिया
अहा ! चारित्र निष्ठा एव आत्म जागृति की कैसी उज्ज्वल मिसाल है यह !!!
अरे ऐसे एक-दो नही सख्यातीत उज्ज्वल चारित्रशील

नर रत्नो के उदाहरण हमारी आँखो के सामने तैर
रहे है
भाव कर
ये सब घटनाक्रम अभी हमे जीवन्त से दिखाई दे रहे हैं ··
इन घटना चक्रो के परिप्रेक्ष्य मे हम अपने अन्तर मे
झांककर देखें
क्या हमारी चेतना मे वह क्षमता, वह सामर्थ्य तेजस्विता
नही है कि हम भी अपने ओजस् को ऊर्ध्व दिशा दे सके · ·
अपनी शक्ति को वासना के क्षण मे जाते हुए बचा सके ··
अरे! इन नरपुगवो ने जो कर दिखाया, हमारी
महतारियो-शीलदेवियो ने तो इससे बढकर चारित्र,
निष्ठा एव शील-सुरक्षा के सस्मरण हमारे सामने
प्रस्तुत किये है ··
भाव करे ·
महारानी धारणी का वह दृश्य हमारी आँखो के सामने
तैर रहा है, जिसमे उसने अपनी लाडली बेटी वसुमती
(चन्दनबाला) को पाठ पढाने एव अपनी शील-सुरक्षा
हेतु जीभ खीच रथी के सामने आत्म-बलिदान
कर दिया
यह देखें

हमारी आंखो के सामने दूसरा चित्र उभर रहा है
महासती राजीमती का
मन से अरिष्टनेमि का वरण कर लेने के बाद भी ब्रह्मचर्य
की अखड साधना करने वाली राजीमती अरिष्टनेमि के
लघुभ्राता रथनेमि को क्षीर का वमन करके वह कटोरा
रथनेमि के सामने प्रस्तुत कर रही है
देखें तो उस महानारी की तेजस्विता को वह धिक्कार
रही है उस रथनेमि को
देखें हम अपने अन्तर् चक्षुओ से देखें
उस महान् साध्वी का दूसरा चित्र हमारे सामने आ
रहा है
वह गुफा मे ध्यानस्थ बैठे अस्थिर चित्त रथनेमि को
फटकार रही है
वह कह रही है इससे तो तेरा मर जाना श्रेष्ठ है
उस महासती सीता की शील निष्ठा के चमत्कारो को
भी तो देखें
वह अग्नि मे कूद रही है और आग-जल के रूप मे बदल
रही है
द्रोपदी का चीर हरण भरी सभा मे हो रहा है और

उसका शील उसके लिये सुरक्षा कवच बन गया है ··
अरे ! एक-एक महान् चित्र हमारी आँखों के सामने उभरते जा रहे है
अभी हम उस समुज्ज्वल चरित्रशीला मदनरेखा का चित्र देख रहे है
अपने ही ज्येष्ठ मणिरथ के मलिन विचारो से अपने को बचा लेने को उसने कितने कष्टो के पहाड अपने सिर पर झेले है
ओहो ! उन शील की देवियो—महान आत्माओ मे कितनी अपूर्व क्षमता थी, कितना ओजस् था
क्या हमारे भीतर वह सामर्थ्य नही है कि हम वासना के इन तूफानो मे अपने को स्थिर रख सके ...
नही, नही हमारे भीतर भी वही शौर्य, वही बलिदानी सकल्प और वही ओजस्विता छिपी हुई है
इन उज्ज्वल चरित्रो के चित्र हमारी नसो मे घूम रहे है
इतिहास के पृष्ठ हमे गहरे सदेश दे रहे हैं....
हमने अभी तक अपने सामर्थ्य को भुला रक्खा था
आज हम अपनी अनन्त आत्म-शक्ति का बोध प्राप्त कर रहे है ·
हमारे भीतर एक ऊर्जस्विल विश्वास जागृत होता जा रहा है
भाव करे ·
अन्तरग मे आत्म-विश्वास की उर्जा जागृत हो गई है···
हमारे वीर्य-ओजस्व ने ऊर्ध्व दिशा पकड ली है· ·
आज तक वह अधो-निम्न दिशा की ओर प्रवाहित हो रहा था
अनुभव करे
अभी तक हमारी ब्रह्मचर्य की शक्ति वासना मे बहती जा रही थी
अनेको प्रकार के विकारो ने हमारी चेतन-शक्ति को क्षीण कर दिया, पगु बना दिया था· किन्तु अब·
अब हमारी चेतना मे एक गहरे विश्वास का जागरण हो गया है
अब हमारी शक्ति ध्यान साधना के द्वारा ऊपर की ओर उठने लगी है
अब वासना के परमाणु हमे प्रभावित नही कर सकते है·
अब हमारी शक्ति का क्षरण नही हो सकता है····

भाव करें ·
अभी हमारे भीतर तुमुल संग्राम हो रहा है
वासना अर्थात्—विष, वीर्य-ओजस् अर्थात् अमृत याने
जहर और अमृत का संघर्ष हो रहा है हमारी
आत्मा में
यों तो यह संघर्ष-द्वन्द्व युद्ध अनेकों बार चलता है किन्तु
आज का यह संघर्ष अपूर्व है
सदा-सदा इस संघर्ष में ब्रह्मचर्य की शक्ति-आत्मशक्ति
परास्त होती चली आयी है
किन्तु आज आज बात उलट गई है, आज वासना के
जहरीले कीटणु क्षीण होते जा रहे हैं ·
परास्त होते जा रहे हैं
आज आत्मा में अपूर्व तेज का जागरण हुआ है
ऐसा तेज जो अभूतपूर्व है
अनुभव करें
रक्तवाहिनी नाडियों में बहुत तेजी से सरसराहट चल
रही है
रक्त की गति में तीव्र प्रवाह का अनुभव करें
अब तक हमारे रक्त में कामुकता के जहरीले कीटाणु
भरे हुए थे
अब वे क्षीण होते जा रहे हैं
अब हमारे रक्त में ओजस् शक्ति का संचार हो
रहा है
भाव करें
अभी हमारा रक्त परस्पर दो विपरीत दिशाओं में
बह रहा है
वासना के विषैले कीटाणु ऊपर की ओर उठना
चाहते हैं
भावनाओं में उत्तेजना उत्पन्न करना चाहते हैं
किन्तु ब्रह्मचर्य की शक्ति के पवित्र विचारों के अमृतकण
उन्हें ऊपर उठने नहीं दे रहे हैं
वे उन्हें नीचे की ओर धकेल रहे हैं ·
हम इस संघर्ष का अपने रक्तवाही संस्थानों में साक्षात्
अनुभव कर रहे हैं
सदा-सदा से विजय का अट्टहास करने वाले वे कीटाणु-
परमाणु आज परास्त हो रहे हैं
वे अभी चमडी के इर्द-गिर्द इधर-उधर चिपक कर छिप
जाना चाहते हैं
वे अपनी सुरक्षा का प्रबन्ध करना चाहते हैं…

इन्द्रियाँ एव मन के माध्यम से अनेको बहाने ढूँढ रहे है
किन्तु आज ध्यान साधना के द्वारा उत्पन्न उस ब्रह्मचर्य
की निष्ठापूर्ण शक्ति ने, उस ओजस् ने अपना पूरा
सामर्थ्य जुटा लिया है
आज वह शक्ति उन्हे समूल नष्ट करने के लिये
कृत-सकल्प है
देखे अपने अन्तरग मे अनुभव करे
सघर्ष बढता जा रहा है
उस अमृत-ओजस् की शक्ति प्रचण्ड रूप धारण करती
जा रही है
वासना के जहरीले कीटाणुओ मे खलबली मच गई है
भाव करे
आत्मप्रदेशो मे तीव्रतम कम्पन उत्पन्न हो रहे है
हमारी समस्त चेतना मे अत्यधिक सक्रियता का सचार
हो गया है
वह अब वैकारिक कीटाणुओ को निकाल फैकने के लिये
सन्नद्ध हो गई है
सकल्प करे
वह वीर्य-शक्ति बडी तेजी से हमारी नसो मे दौड
रही है

वासना के कीटाणुओ को उसने एकदम परास्त कर
दिया है
वे सारे कीटाणु नीचे खिसकने लगे है
भाव करे
वासना के समस्त परमाणु मूलधार चक्र पर एकत्रित
हो रहे है
अब हमारी चैतन्य शक्ति ने ब्रह्मचर्य की ऊर्जा ने उनके
बाहर भागने के समस्त द्वार रोक दिये है
वे सभी पुन सामूहिक शक्ति के रूप मे एकत्रित होकर
चेतना पर हमला बोल देना चाहते है....
किन्तु अब उनकी शक्ति क्षीण हो गई है
अब वे सामर्थ्यहीन नि सत्व हो गए है
यह मनोवैज्ञानिक सिद्धात है कि अल्पबल वाला अधिक
बल वाले के रूप मे बदल जाता है
वासना के समस्त जहरीले कीटाणु रूपान्तरित होते जा
रहे है
जो शक्ति वासना के माध्यम से नीचे को ओर बह रही
थी अब वह ऊपर की ओर उठने लगी है
भाव करे

मूलाधार चक्र से, जो नाभि के नीचे पेडू के निकट है,
शक्ति का ऊर्ध्वारोहण हो रहा है
काम-वासना मे बहने वाली शक्ति साधना मे ऊपर
उठ रही है
रीढ की हड्डी-मेरुदण्ड के बीच सुषुम्ना नाडी मे होती
हुई वह शक्ति ऊपर की ओर बढ रही है
वीर्य का ऊर्ध्वगमन हो रहा है
वह ओज हमारी चेतना मे भव्य ओजस् का निर्माण
कर रहा है
अनुभव करे
अब हमारी वासनाएँ क्षीण हो गई है
वीर्य शक्ति-ब्रह्मचर्य की शक्ति परमात्म दिशा की ओर
बढ रही है
अब हमे वासना के कैसे भी उत्तेजक निमित्त मिले,
हमारे भीतर वासना जागृत नही हो सकती है
आज की इस ध्यान साधना के द्वारा हमारी आत्मा मे
अपूर्व अभूतपूर्व शक्ति का जागरण हुआ है
हमारी चेतना अपूर्व उल्लास-अभूतपूर्व आनन्द से
भरती जा रही है
ओहो, हम अपने शरीर को कितना हल्का अनुभव
कर रहे है
हमे अपने आपमे कैसी अद्भुत शक्ति का अनुभव
हो रहा है
ब्रह्मचर्य की शक्ति अद्भुत है अनुपम है
अनिर्वचनीय है
हमे अपने भीतर ऊर्जस्विलता-ओजस्विता का अनुभव
हो रहा है
हम अब विकारो मे सर्वथा अलग हट गए है
ऊपर उठ गए है
हमारी चेतना आनन्दमग्न हो रही है
ऐसा अदभुत आनन्द कभी भी अनुभूत नहीं हुआ
हमारा यह आनन्द निरन्तर बढता चला जाय, हमारा
यह हल्कापन सदा-सदा बना रहे
इस भाव स्पन्दन के साथ
इस उल्लासपूर्ण तन्मयता के साथ ध्यान से बाहर आ
जाएँ
स्वस्थ प्रकृतिस्थ हो जाएँ
अपने तन-मन-प्राण सभी को हल्का, प्रफुल्लित,
आनन्दपूर्ण अनुभव करे



१८

कर्मबन्धन की प्रक्रिया का समीक्षण

ध्यान मुद्रा वनाले····
(प्रथम तीन प्रक्रियाओ को अतीव भाव प्रवणता के साथ दोहराए)
अपने तन-मन को एकदम पूर्ण रूप से हल्का भार रहित अनुभव करे, भाव करे
शरीर एकदम हल्का हो गया हे
मन मे भी हल्कापन लग रहा है
आज हम मन को भारी वनाने वाले कर्मो का उनके बन्धन की प्रक्रिया का समीक्षण कर रहे है
आज हम यह देखने का प्रयास करेगे कि आत्मा ससार मे क्यो भटकती है
यह नित नये वन्धन मे क्यो बँधती हे
यह कर्मबन्धन क्या है और किस रूप मे होता है
आत्मा को कर्म बन्धन से कैसे वचाया जा सकता है·
भाव करें
अभी हम आत्मप्रदेशो को साक्षात् देख रहे है· ·
वहाँ कर्मो के स्तर के स्तर जमे हुए है ·
प्रतिपल नये कर्म भी बँधते जा रहे हैं
देखे ये कर्म आत्मा के प्रति कैसे आकृष्ट होते हे और कैसे उसके साथ चिपक जाते है
अनुभव करे
हमे अपने मन के स्पन्दनो का अनुभव हो रहा है
हमे वचन और काया के स्पन्दनो का अनुभव हो रहा है
हमे वचन और काया के स्पन्दनो का प्रत्यक्ष बोध हो रहा है
ये तीनो योग है ·मन, वचन, काया की प्रवृत्ति ही तो योग है और यही आश्रय है
अभी हम कर्मो के आगमन की प्रक्रिया का स्पष्ट अनुभव कर रहे है
वे कर्म कही दूर से नही आ रहे है
वे कर्म हमारे आत्म-प्रदेशो के ही अति निकट स्तर के स्तर भरे पडे है, उनमे प्रतिपल तीव्रतम हलन-चलन चलती ही रहती है

मन, वचन, काया के स्पन्दनात्मक योग की प्रवृत्ति के कारण वे आत्मा के साथ खिचते चले जाते है

हमारे मन मे हमारे आत्म-प्रदेशो मे रही हुई कषाये उन्हे आत्मा के साथ चिपकने मे सहयोग करती है

भाव करें

हमे आत्मा मे कषायो की चिकनाहट दिखाई दे रही है

जैसे घृत अथवा तेल की चिकनाई वाला घडा हवा मे पडा हो उस पर हवा के द्वारा उड-उडकर धूलि आ-आकर जम रही हो

उसी प्रकार आत्मघट पर कषायो की चिकनाई लगी हुई है

मन, वचन, काया के योग की हवा चल रही है और कर्म परमाणु रूपी धूलि उस चिकनी आत्मा पर चिपक रही है

हम अभी अपने काषायिक भावो को देख रहे है

उस चिकनाई से बधने वाले कर्म परमाणुओ को भी देख रहे है

अनुभव करें

यह कर्म बन्धन की सूक्ष्म प्रक्रिया हमारी आखो के सामने हो रही है, हमे अन्त समीक्षण के द्वारा इस प्रक्रिया का साक्षात् अनुभव हो रहा है

देखें अपने अध्यवसायो को देखें

उनमे क्षण-क्षण मे होने वाले परिवर्तन को देखें

भाव करें

हमारे अध्यवसाय-विचार ज्यो-ज्यो बदलते है, त्यो-त्यो कर्म-बन्धन मे भी परिवर्तन आ रहा है

अशुभ अध्यवसायो से बन्धने वाले कर्म कितने भद्दे प्रकार के है

आने वाले, चिपकने वाले कर्म परमाणु की शुभ्रता लिये हुए है—
अहा · ··कितने शुभ-पुण्य कर्मों का आगमन हो रहा है
आत्मा मे निर्मलता बढती जा रही है
कर्म-बन्धन अवश्य हो रहा है
हम उसे देख रहे है
किन्तु यह बन्धन आत्मा को भारी बनाने वाला बन्धन नही है, यह चिकनाई जो आत्मा पर लगी हुई है वह भी शुभ ही लग रही है, हमे आत्मा के साथ बँधते हुए कर्म दिखाई दे रहे है
यह सब इन चर्म चक्षुओ का विषय नही है
हम अपनी अन्तर् आखो से देख रहे है ·
हमे अपनी आत्मा के साथ कर्म-बन्धन होता हुआ उसी प्रकार दिखाई दे रहा है जैसे आग मे तपे हुए लोह गोलक को पानी मे डाल देने पर वह पानी को चारो ओर से अपनी ओर खीचने लगता है
'अव्व सव्वेण बवइ ।' के आगम सूत्रानुसार हम देख रहे है आत्मा मे चारो ओर से कर्मों का आश्रय हो रहा है, और सम्पूर्ण आत्मप्रदेशो मे कर्मों का बन्धन हो रहा है
भाव करे
बँधते हुए कर्मो मे पडने वाली भेद रेखाओ को भी हम देख रहे है
देखे सूक्ष्मता पूर्वक देखे ·
उन कर्मों मे कुछ कर्म परमाणु ज्ञानावरणीय के रूप मे रूपान्तरित होकर आत्मा के ज्ञान गुण को ढकते जा रहे है
हमारे अध्यवसायो-विचारो के अनुसार कर्म परमाणुओ मे रूपान्तरण हो रहा है
जैसे-जैसे भाव-विचार वैसे-वैसे कर्म बन्धन
हमारे विचार-अध्यवसाय ही तो कर्म बन्धन का मूल हेतु है
कषायो की तारतम्यता ही तो कर्मों की स्थिति एव फलदायक शक्ति मे तारतम्य उत्पन्न कर देती है
हम अपने भावो, विचारो, काषायिक परिणामो को देखे
उनमे जैसी तीव्रता-मन्दता है वैसी ही तीव्रता मन्दता कर्म परमाणुओ मे बन रही है
भाव करे
हमारे भावो मे ज्ञान-सामान्य ज्ञान मे अश्रद्धा-उपेक्षा का भाव बन रहा है

हम दूसरों के ज्ञान में ईर्ष्या या बाधक बनने का विचार कर रहे हैं, ज्ञान के साधनों की या ज्ञानदाता गुरु की अवज्ञा कर रहे हैं

और हमारे बंधने वाले कर्मों में ज्ञान, दर्शन, आत्मा के मौलिक गुण को ढकने की तीव्रतम शक्ति उत्पन्न हो रही है

देखें भाव प्रवणता में देखें

कैसे सघन आवरण हमारी आत्मा पर चढ रहे हैं

मानो उसकी ज्ञान-शक्ति के प्रकाश पर पर्दे पडते जा रहे हैं

हमारी चेतना का ज्ञान-प्रकाश मंद-मंद पडता जा रहा है

इस प्रकार ज्ञानावरण एवं दर्शनावरण के आवरणों का हम स्पष्ट रूप में अनुभव कर रहे हैं

अब फिर हम अपने अध्यवसायों-विचारों को देख रहे हैं भाव करें

हमें उनमें दूसरों को दु ख देने की यातना-पीडा पहुँचाने की कलुषता दिखाई दे रही है

ओ हो ! कैसे दूषित विचार हैं हमारे

हम दूसरों को रुला कर खुश होते हैं

दूसरों को सताकर, पीडित देखकर हमें प्रसन्नता होती है

ये परिणाम ही तो असाता वेदनीय कर्म बन्धन के कारण

वे शुभ्रता लिये हुए है, ये अपने परिणाम मे हमे साता-सुख-समृद्धि देने वाले होगे·

हम इन वन्धने वाले कर्म परमाणुओ को भी देख रहे हैं·

इन्हे देखने वाली दृष्टि है समीक्षण की

अभी हम अपने मे विचारो की निर्मलता एव हल्केपन का अनुभव कर रहे है, अरे यह क्या, हमारे विचारो मे पुन एकदम मोड आ गया है

विचारो मे राग-द्वेष की काली धाराए वहने लगी है· ·

प्रवलतम मोह भाव-विकार-भाव का जागरण हो रहा है·

हमारी आत्मा मे

ओ हो, अभी हम कितने कलुषित विचारो मे वहने लगे है

अभी हमारी चेतना मोहान्ध ही वन गई है·

इस समय हमारे अध्यवसाय अपनी आत्मा पर भी निष्ठावान् नही रहे है··

शुद्ध देव, गुरु, धर्म पर भी हमारे विचारो मे कितनी उपेक्षा भर गई है, हम परम आराध्य अरिहन्त देव, मार्ग द्रष्टा गुरु एवं शिव सौख्य प्रदाता धर्म की भी अवज्ञा-आशातना कर देते है

अरे, ये ही तो दर्शन मोह कर्म-वन्धन के कारण है

दर्शन मोहनीय कर्म ही तो हमे सम्यक्त्व वोध से वचित कर देता है

हा, हा, कैसे आवरण छा रहे है, हमारी आत्मा पर, हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं, इन सघन आवरणो को· ·

अनुभव करे

हमे अपनी सन्मति पर चढते हुए आवरण दिखाई दे रहे है

आत्मा मे स्वरूप-बोध की क्षमता क्षीण होती जा रही है

अरे, रे, यह क्या· ·

हमारी आत्मा मे तो तीव्रतम कषायो का उदय हो रहा है

क्रोध, अहकार, छल, दम्भ, लोभ, लालच, अनेक काषायिक विकारो का हमला हो गया है, हमारे मन पर

एक तीव्रतम कम्पन हो गया है—मानसिक, वाचिक, कायिक वृत्तियो मे

आत्मा मे एक उथल-पुथल मच गई

और अब जो कर्म परमाणु आत्मा के साथ खिच रहे है

बँध रहे है, वे है मोहनीय कर्म
आत्मा को ज्ञान-चारित्र हीन बना देने वाले कर्म।
यह मोहनीय कर्म ही तो राग-द्वेष की परिणतियों के द्वारा ममता के बन्धनों मे बांधता है
यही तो अनन्त काल तक ससार भ्रमण का कारण बनता है
यही तो सब कर्मो का राजा कहलाता है
अपने-पराये के भेद इसी के कारण तो खडे होते है
भाव करें
हम कर्म परमाणुओं को मोह के रूप मे आत्मा के साथ सश्लिष्ट होते हुए देख रहे है
हमे आत्मा की वीतराग अवस्था पर एक सघन आवरण आता हुआ दिखाई दे रहा है।
अहा, कितनी सूक्ष्म प्रक्रिया है, कर्म बन्धन की।
आत्मा पर एक मोहक जाल फैलता जा रहा है
आत्मा शराबी की तरह या मदोन्मत्त हाथी की तरह प्रमत्त बनती जा रही है
उसे अपने हिताहित का भाव भी नही रहा है
अभी हम देख रहे है, अपने आगामी जन्म का आयुष्य बँधते हुए हमारे अध्यवसाय चलचित्र की भाति बदलते जा रहे है।
क्षण भर पूर्व अध्यवसायो मे जो निवृत्ति थी, अब वह नष्ट हो गई है
अब भाव-विचार निर्मल-पवित्र हो गए है
इन क्षणो हम साधना मे रममाण हो रहे है
साधना के ये उन्नत विचार देवयोनि के आयुष्य बन्ध के उत्प्रेरक निमित्त बन रहे है
अभी हम सागरोपम की स्थिति तक के उच्च देवलोक के आयुष्य सम्बन्धी कर्मदलिको का बन्धन कर रहे है
अहा हम अभी अपना जीवन साधक हुआ सा लग रहा है
हमने उच्च गति-देवगति का आयुष्य बंध कर लिया है

नाम कर्म की शुभ पुण्य प्रकृतियो का ही बन्ध हो रहा है

गौत्र कर्म भी उच्च ही बन्ध रहा है

अभी हमारी चेतना मे शुभ भावो का ज्वार आ गया है

और सभी शुभ-पुण्य प्रकृतियो का ही बन्ध हो रहा है

अशुभ प्रकृतिया बन्ध तो रही है किन्तु उन्हे कर्म परमाणुओ का हिस्सा बहुत कम मिल रहा है

शुभ आयु, शुभ नाम और शुभ गौत्र कर्म के परमाणु आत्मा पर चिपकते जा रहे है

अरे ! यह कैसा हवा का झोका आया

चित्रपट एक दम बदल गया

विचारो की-अध्यवसायो की धारा मे एकदम परिवर्तन हो गया

विचारधारा मे हठात्-अशुभता आ गई, अरे ये कैसे विचार

ये तो किसी दीन-अनाथ को दान देने मे रुकावट डालने वाले कुत्सित विचार हमारी आत्मा मे उत्पन्न हो रहे है

ओ हो ! दूसरो की उपलब्धियो मे बधक बनने मे मन को बडा आनन्द मिल रहा है

दूसरो के चारित्र विकास मे, सयम साधना के भावो मे गिरावट लाने मे कैसा रस आ रहा है इस मन को··

और इन परिणामो से जो कर्म-बन्ध हो रहा है वह है अन्तराय कर्म

अन्तराय कर्म के बन्धन को भी हम देख रहे है

हमारी दान-लाभ-भोग उपभोग एव वीर्य की शक्तिया दबती जा रही है

आत्मा की चारित्रिक विकास की शक्ति पर पराक्रम फोडने की शक्ति पर आवरण [illegible] रहे है

दान देने की भावनाए क्षीण [illegible] है

दबती जा रही है

ओ हो ! यह कैसा [illegible] धन,

के द्वार बद कर [illegible]

भाव करे

हमे आत्मा पर आ[illegible]

रहे है

आज हमने कर्म-बन्ध[illegible]

है

आज की हमारी ध्यान-

रही है

आज हम ध्यान की अत्यन्त गहराई में पहुँचे हैं
हमने आत्मा के आर-पार-कर्म परमाणुओं की हलन-चलन
एवं भावों के स्पन्दनों का अनुभव किया है
हमारे चिन्तन की, ध्यान की यह सूक्ष्म भाव गहन शक्ति
बढ़ती चली जाय
हम ध्यान की गहराई में बैठते चले जाए
हमें अन्दर होने वाली सूक्ष्म क्रिया भी दिखाई देती
रहे
इसी भावोन्मेष, इसी तीव्र अहोभाव के साथ ध्यान से
बाहर आ जाए
प्रकृतिस्थ हो जाए
अपने सम्पूर्ण परिवेश को एकदम हल्का अनुभव करें
स्वस्थ हो जाए



१९

कर्म निर्जरा : समीक्षण

ध्यान मुद्रा बनाले ·
(प्रथम तीन प्रक्रियाओ को भावपूर्ण उल्लास के साथ दोहराए)
तीव्रतम सकल्प के साथ भाव करे कि हमारा शरीर एकदम शिथिल हल्का हो गया है ···
शरीर के साथ हमारा मन भी एकदम हल्का हो गया है
मन के अधिकाश विकारो को हमने बाहर निकाल दिया है
मन का और तन का एक साथ ऐसा हल्कापन हमने कभी अनुभव नही किया था
हम अपनी ध्यान-साधना मे मन की वृत्तियो का समीक्षण करते रहे है····
अनेक दूषित मनोवृत्तियो की हमने निर्जरा भी की ही है··
अब हम फिर से आत्म-समीक्षण की प्रक्रिया की ओर गतिशील हो रहे है·
अभी हमने कर्म बन्धन की प्रक्रिया का समीक्षण किया था···
अब हम कर्म निर्जरा की प्रक्रिया का साक्षात्कार करने का प्रयास करेगे
हमने कर्म बन्धन के हेतुओ-कारणो को समझा
मिथ्यात्व-अज्ञान अव्रत कषाय आदि कर्म बन्धन के हेतु है··
ये सब मन के विविध प्रकार के भाव ही तो है··
और भाव ही तो बन्धन के कारण है
अरे, मुक्ति का कारण भी तो भाव ही हैं
आगमो मे कहा है—"जे आसवा ते परिसवा" जो बन्धन के कारण होते है, वे ही मुक्ति के कारण भी बन जाते है
"मनसा बद्ध्यते मनसैव मुच्यते" मन से ही बँधा जाता है और मन से ही मुक्त हुआ जाता है
बन्धन का कारण मन का कलुषित भाव है तो मुक्ति का कारण भावो की परम विशुद्धता है···

सयम-साधना की उत्कृष्ट भावनाएँ कर्म परमाणुओ के नये आगमन को तो रोक ही रही है पर पुराने कर्मों को भी हटाने का प्रयास कर रही है

विशुद्धतम अध्यवसायो के कारण इस समय हमे कोई नये कर्म आते हुए, बाँधते हुए दिखाई नही दे रहे है

इन्द्रियो की उपरामता एव मन-वचन-काया के स्थिरत्व ने कर्मों के आगमन के द्वार बन्द कर दिये है

जिसे हम आगमिक भाषा मे सवर कहते है

जैसे हमने कमरे की खिडकियाँ बन्द कर दी हो, ताकि हवा से धूलि कण कमरे मे नही आ सके

इन्द्रियो के सारे द्वार भी बन्द हो जाने से कर्मों की धूलि का आत्म-भवन मे आना रुक गया है··

किन्तु कभी हमे पूर्व मे पडे हुए कर्म मैल को भी निकाल कर बाहर कर देता है जैसे कमरे मे पडी हुई धूल को बाहर निकालने के लिये श्रम करना पडता है वैसे ही आत्मा पर लगे अनादि कालीन कर्म मैल को अलग हटाने के लिये तीव्रतम श्रम की आवश्यकता है

और वह श्रम है द्वादश प्रकार का तप

अनशन-ऊनोदरी आदि बाह्य एव प्रायश्चित्त ध्यान आदि आभ्यतर तप भाव करे

अभी हमारी चेतना मे तप साधना की तीव्रतम लहर उठ रही है

हम उपवास आदि तपो मे रमण कर रहे है

हमारा शरीर तप साधना से कृश हो गया है ·

देह के प्रति इस अनासक्ति के अध्यवसाय से प्रतिपल बहुत अधिक कर्मों की निर्जरा हो रही है

हमारे भीतर ज्ञान के प्रति प्रगाढ रुचि का जागरण हो रहा है

हम स्वय ज्ञान सीखने-आध्यात्मिक अध्ययन के प्रति रुचिवान् एव सलग्न हो रहे है और ज्ञान सीखने की प्रेरणा भी कर रहे है

अभाव-ग्रस्तो को ज्ञान के साधन भी जुटा रहे है···

देखे इन विशुद्ध ज्ञान प्राप्ति के अध्यवसायो से हमारी आत्मा पर से ज्ञानावरणीय कर्मों के पर्दे हटने लगे है

ज्ञानावरणीय कर्म परमाणुओ मे खल-बली मच गई है

पर्दे हटते जा रहे है और हमारे भीतर ज्ञान का प्रकाश फैलता जा रहा है ·

अनुभव करे

जैसे भीतर कोई ऐसी मर्करी लाइट जल रही है जो धीरे-धीरे प्रकाश की गति को बढा रही है

अहा, वीतराग वाणी पर कैसी अहोभावपूर्ण श्रद्धा का जागरण हो रहा है
अणु-अणु मे प्रत्येक आत्म-प्रदेश पर श्रद्धा का भाव हिलोरे ले रहा है··
और देखे इन अध्यवसायो के प्रभाव से मिथ्यात्व मोहनीय कर्म की निर्जरा हो रही है, अश्रद्धा का भाव समाप्त हो रहा है
मिथ्यात्व मोहनीय कर्म के प्रबल आवरण छिन्न-भिन्न हो रहे है
शुद्ध दृष्टि-सम्यग्दर्शन का आलोक हमारी चेतना मे भरता जा रहा है
दृष्टि के विशुद्ध होते ही राग-द्वेष की परतें भी हिलने लगी है
चारित्र मोहनीय कर्म की निर्जरा-उसका क्षयोपशम होने लगा है
आत्मा पर प्रबल रूप मे छाया हुआ मोहनीय कर्म कुछ ढीला हो रहा है
भाव करे
हमारी इन्द्रियो के आकर्षक क्षीण हो गए है·
उन पर होने वाले राग-द्वेष मन्द पड गए है ·
अच्छे शब्दो पर या अच्छे रूप पर कोई राग नही रह गया है और बुरे शब्द रूपादि पर कोई द्वेष नही रह गया है
हमारी आत्मा मे वीतराग भाव गहराता जा रहा है
समता का भाव बढता जा रहा है अनुभव करें· ·
इस वीतरागता के भावो से मोहनीय कर्म की जडे ढीली हो गई है
चारित्र मोहनीय कर्म-परमाणु आत्मा से अलग हट रहे है
अन्तरग मे आत्मा से कर्मों के अलग हटने का हम साक्षात् अनुभव कर रहे है
जैसे कपडे पर मैल चिपका हो और साबुन आदि से वह अलग हट जाता है
वैसे ही अनुभव करे
आत्मा पर मैल लगा है और अध्यवसायो की विशुद्धता रूप साबुन से वह मैल हटता जा रहा है···
वीतराग भावो के समक्ष मोह कर्म परास्त हो जाता है· ·
भाव करे मोह कर्म के आवरण को हटते हुए देख रहे है

अहा, वीतराग वाणी पर कैसी अहोभावपूर्ण श्रद्धा का जागरण हो रहा है
अणु-अणु मे प्रत्येक आत्म-प्रदेश पर श्रद्धा का भाव हिलोरे ले रहा है· ·
और देखे इन अध्यवसायो के प्रभाव से मिथ्यात्व मोहनीय कर्म की निर्जरा हो रही है, अश्रद्धा का भाव समाप्त हो रहा है
मिथ्यात्व मोहनीय कर्म के प्रबल आवरण छिन्न-भिन्न हो रहे है
शुद्ध दृष्टि-सम्यग्दर्शन का आलोक हमारी चेतना मे भरता जा रहा है
दृष्टि के विशुद्ध होते ही राग-द्वेष की परते भी हिलने लगी है
चारित्र मोहनीय कर्म की निर्जरा-उसका क्षयोपशम होने लगा है
आत्मा पर प्रबल रूप मे छाया हुआ मोहनीय कर्म कुछ ढीला हो रहा है
भाव करे
हमारी इन्द्रियो के आकर्पक क्षीण हो गए है·
उन पर होने वाले राग-द्वेष मन्द पड गए है ·
अच्छे शब्दो पर या अच्छे रूप पर कोई राग नही रह गया है और बुरे शब्द रूपादि पर कोई द्वेष नही रह गया है
हमारी आत्मा मे वीतराग भाव गहराता जा रहा है·
समता का भाव बढता जा रहा है अनुभव करे· ·
इस वीतरागता के भावो से मोहनीय कर्म की जडे ढीली हो गई है
चारित्र मोहनीय कर्म-परमाणु आत्मा से अलग हट रहे है
अन्तरग मे आत्मा से कर्मो के अलग हटने का हम साक्षात् अनुभव कर रहे है
जैसे कपडे पर मैल चिपका हो और साबुन आदि से वह अलग हट जाता है
वैसे ही अनुभव करे
आत्मा पर मैल लगा है और अध्यवसायो की विशुद्धता रूप साबुन से वह मैल हटता जा रहा है····
वीतराग भावो के समक्ष मोह कर्म परास्त हो जाता है···
भाव करे मोह कर्म के आवरण को हटते हुए देख रहे है

चारित्र मोह के क्षयोपशम के साथ ही विरक्ति के भाव बढ़ते जा रहे हैं

आत्मा और उसमें भी विशुद्ध सर्वव्रतों की भावनाओं का उदय हो रहा है

सम्पूर्ण विरक्ति के भाव गहराते जा रहे हैं

मन [illegible] साधना-चारित्र आराधना के प्रति उत्सुक हो रहा है

त्याग, तप, साधना का बाधक मोह कर्म ही तो था जो आज क्षीण हो गया है

अब त्याग वृत्ति में कोई बाधक तत्त्व नहीं है

अन्तरंग में त्याग भाव का उल्लास उत्पन्न हो रहा है

अनुभव करें

मोह कर्म के अधिकांश कर्म परमाणु उड गए हैं

कुछ अन्दर दब गए हैं जिसे क्षयोपशम कहा जाता है

इसी प्रकार हमारे अध्यवसायों की विशुद्धि बढ़ती जा रही है और अन्य नाम-गोत्रादि कर्मों के परमाणु भी उड़ते जा रहे हैं

भाव करें आत्म प्रदेशों पर के सभी आवरण हटते जा रहे हैं

इन परमाणुओं को धुएँ की तरह हम उडते हुए देख रहे हैं

हमारी पूरी आत्मा में एक कम्पन सा हो रहा है

जैसे पशु अपने शरीर पर लगे रज कण को झाडने के लिए शरीर को कम्पित करता है उसी प्रकार एक थरथराहट पूर्ण कम्पन हमारी आत्मा में हो रही है

इस कम्पन से कर्म-रज नीचे झडती जा रही है

भाव करें आत्म-प्रदेशों के कम्पन एवं कर्मरज के परिशाटन का हम प्रत्यक्ष अनुभव कर रहे हैं

आत्मा को हल्का बना देने वाला ऐसा आनन्द प्रद अनुभव पहले कभी नहीं हुआ

[illegible] अपूर्व आनन्दप्रद बन रहे हैं

आत्मा में अद्भुत ज्योति फैलती जा रही है

आत्म-प्रदेशों के निरावरण होने से उनमें हल्कापन बढ़ता [illegible]

अहा, वीतराग वाणी पर कैसी अहोभावपूर्ण
जागरण हो रहा है
अणु-अणु मे प्रत्येक आत्म-प्रदेश पर श्रद्ध
हिलोरे ले रहा है
और देखे इन अध्यवसायो के प्रभाव
मोहनीय कर्म की निर्जरा हो रही है, अ
समाप्त हो रहा है
मिथ्यात्व मोहनीय कर्म के प्रबल आवरण
रहे है
शुद्ध दृष्टि-सम्यग्दर्शन का आलोक हम
भरता जा रहा है
दृष्टि के विशुद्ध होते ही राग-द्वेष की प
लगी है
चारित्र मोहनीय कर्म की निर्जरा-उसका
लगा है
आत्मा पर प्रबल रूप मे छाया हुआ मोह
ढीला हो रहा है
भाव करे
हमारी इन्द्रियो के आकर्षक क्षीण हो ग
उन पर होने वाले राग-द्वेष मन्द पड ग
अच्छे शब्दो पर या अच्छे रूप पर क
गया है और बुरे शब्द रूपादि पर क
गया है
हमारी आत्मा मे वीतराग भाव गहरात
समता का भाव बढता जा रहा है अ
इस वीतरागता के भावो से मोहनीय क
हो गई है
चारित्र मोहनीय कर्म-परमाणु आत्मा
है
अन्तरग मे आत्मा से कर्मो के अलग हट
अनुभव कर रहे है
जैसे कपडे पर मैल चिपका हो और सा
अलग हट जाता है
वैसे ही अनुभव करे
आत्मा पर मैल लगा है और अध्यवस
रूप साबुन से वह मैल हटता जा रहा
वीतराग भावो के समक्ष मोह कर्म पर
भाव करे मोह कर्म के आवरण
रहे है

अनुभव करे भीतर प्रचण्ड शक्ति का जागरण हो रहा है।
वह शक्ति जो, सहारक नही सृजेता है
वह सम्पूर्ण सृष्टि को अभयत्व के आनद से भर देने वाली शक्ति है
कर्म निर्जरा के पवित्र अध्यवसायो मे वृद्धि होती चली जाए···
यह ज्ञान का आलोक बढता चला जाए···
यह सात्विक शक्ति का जागरण और यह अपूर्व आनन्द बढता चला जाए
इसी अहोभाव के साथ इस भावोन्मेप के साथ ध्यान से बाहर आ जाए
अपने आपको एकदम स्वस्थ एव हल्का अनुभव करे
प्रति पल कर्म निर्जरा के भाव को जागृत रखने के सकल्प मे ध्यान से बाहर आ जाएँ भाव करे·· तीव्रतम भाव करे
आज वास्तव मे आत्मा एकदम हल्की लग रही है
आत्मा पर से पर्दों का बोझ हटा हुआ–सा लग रहा है

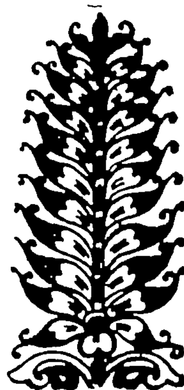


२०

कर्म : आवरण और विलय का समीक्षण

शांत मुद्रा बनाएँ
(प्रथम तीन प्रक्रियाओं का अतीव उल्लसित तन्मयता के साथ अनुगमन)
अपने शरीर को एकदम हल्का महसूस करें
और कहें
हमारा शरीर एकदम हल्का हो गया है
अब मन को हल्का बनाने का हमारा प्रयास चल रहा है
और उनके माध्यम से हम आत्मा को हल्का बनाने का प्रयास कर रहे हैं
आज हम आत्मा को भारी बनाने वाले तत्त्वों को देखने का प्रयास करेंगे
आज हम आत्मा की अनन्त ज्ञानादि शक्तियों को आवृत करने वाले आवरणों का समीक्षण करेंगे
आज हम उन आवरणों के अन्दर छिपी हुई अनन्त सूर्यों से भी अधिक प्रकाशमान उस चैतन्य-ज्योति का भी समीक्षण करेंगे
और कहें
अभी हम इस देह के मृत्पिण्ड में परिवेष्टित आत्म-ज्योति का समीक्षण कर रहे हैं
जो अनन्त प्रभास्वर सूर्य से भी अधिक सौम्य तेज-वाली, बाहर हमें अपनी शरीर कान्ति के रूप में दिखाई दे रही है

अनुभव करे भीतर प्रचण्ड शक्ति का जागरण हो रहा है ।
वह शक्ति जो, सहारक नही सृजेता है
वह सम्पूर्ण सृष्टि को अभयत्व के आनद से भर देने वाली शक्ति है
कर्म निर्जरा के पवित्र अध्यवसायो मे वृद्धि होती चली जाए····
यह ज्ञान का आलोक बढता चला जाए··
यह सात्विक शक्ति का जागरण और यह अपूर्व आनन्द बढता चला जाए· ·
इसी अहोभाव के साथ इस भावोन्मेष के साथ ध्यान से बाहर आ जाए
अपने आपको एकदम स्वस्थ एव हल्का अनुभव करे
प्रति पल कर्म निर्जरा के भाव को जागृत रखने के सकल्प मे ध्यान से बाहर आ जाएँ भाव करे· तीव्रतम भाव करे·
आज वास्तव मे आत्मा एकदम हल्की लग रही है ·
आत्मा पर से पर्दो का बोझ हटा हुआ–सा लग रहा है



१०

कर्म : आवरण और विलय का समीक्षण

किन्तु उनमे सघन पर्दे चार ही है, जो आत्मा के मूल रूप को ही आवृत कर रहे है ·

उनमे सर्वाधिक प्रभाव वाला सघनतम पर्दा है—मोह कर्म का····

इस पर्दे ने आत्मा के स्वरूप-बोध और सम्यक् आचरण रूप मौलिक स्वभाव को ही ढक दिया है

इसी के कारण आत्मा अपने अस्तित्व से भी अपरिचित रह जाती है

जैसे कोई जन्माध व्यक्ति—अपने रूप को ही नही देख पाता है कि वह गौर वर्ण है या श्याम वर्ण ·

उसी प्रकार इस मोह के सघन आवरण के कारण आत्मा अपने अस्तित्व से ही अपरिचित रह रही है·

और जब अस्तित्व का ही बोध न हो तो उसे प्राप्त करने अथवा निखारने, शुद्धावस्था तक ले जाने का तो भाव ही उत्पन्न नही हो सकता है ·

यही कार्य यह मोह कर्म का आवरण कर रहा है

इसने हमारी शुद्धाचरण, सम्यक्-चारित्र की शक्ति को आवृत कर रखा है····

भाव करे

आत्म-ज्योति को उसकी सम्यक् समझ को ढकने वाला यह सघन पर्दा हमे स्पष्ट दिखाई दे रहा है

और इसके साथ ही उसी से लगे हुए दो सघन पर्दे हमे और दिखाई दे रहे हैं

ये दोनो आवरण समानान्तर से ही लगे हुए है··

एक है आत्मा की ज्ञान-शक्ति को ढकने वाला और दूसरा है आत्मा की दर्शन-शक्ति को ढकने वाला

इन दोनो पर्दों ने आत्मा के अनन्त ज्ञान और अनन्त दर्शन की शक्ति को आवृत कर रखा है ···

अनन्त सूर्यों से भी अधिक प्रकाशमान यह आत्मा इन दो सघन पर्दों के कारण अन्धकार मे डूबी हुई है·

इन आवरणो के कारण स्वय ज्ञाता, द्रष्टा आत्मा पदार्थ के सम्यक् रूप को देख, जान नही पाती है

जैसे किसी व्यक्ति की आँखो पर बहुत ठोस कपडे की पट्टी बाँध दी जाए, तो उसे अपने चारो ओर अन्धकार ही अन्धकार दिखाई देता है

उसको स्वय की नेत्र-ज्योति पूर्णरूप से स्वस्थतया विद्यमान होते हुए भी पट्टी का आवरण उसे कुछ भी देखने नही देता ···

ठीक यही स्थिति हमारी चैतन्य-ज्योति की है ।

इसका कारण है यह अन्तराय कर्म का आवरण। इस अन्तराय कर्म का पर्दा आत्मा पर छाया हुआ है··

भाव करे

हमे ये चारो पर्दे साफ-साफ दिखाई दे रहे है···

ये चारो ही नही, ऐसे चार पर्दे और हमारी आत्मा पर लगे हुए है

यह ठीक है कि ये चार पर्दे आत्मा पर सीधा प्रभाव नही डालकर, शरीर पर प्रभाव डालते है फिर भी आत्मा इन दूसरे चार पर्दों के कारण ही तो शरीर के साथ बँधी रहती है

जब तक आयुष्य कर्म है, तब तक यह किसी-न-किसी स्थूल शरीर मे बँधी रहती है

और जहाँ शरीर है वहाँ किसी-न-किसी प्रकार की वेदना सुख-दु ख की अनुभूति भी होती ही है

और जहाँ शरीर है तो उसके वर्ण, सस्थान, आकृति, सघयन, मजबूती, गति, जाति आदि अनेक प्रवृत्तियाँ होगी ही

इन अवस्थाओ के जनक का ही तो नाम कर्म है

और इनमे उच्च-नीच का सचार करने वाला गौत्र कम है

अर्थात्, आयुष्य, वेदनीय, नाम और गौत्र इन चारो कर्मो के चार आवरण हमारी आत्मा को ससार मे बाधे रखने का कार्य कर रहे है

अभी हम अपनी समीक्षण दृष्टि से इन आठो पर्दो को देख रहे है

इनमे चार सघन और चार हल्के है

अब हम इन आवरणो के विलीन होने की सामान्य प्रक्रिया का समीक्षण करेगे

भाव करे

अभी हम पुन उस, सघनतम पर्दे—मोहकर्म पर अपनी दृष्टि केन्द्रित करेगे

अभी हमे अपनी अनन्त ज्योति-पुञ्ज आत्मा के दर्शन हो रहे है और उस पर छाया हुआ मोह का पर्दा भी दिखाई दे रहा है·

हम देख रहे है

हमारे अध्यवसाय–विचार विशुद्ध हो रहे है

भावनाओ मे आत्म-दर्शन की प्रकर्षता बढ रही है

इन उच्च अध्यवसायो से हमारा दर्शन मोह का पर्दा हल्का होता जा रहा है·

इसका कारण है यह अन्तराय कर्म का आवरण। इस अन्तराय कर्म का पर्दा आत्मा पर छाया हुआ है·

भाव करे

हमे ये चारो पर्दे साफ-साफ दिखाई दे रहे है··

ये चारो ही नही, ऐसे चार पर्दे और हमारी आत्मा पर लगे हुए हे

यह ठीक है कि ये चार पर्दे आत्मा पर सीधा प्रभाव नही डालकर, शरीर पर प्रभाव डालते है फिर भी आत्मा इन दूसरे चार पर्दो के कारण ही तो शरीर के साथ बंधी रहती है

जब तक आयुष्य कर्म है, तब तक यह किसी-न-किसी स्थूल शरीर मे बँधी रहती है

और जहाँ शरीर है वहाँ किसी-न-किसी प्रकार की वेदना सुख-दु ख की अनुभूति भी होती ही है

और जहाँ शरीर है तो उसके वर्ण, सस्थान, आकृति, सघयन, मजबूती, गति, जाति आदि अनेक प्रवृत्तियाँ होगी ही

इन अवस्थाओ के जनक का ही तो नाम कर्म है

और इनमे उच्च-नीच का सचार करने वाला गौत्र कम है

अर्थात्, आयुष्य, वेदनीय, नाम और गौत्र इन चारो कर्मो के चार आवरण हमारी आत्मा को ससार मे बाघे रखने का कार्य कर रहे है

अभी हम अपनी समीक्षण दृष्टि से इन आठो पर्दो को देख रहे है

इनमे चार सघन और चार हल्के है

अब हम इन आवरणो के विलीन होने की सामान्य प्रक्रिया का समीक्षण करेगे

भाव करे

अभी हम पुन उस, सघनतम पर्दे—मोहकर्म पर अपनी दृष्टि केन्द्रित करेगे

अभी हमे अपनी अनन्त ज्योति-पुञ्ज आत्मा के दर्शन हो रहे है और उस पर छाया हुआ मोह का पर्दा भी दिखाई दे रहा है

हम देख रहे है

हमारे अध्यवसाय–विचार विशुद्ध हो रहे है·

भावनाओ मे आत्म-दर्शन की प्रकर्षता बढ रही है·

इन उच्च अध्यवसायो से हमारा दर्शन मोह का पर्दा हल्का होता जा रहा है

जैसे कि सूर्य पर आया हुआ सघन बादल हवा के प्रभाव से हल्का होने लग जाता है
और हमे आत्म-बोध हो रहा है
अभी हम आत्म-दर्शन का अनुपम आनन्द ले रहे है
अपूर्व आह्लादक क्षण है ये
हमारी चेतना मे चारित्र ग्रहण करने के भाव जाग्रत हो रहे है
हमारे चारित्र मोह का आवरण क्षीण हो रहा है
हमारे चैतन्य देव मे चारित्र का नयनाभिराम प्रकाश फैल रहा है
हमे स्वरूप का दर्शन हुआ और हम साधना की ओर आगे बढ रहे है
अभी हमारी चेतना आत्मानन्द के उल्लास मे रममाण हो रही है
भाव कर
हमे आत्मा पर से आवरण हटते हुए स्पष्ट दिखाई दे रहे है
जैसे कोई बादल बिखर रहे है
आत्मा मे ज्ञान का आलोक फैल रहा है
उसकी सम्यक् समझ जाग्रत हो रही है
ज्ञानावरणीय एव दर्शनावरणीय कर्म का क्षयोपशम हो रहा है
धीरे-धीरे ज्ञान का प्रकाश बढता जा रहा है· ·
आत्मा की उज्ज्वलता बढती जा रही है·
अन्तराय कर्म का क्षयोपशम हो रहा है
हमारी आत्मिक शक्तियो पर आए आवरण हटते जा रहे है
भीतर जैसे कोई शक्ति का विस्फोट हो रहा हो
आज हमारी वीर्य शक्ति बढ रही है
चारित्राराधना की भावना एव क्षमता मे अत्यधिक विकास हो रहा है
हमारी शारीरिक शक्ति बढती जा रही है
हमारी भुजाओ मे शक्ति का ज्वार आ रहा है
हमे सहसा अलभ्य उपलब्धिया हो रही है
हमारी दान देने की भावनाओ मे उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है
हमारी आत्मा की अनन्तवीर्य सम्पन्नता का हमे सहज बोध हो रहा है
भाव करे

हम आवरणो के विलीन होने की इस प्रक्रिया को प्रत्यक्षत देख रहे है

हमे आवरणो के हटने से होने वाला चैतन्य प्रकाश स्पष्ट दिखाई दे रहा है·

हमारी आत्मा एकदम हल्की होती जा रही है

अध्यवसायो अर्थात् विचारो मे उच्चतापूर्ण निखार आता जा रहा है

नये आवरण चढाने वाले कालुष्य धुलते जा रहे हैं

विशुद्ध भावनाओ से पुराने कर्म हटते जा रहे है

आत्मा के निर्मल प्रकाश युक्त होने की इस प्रक्रिया को हम अपनी अन्तरग दृष्टि से देख रहे हे

अभी भी हमारी आत्मा पर आवरण चढ रहे है, किन्तु वे आवरण पतले वस्त्र के समान हल्के हो गए है·

जैसे किसी मर्करी लाइट पर पतले-पतले कपडो के कुछ पर्दे डाल दिये गए हो और प्रकाश उन पर्दो मे से छन-छन कर बाहर आ रहा हो

हम अपनी आत्मा के अलौकिक ज्ञान प्रकाश को देख रहे है

आवरणो और उनमे छनकर आने वाले ज्ञान के तारतम्य भाव का हम साक्षात् दर्शन कर रहे है

आज की हमारी ध्यान की प्रक्रिया बडी सहज, किन्तु आनन्दप्रद रही है·

आज हमने कर्मावरणो के स्तरो को देखा और आत्मा की अनन्त शक्ति का भी अनुभव किया

आवरणो को हटते हुए भी देखा ···

हमारा यह आत्म-लोक का दर्शन अतीव प्रीतिकर है

अत्यन्त रमणीय है

अत्यन्त आह्लादक है

उसी आलोक दर्शन मे रममाण मन स्थिति के साथ ध्यान से बाहर आजाएँ

अपनी आत्मा को स्वच्छ-निर्मल एव हल्का अनुभव करे

अपने सम्पूर्ण परिवेश को उद्वेग–आवेग रहित हल्का आह्लादक अनुभव कर प्रकृतिस्थ हो जाएँ

अपने तन-मन प्राणो को प्रफुल्लित अनुभव करे



२१

प्राणी–मैत्री–समीक्षण

ध्यान मुद्रा बनाले
(*प्रथम तीन प्रक्रियाओ को भावपूर्ण तन्मयता के साथ दोहराएँ*)
भाव करे
तन, मन ही नही आत्मप्रदेश भी एकदम हल्के-निर्मल हो गए है
हमारे अध्यवसायो की विशुद्धता पराकोटि पर पहुच रही है
हमारी राग-द्वेष की अनादिकालीन गाँठे ढीली पड गई है
न किसी पर विशेष राग रहा और न किसी पर द्वेष
चेतना की यही अवस्था वीतराग के निकट ले जाने वाली अवस्था है
मन के कालुष्य के धुल जाने के बाद अपने-पराये का या तेरे-मेरे का भेद कहाँ रह जाता है
ससार मे सभी सघर्षो-तनावो या दु ख-द्वन्द्वो का मूल तेरे-मेरे का भेद-मूलक भाव ही तो है
'तेरे' पर द्वेष होता है तो 'मेरे' पर राग
और यही आकर विद्वेष की भावनाएँ जागृत होती हैं
भाव करे
हमारे भीतर के तेरे-मेरे के भाव नष्ट हो गए है
विद्वेष के सभी निमित्त क्षीण हो गए है
हम अभी परम समत्व भाव के सागर मे तैर रहे है
जब तेरे-मेरे का भाव क्षीण हो गया तो सभी कुछ अपना ही लगने लगता है
हमे प्राणिमात्र अपना निकटतम लग रहे हैं
छोटे से छोटे प्राणी मे हमे अपना ही प्रतिबिम्ब दिखाई दे रहा है
"अप्प सम मन्निज्ज छप्पिकाए" का आगमिक उद्घोष अन्तरग मे साकार होता दिखाई दे रहा है
"वसुधैव कुटुम्बकम्" की विराट भावना अन्तरग मे लहलहा रही है

अहा ! वनस्पति जैसी एकेन्द्रिय आत्माओ पर भी कैसी करुणा जागृत हो रही है

भावनाओ की गागर मे करुणा के सागर उमड रहे हैं

प्राणिमात्र पर मैत्री का भाव जागृत हो रहा है

हमे अभी कोई पराया लग ही नही रहा है

अरे ! यहाँ पराया है ही कौन ?

ससार की सभी आत्माओ के साथ तो हमारा अनन्त-अनन्त बार सबध हो चुका है

इस पूरे ब्रह्माण्ड मे एक भी आत्मा ऐसी नही है जिसके साथ इस आत्मा का सम्बन्ध नही हुआ हो

अरे ! निगोद अवस्था या अव्यवहार राशि मे भी एक शरीर मे अनन्त जीवो के रूप मे रहकर हमारी आत्मा ने उन अनन्त अव्यवहार राशि की आत्माओ के साथ सम्बन्ध रक्खा है

अनन्त-अनन्त काल तक एक ही शरीर मे एक साथ रह चुकी है—हमारी आत्मा

जब हमारी आत्मा इतने निकट के सम्बन्ध से जुडी रही है ससार की आत्माओ के साथ, तो फिर यहाँ पराई आत्मा कौन रही है ?

भाव करे

आज हमे ससार की चराचर सभी आत्माएँ अपने से जुडी हुई दिखाई दे रही है

अभी हमारी भावनाओ मे एक गहरी आत्मीयता जागृत होती जा रही है

अहा ! विचारो मे इतनी व्यापकता, इतनी विराटता आज पहली बार ही आयी है

जब सभी आत्माएँ– आत्मीय अपने ही है तो शत्रुता तो किसी से रह ही नही सकती है

प्राणिमात्र पर परम मैत्री का भाव ही रह गया है

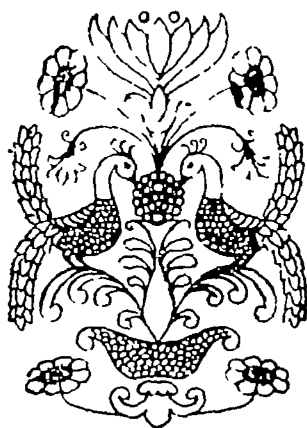
कुछ को अपना और अन्य सभी को पराया मानने की अपेक्षा सबको अपना बना लेने मे कितना आनन्द भरा है

एक छोटे से परिवार पर अपनत्व कायम कर उस पर राग और अन्य ससार के सभी प्राणियो पर परायेपन के भाव मे वह आनन्द कहाँ है जो विश्ववात्सल्य के भावो मे छिपा हुआ है

अरे ! छोटे से परिवार के दायरे मे तो जरा सा राग और अपरिमेय द्वेष का भाव छिपा रहता है

किन्तु जब सम्पूर्ण विश्व को अपना मान लिया जाता है
तो न राग रहा, न द्वेष, राग-द्वेष क्षुद्रता में रहते हैं
विराटता में दोनों ही समाहित हो जाते हैं
अहा ! हमारे भीतर का शत्रुत्व भाव ही नष्ट हो गया है
हमें चींटी में भी अपनी ही आत्मा का दर्शन हो रहा है
मक्खी-मच्छर-गाय-भैंस-घोड़ा-ऊँट ही नहीं, नाग और सिंह जैसे क्रूर माने जाने वाले प्राणियों में भी हमें अपनी ही आत्मा दिखाई दे रही है
अरे ! उन प्राणियों की आत्मा में और हमारी आत्मा में मौलिक रूप में कोई भी तो अन्तर नहीं है
स्वरूप की दृष्टि में सभी आत्माएं हमारी आत्मा के समान ही तो हैं
भाव करें
हमारी आत्मा में, हमारी दृष्टि में विशालता बढ़ती जा रही है
प्राणिमात्र के साथ अन्तरंग मैत्री का भाव गहराता जा रहा है
और यही तो वीतराग दशा का भाव-सूत्र है
सभी प्रकार की क्षुद्रताएँ टूट गई हैं
विराट भावों में प्रवेश करते ही हमारी चेतना में कितना आनन्द भर गया है
अद्भुत है यह आनन्द
कहीं कोई लुकाव-छिपाव नहीं है
कहीं कोई दुराव का भाव नहीं है
कहीं कोई तनाव नहीं है
सभी आत्माओं के साथ अपनत्व बना लेने के बाद किससे क्या लुकाव-छिपाव किया जाए
और जहां लुकाव-छिपाव नहीं, वहां अनिर्वचनीय आनन्द ही आनन्द है
हमारी आत्मा आनन्द का ही केन्द्र बन गई है
वीतराग भाव का आनन्द यह आनन्द बढ़ता जा रहा है
भाव करें
आत्मा का रूप व्यापक, विस्तृत होता जा रहा है

हमारी आत्मा विश्वात्मा बन गई है ·
हमारी आत्मा चराचर मे सयुक्त, व्याप्त हो गई है
यह व्यापक रूप सदा-सदा बना रहे, विश्व मैत्री का भाव गहराता रहे इसी भावुकता के साथ ध्यान से बाहर आ जाएँ
अपने को एकदम विराट किन्तु हल्का अनुभव करे ·
स्वस्थ हो जाएँ



विश्व वात्सल्य : समीक्षण

ध्यान मुद्रा बना ले
(प्रथम तीन प्रक्रियाओं को तीव्रतम सकल्प के साथ दोहराएं)
भाव करें
शरीर एकदम हल्का होता जा रहा है
शरीर का हल्कापन अति सीमा पर पहुँच गया है
शरीर एकदम निर्भार हो गया है
हम अब आत्मा के हल्केपन का अभ्यास-प्रयास कर रहे है
आत्मा को हल्का बनाने के लिये पहले मन को हल्का बनाना होगा
और मन को हल्का बनाने के पूर्व यह समझ लेना आवश्यक है कि मन भारी क्यो और किन कारणो से बना हुआ है
हम मन के भारीपन के अनेक हेतु पूर्व मे इसी ध्यान-साधना के दौरान समझ चुके है
उसे सार रूप मे दोहराएँ तो मन को बोझिल बनाने वाला भाव है—राग-द्वेष
राग-द्वेष उत्पन्न होता है तेरे-मेरे, अपने-पराये की भेद की रेखाओं मे
जहां मेरापन-अपनत्व का भाव है, वहा राग-भाव होगा ही
और जहाँ तेरा-परायेपन का भाव होगा, वहाँ किसी न किसी मात्रा मे द्वेष भाव का उदय होगा ही
मन को निर्भार बनाने के लिये तेरे-मेरे की भेद रेखाओं का टूटना अनिवार्य है
अपने-पराये की भावनाओं को तिलाजलि देना आवश्यक है
और यह होगा अपने विचारो को क्षुद्रता के सकुचित दायरे से बाहर निकालकर विराट परिवेश प्रदान करने मे
तो आज हम विचारों की विराटता का समीक्षण करेंगे
भाव करें

अब हम अपने-पराये की क्षुद्र परिधि का परित्याग कर रहे है

तीव्रतम भाव करे…

सकुचित दायरो के टूटने के साथ ही अपनत्व का भाव विस्मृत होता जा रहा है   परायेपन का भाव क्षीण होता जा रहा है   अब हमे ससार के प्रत्येक प्राणी मे अपनत्व का बोध हो रहा है   सभी आत्माएँ हमे अपने समान ही नही, अपने रूप मे ही दिखाई दे रही है चलते-फिरते त्रस प्राणियो मे ही नही, पृथ्वीकायिक अपकायिक आदि छोटे-से-छोटे प्राणियो के प्रति हमारे मन मे आत्मोपम्य की भावनाएँ गहराती जा रही हैं हमे यह पूरा विश्व अपना ही परिवार लग रहा है

कल्पना करे

हमे अपने छोटे से परिवार के प्रति कितना ममत्व रहता है

अपने भाई, अपनी बहिन, अपने माता-पिता, अपनी पत्नी और अपने बच्चे   अपना घर, अपनी दुकान, अपना ऑफिस…

अब उस अपनत्व को जब हम विस्तार दे देते है सम्पूर्ण विश्व को अपना कुटुम्ब-परिवार मान लेते है समस्त ससार को अपना घर मान लेते है

तो फिर परायापन किसमे किसके प्रति बच जाता है जब सब कुछ अपना हो गया तो पराया कौन बच गया

अहा ! ! कितना आनन्द भरा है इस विश्व कुटुम्ब की भावना मे

इस विस्तार भावना के साथ ही शत्रु-मित्र का भाव ही तिरोहित हो जाता है

अरे ! जब पूरा विश्व ही मित्र हो गया, मैत्री के पवित्र सूत्र मे बँध गया तो शत्रु कौन रहेगा

कल्पना करे

इन क्षणो हम अपने किसी शत्रु को अपने मानस पटल पर—कल्पना लोक मे उभार कर ले आवे…

देखे   हमारे मन मे उसके प्रति कहाँ-कहाँ कितना क्रोध भरा है

मन के किस कोने मे शत्रुता का भाव छिपा है

बहुत गहराई मे उस छिपे हुए शत्रुत्व का समीक्षण करे

भाव करे   तीव्रतम सकल्प करे

वह शत्रुत्व क्षीण होता जा रहा है
उस व्यक्ति के प्रति अनन्य आत्मीयता का भाव निर्मित होता जा रहा है
अत्यन्त स्नेह-मृदुल प्रेमभाव का प्रादुर्भाव होता जा रहा है
वह व्यक्ति हमारे मानस-पटल पर एक सज्जन आत्मीय पुरुष के रूप में उभरकर आ रहा है
एक व्यक्ति के प्रति ही नहीं समस्त प्राणियों के प्रति मैत्री भाव का जागरण हो रहा है
पाना के जीवों में हमें अपना ही प्रतिबिम्ब दिखाई दे रहा है
अरे ! सिंह, साँप और बिच्छू जैसे जहरीले जंतुओं पर भी हमारे अन्तरंग में स्नेह की वृष्टि हो रही है
हमारे मन के वात्सल्य ने अपने प्रति समाज के समस्त प्राणियों की क्रूरता कलुषता को धो डाला है
हमारी विशुद्ध आत्मीय वात्सल्यता के सामने शत्रुत्व का भाव टिक ही कैसे सकता है
तत्त्व द्रष्टाओं ने स्पष्ट ही तो कहा है
'अहिंसा एवं समता की भावना के सामने क्रूरता रह ही नहीं सकती है'
भाव करें
इन क्षणों हमें विश्व की सभी चराचर आत्माएँ अपनी चिरपरिचित आत्मीय भासित हो रही हैं
वास्तव में वे हमसे चिर परिचित रही ही हैं
संसार की प्रत्येक आत्मा के साथ हमारे अनेकानेक रिश्ते बने हैं
अनादि काल के इस परिभ्रमण में समस्त आत्माएँ हमारे निकटतम परिजनों के रूप में रह चुकी हैं
यही नहीं, निगोद अवस्था में तो इस सम्बन्ध से भी निकट एक ही शरीर में संयुक्त रूप से अनन्त आत्माओं के साथ रह चुके हैं
व्यवहार में प्रेम प्रदर्शन के समय हम कहा करते हैं—
दो शरीर और एक आत्मा, किन्तु इससे भी निकट का रिश्ता एक शरीर और अनन्त आत्माओं का हमने धारण किया है

जहाँ हमारा आहार-खाना-पीना ही नही, प्रत्येक श्वास एक दूसरे के साथ ही होता था····
यह अलग बात है कि उस समय हमारी चेतना अत्यन्त सुषुप्त अवस्था मे होने से हम उस आत्मीय सम्बन्ध को समझ नही सकते थे···
उनका जीवन्त बोध नही कर सकते थे····
किन्तु वह आत्मीयता तो निर्विवाद रूप से थी ही····
अब जरा हम अपने वर्तमान के साथ अतीत के चिन्तन को जोड दे—समीक्षण करे···
वर्तमान मे जिन्हे हमने शत्रु के रूप मे देखा है वे ही तो हमारे अतीत मे अत्यन्त आत्मीय रहे है·· एक शरीरवासी अभिन्न चेतनाशी बनकर रहे है··
फिर शत्रुता किसके प्रति रक्खी जाय ·
नही, नही !! आज हमने अपने आत्म-समीक्षण के द्वारा शत्रुत्व को ही मिटा दिया है ··
हमारी चेतना मे विश्व मैत्री का भाव गहराता जा रहा है·
हमारे मन मे प्राणिमात्र के प्रति एक अनन्य आत्मीयता पूर्ण वात्सल्य का भाव फूट रहा है··
अहा !! विश्व वात्सल्य का यह उन्नत भाव कितना आल्हादकारी है····
यह भाव हमे कितने उच्चकोटि के आनन्द से भर देता है··

भाव करे ··
तीव्रतम अहोभाव से भर दे अपनी आत्मा को····
ससार के समस्त चराचर प्राणी हमारे कुटुम्बी है···
सभी चेतनाएँ हमारी आत्मीय है···
अनुभव करे
इन क्षणो मे हमारी आत्मा से ऐसी शुभ्र-शुक्ल किरणे निकल रही है—ये सभी प्राणियो को अपने भीतर समेटती जा रही है··
एक अभूतपूर्व प्रेम भाव का सचार प्रत्येक चेतना में हो रहा है···
और सभी आत्माओ के भीतर से हमारे प्रति रोष-द्वेष का भाव नष्ट होता जा रहा है ·
एक स्नेहपूर्ण भाव हमारे प्रति निर्मित होता जा रहा है···
अब तेरे-मेरे मन की सभी दीवारे टूट चुकी हैं···
राग-द्वेष का भाव तिरोहित हो चुका है···

हम सारे संसार के आत्मीय बन चुके हैं ·
समस्त संसार का प्राणी वर्ग हमारा आत्मीय बन चुका है · ·
हमारा आत्मीय भाव बढता चला जाय·
विश्व मैत्री की ये पुनीत भावनाएँ गहरी होती चली जाएँ
और हम आत्मीय भाव के इस आनन्द में बहुत गहराई तक डूबते चले जाएँ
वीतराग भाव का अनुपम आनन्द सर्वत्र फैलता चला जाये
भाव करें
इन क्षणो हम अभूतपूर्व अलौकिक आनन्द में सराबोर हो रहे हैं
आनन्द वृद्धि के इस अहोभाव के साथ ध्यान से बाहर आ जायें ··
अपने आपको एकदम हल्का अनुभव करते हुए प्रकृतिस्थ हो जाएँ ·



२३

पूर्व जन्मों का समीक्षण

ध्यान मुद्रा बनाले
(प्रथम तीन प्रक्रियाओ को अन्तरग उल्लास एव प्रबलतम सकल्प के साथ दोहराए)
अपनी चेतना के अन्तर्बाह्य सम्पूर्ण परिवेश को हल्का अनुभव करे
आज हम इतने हल्के हो गए है कि अब हम कही की भी कैसी भी यात्रा कर सकते है
अत आज हम समीक्षण की अत्यन्त गहन एव सूक्ष्म प्रक्रिया की यात्रा की तैयारी कर रहे है · वह यात्रा अपने जीवन के अतीत की यात्रा है
केवल वर्तमान के जीवन के अतीत की ही नही, अनेक जीवनो की, पूर्व के अनेक जन्मो की भाव यात्रा हमे करनी है
हमारी इस यात्रा का उद्देश्य है—हम अपने मूल स्वरूप से परिचय प्राप्त कर सके अपनी मूल आत्मा का साक्षात्कार कर सके
अतीत की इस यात्रा के लिये पहले हमे अपने भविष्य के विचारो को त्यागना होगा—हम सदा अतीत को भुलाकर भविष्योन्मुखी ही जीने के अभ्यासी हो गए है
हमारी अभिरुचि भूतकाल मे नही भविष्यत् के सुनहरे स्वप्नो मे ही अधिक रहती है, इसीलिये हम आमतौर पर ज्योतिषियो के द्वार खटखटाते रहते है कि कल क्या होने वाला है

भविष्य मे क्या होने वाला है
हम कल—आने वाले कल के प्रति अधिक उत्सुक है
क्योकि वहाँ हमे आशाएँ दिखाई देती है
अतीत हमे मृत लगता है और भविष्यत् जीवन्त प्रतीत होता है

किन्तु यदि हमे पूर्व जन्मो का स्मरण करना है अतीत मे डुबकी लगाना है तो भविष्यत् को भुला देना होगा
भविष्यत् की उत्सुकता को दफना देना होगा उस ओर से आँखे बन्द कर देनी होगी

हमारी चिन्तन शक्ति का पूरा प्रकाश भविष्यत् की ओर से हटाकर अतीत की ओर ही फेंकना होगा

भाव करें तीव्रतम भाव करें कि भविष्यत् की ओर से हमारी आँख बन्द हो गई है

हम अपने ही अतीत में गोते खा रहे हैं

इन क्षणों में भविष्य सम्बन्धी विचार एकदम बन्द हो गए हैं

हम अभी आने वाले कल की बात ही दिमाग से बाहर निकाल दें अभी तो गए कल का विचार ही करना है आगे क्या करना है ? क्या होने वाला है या क्या होगा ? सब कुछ को मस्तिष्क से निकाल दें

जैसे टार्च का फोकस एक ही दिशा में पड़ता है और दूसरी दिशा में अन्धकार ही रहता है

उसी प्रकार अपने सम्पूर्ण चिन्तन का फोकस भविष्य से हटाकर भूत अपने अतीत पर लगा दें

भाव करें कि अभी हम भविष्य को एकदम भूल गए हैं और भूतकाल को ही देख रहे हैं

भूतकाल में भी अभी बहुत अतीत में नहीं केवल गए कल में ही डुबकी लगा रहे हैं देखें अपने गए कल को देखें गए कल हम कब उठे थे किस-किस समय क्या-क्या कार्य किया था

किस-किस से मिले थे क्या-क्या खाया था पहले इन स्थूल क्रियाओं को ही देखने का प्रयास करें

फिर कल दिन भर के अच्छे-बुरे सभी प्रकार के विचारों का निरीक्षण करें अनुभव करें जैसे किसी एक पुस्तक के अनेक पृष्ठ खुलते जा रहे हैं

अपने ही अतीत के विचारों को देखकर हमारा मन आश्चर्य से भर रहा है इसी क्रम से हम गए परसों के कार्यों का अवलोकन करेंगे

देखें अपने अतीत के परसों को

एक-एक घटना-क्रम का निरीक्षण-साक्षात्कार करते जायें जिस प्रकार कल में हमने परसों को परसों नहीं जाना था, पर अभी वह उससे अधिक ही सजीव हो उठा है

… हम देखेंगे, कुछ दिनो के अभ्यास से हमे महीनो ही नही, वर्षों पूर्व के सभी दृश्य दिखाई देने लगेंगे….
आज जो अज्ञात के महासागर मे पडा है, वह ज्ञात के आकाश मे तैरता-सा दिखाई देने लगेगा
अभी हम अपनी अतीत दर्शन की यात्रा चालू रक्खे….
… हम अतीत के अनेको वर्षों का समीक्षण करते हुए अपने बचपन मे लौट गए है
हमे बाल्य-काल की प्रत्येक क्रिया सजीव-सी लग रही है
पूरा बचपन अपनी स्मृति के महासागर मे तैर रहा है
अनुभव करे ·
कितने सुनहरे एव आनन्द से भरे है वे वचपन के दिन ।।।
कैसी गुद-गुदी फैल रही है हमारे तन-वदन मे
बचपन के स्मरण के द्वारा · ।।। अहा हमारा बचपन हमारे सामने लौट आया है, एकदम जीवन्त हो उठा है·
अरे, अभी हमे बचपन की सहज-सरल लीला मे ही नही अटक जाना है अब हम बचपन से भी पीछे, एकदम शैशव मे· दुधमुँहे बालक के रूप मे अपने आपको अनुभव कर रहे है
भाव करे
हम अगूठा मुँह मे डाले हुए है ··
हम माॅ की ममता मयी गोद मे सोए हुए है….
हम दूघ पी रहे है ·
यह क्या… हम छोटे-छोटे खिलौनो से खेल रहे है….
हमारा खिलौना छिन गया है और हम रो रहे है ··
बचपन का वह रोना भी कितना मासूम है …
लो यह मा हमे गुद-गुदी कर रही है ··
वह भी हमारे साथ तुतला रही है और हम बिना आवाज के मुस्करा रहे है· ··हमे अपना ही बचपन कितना जीवन्त, कितना आनन्दमय · कितना प्यारा लग रहा है ··
लेकिन अभी हमे यहाॅ पर नही रुक जाना है·
हमारी अतीत की यात्रा बहुत लम्बी है अभी तो हमे….
अपने पूर्व के अनेक जन्मो का साक्षात्कार करना है….
अब हम शैशव से भी पूर्व की अवस्था गर्भस्थ काल का साक्षात्कार कर रहे है ओहो ।।

अनुभव कर
हम जैसे बन्द कोठरी में बैठे हैं कितनी गन्दी-दुर्गन्धमय
जगह है यह और हम कितने संकुचित होकर—हाथ-पाँव
सिकोड़कर बैठे हैं
कितना गन्दा आहार हमें वहाँ मिल रहा है"
वास्तव में सोच कर
उन क्षणों हम गर्भ में ही बैठे हैं
भयंकर यातनामय स्थान पर
जहाँ यातना, दुःख को अभिव्यक्त करने के लिये 'आह'
'उफ' भी नहीं कर सकते हैं
उस गर्भ के दुःखों की कल्पना तो हमारे पूरे तन-बदन
को कँपा देती है
कैसे गन्दे परमाणुओं से निर्माण हो रहा है हमारे इस
शरीर का
किन्तु जरा देख, हमें ऐसा शरीर क्यों मिला
क्यों हमें इस गर्भ में आना पड़ा
और इसके लिए तो हमें अपने पूर्व जन्मों की स्मृति में
छलांग लगानी पड़ेगी देख, जरा अपने गर्भ में आने के
पूर्व काल को
हम इस गर्भ में कहाँ से आये हैं ये जानो
चिन्तन को अतीत में ले जाओ
अपनी स्मृति पर कुछ जोर लगाओ कुछ और जोर
लगाओ
[illegible] आत्म पूर्व भव में [illegible] स्मृति पर कुछ और
अधिक दबाव [illegible]

अत पहले यह साहस जुटाले कि हमे अपना पूर्व जन्म, कैसा भी रहा हो, देखने मे कोई आपत्ति नही होगी
हम उसे सहज रूप से चित्रपट पर आने वाले चित्र की तरह लेगे
उससे कोई तादात्म्य स्थापित नही करेंगे· ·
हम केवल द्रष्टा बने रहेगे·
हम अपने अतीत के जन्मो के दृश्यो के भोक्ता नही होगे
हा, तो हमारी अतीत दर्शन की यात्रा चल रही है
जरा अपनी स्मृति पर भार डाले
उसे कुछ प्राचीनता मे ले जाएँ
अनुभव करे कि हमारे मस्तिष्क मे तीव्रतम हलन-चलन मच रही है
ज्ञान केन्द्र पर गहरे कम्पन हो रहे हैं
ज्ञान-केन्द्र का अर्थ है—मस्तिष्क का पिछला सबसे उभरा हुआ हिस्सा, जहाँ पर कुछ हिन्दू चोटी रखते है
हमारे ज्ञान-केन्द्र मे हलन-चलन मच गई है
हमारे मति-स्मृति ज्ञान के आवरण हटते जा रहे हैं
भाव करे
हमारे ज्ञान-केन्द्र पर सख्यातीत बारीक-बारीक पर्दे पडे हुए है
और वे कम्पित होने लगे है ·
हमारी स्मृति जागृत होने लगी है
अरे, यह एक पर्दा उठ गया है
और हम अपने पूर्व जन्म को देख रहे है
ओ हो ! यह कैसा दृश्य ???
उस जन्म मे तो हम बहुत विलासितापूर्ण जीवन मे थे·
हमे देवलोक का ऐश्वर्य स्पष्ट दिखाई दे रहा है· ·
सैकडो देवियो से घिरे हुए हम भोग-वासना मे लिप्त हो रहे है
कितनी विलासिता की जिन्दगी है यह··
अरे, यहाँ धर्म-कर्म की तो चर्चा ही नही है
केवल भोग भोग भोग · भोग मे आकण्ठ डूबे हुए है हम ·
और उसी को परम सुख मान रहे है हम
अरे, यह भी कोई जीवन है · जहाँ नाटको के मनमोहक दृश्यो एव कर्ण प्रिय गीतो के साथ नृत्य करती अप्सराओ के नूपुरो की झनझनाहटो मे ही रात-दिन खोया रहा जाता है

एक दिन, दो दिन नहीं, हजारों वर्ष उन्हीं रंगीन दृश्यों में व्यतीत हो जाते हैं

आत्मा तो भोगों के जटिल जाल में न जाने कहां खो जाता है

अरे, यह नृत्य करती हुई अप्सरा आत्मा के सामने आ गई है

अभी हम उसके वस्त्र कितने बेहूदे लग रहे हैं

कितने कामुक—मादक कटाक्ष कर रही है वह

कितनी गन्दी उनकी भाव-भंगिमा है

उन्हीं कटाक्षों में आत्मा परास्त हो जाती है

अपनी शक्ति-सामर्थ्य को भूल जाती है और फंस जाती है वासना के चक्रव्यूह में

अरे, यह क्या, यह हमारी देवी रुष्ट हो गई है और हम उसे मनाने का प्रयास कर रहे हैं वह नूपुरों की झंकार बंद हो गई है

हम अपनी देवी को विमान में लेकर देवलोक के नीचे सुमेरु पर्वत पर नन्दन वन में ले आए हैं और उसे प्रसन्न करने का प्रयास कर रहे हैं

अहा! देवलोक का एक-एक दृश्य हमें स्पष्ट दिखाई दे रहा है

और हम यह विलासिता पूर्ण जीवन एकदम बेहूदा-सा लग रहा है

हां, हमारी स्मृति पर से एक और पर्दा हट गया है

अब हम देवलोक से भी पहले के जन्म को देख रहे हैं

हम अपने आपको एक श्री सम्पन्न मनुष्य के रूप में देख रहे हैं

हमारे चारों ओर अपार सम्पत्ति बिखरी हुई है

अनेक व्यावसायिक संस्थाओं का हम संचालन कर रहे

हमारे विचारो पर एक झटका-सा लगता है और हम व्यापार व्यवसाय से एकदम उदासीन हो जाते है···
यही नही हम अपनी सम्पत्ति का वहुत अधिक भाग दीन-अनाश्रितो की सेवामे लगा देते है· ·
धार्मिक कार्यो के प्रति रुचि जागृत हो जाती है, हम सामायिक साधना मे रस लेने लगते है····
और इस रूप मे अत्यधिक पुण्य का सचय कर लेते है···
और उसी पुण्य के परिणाम से हमे स्वर्गीय सुखो की प्राप्ति होती हे·
हम अब अपनी स्मृति को कुछ और पीछे ले जा रहे है
· लो, यह एक पर्दा और उठ गया ·
हम अपने आपको एक वैल के रूप मे देख रहे है····
धूप-शीत सब कुछ सहन करता हुआ, भार ढोता हुआ वैल
··ओ, हो ! कितना भार लदा है गाडी मे हम उसे अपनी पूरी शक्ति से खीच रहे है··· फिर भी गाडी का मालिक हम पर चाबुक बरसा रहा है आरी चुभो रहा है ··
हम अपनी गति–चाल को तेज कर देते है····
किन्तु कुछ क्षणो के बाद फिर हमारी गति मे धीमापन आ जाता है और फिर चाबुक की मार पडती है हमारी पीठ पर···
·· आरी की चुभन से खून रिसने लगा है
किन्तु हम मूक है, कुछ बोलकर अपनी व्यथा व्यक्त नही कर सकते है
सब कुछ समभाव से सहन कर रहे हे ·
न समय पर पानी मिल रहा है और न समय पर चारा-घास·· ओ हो ! ! ! कैसी जिन्दगी है यह हमारी
कितनी दयनीय दशा है हमारी
कितने-कितने दु ख उठाए हैं हमने उस पशु योनि मे
उस सामान्य-सी समभाव की मात्रा से और अकाम निर्जरा के परिणाम से ही हम मानव तन मे श्रेष्ठी कुल मे उत्पन्न हो गए·· ·
बैल योनि के कष्टो का स्मरण करते-करते ही हमारे पर्दे हटते जा रहे है
भाव करे
यह एक पर्दा और हट गया है····
हम पुन अपने आपको एक मनुष्य के रूप मे देख रहे हैं

• हम एक वैल गाडी के चालक हैं और गाडी मे मन चाहा भार ढोकर चला रहे हैं
वैलो को चावुक की मार-मार रहे है
हम स्वय पसीने से तर-बतर हो रहे है‥
थके-थके-से अनुभव कर रहे हैं
ऊपर से धूप तप रही है और हम अपने तन-मन की गर्मी वैलो पर निकाल रहे हैं
वडी जोरो से आरे चुभो कर उन्हे दौडने को विवश कर रहे है हम बडी सहजता से उन पर चाबुक का वार करते जा रहे हैं
हम ऐसे अभ्यस्त हो गए हैं कि हमे अहसास ही नहीं होता कि हम किसी को मार रहे हैं केवल चाबुक चलाने का अभ्यास हो गया है अरे रे, यह क्या एक बैल-गिर पडा है बेचारा हाफ रहा है और हम निर्दय वनकर उसे धीरे से उठाने के बजाय उस पर चाबुको की वर्षा शुरू कर देते है •
भाव करें तीव्रतम भाव करे'
हम यह सीन अपने ही अतीत का यह चित्र प्रत्यक्ष अनुभव कर रहे है
हम वैल पर मार-मारे जा रहे है'
उसके मु ह से झाग ही झाग निकल रहे हैं
अब उसकी उठने की हिम्मत ही नही रही है‥‥
वह उठने का प्रयास करता है और फिर गिर पडता है

फिर हम उसे चाबुक मार रहे है' •
और अरे वह तो अचेत हो गया वह मर गया‥
हम निस्तेज होकर अब वहाॅ बैठ जाते है हाथ पर सिर धर कर रुआसा चेहरा लिये बीच मार्ग मे बैठे हैं
वैल की हत्या हो गई इसका दु ख हमे नही हैं‥
हमे दु ख है अपने नुकसान हो जाने का अब हम मन-ही-मन खिन्न-दुखित हो गए है' गाडी को बीच मार्ग में छोडकर जा भी नही सकते है
हमे प्यास सताने लगी है
हम किसी राहगीर का इन्तजार करते है'
सहसा कोई राहगीर आता दिखायी देता है और हम कुछ राहत अनुभव करते हैं उसके द्वारा हम अपने गाॅव अपने घर सन्देश पहुॅचाते है

हमारा वडा भाई वहाॅ पहुॅचता है वह वहुत क्रोध मे गालियाॅ वकने लगता है और हमे भी तीव्र क्रोध आ जाता है हम आपस मे झगडने लगते हैं

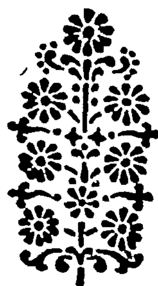
स्मृति को भाव पूर्ण बनाएँ और अनुभव करे वास्तव मे
हम अपने आपको उस स्थिति मे देख रहे है
क्रोध मे हमारे होठ फड-फडाने लगते है
हम दोनो भाई अपना सन्तुलन खो देते है और वह
आवेश मे आकर गाडी ठीक करने का औजार उठा लेता
है
हमारे सिर पर एक प्रहार करता है
हमारा प्राणान्त हो जाता है
हमारा मरण समय का क्रोध भाई के साथ उस बैल पर
भी रह जाता है· ·
हमारी मौत का निमित्त वह बैल ही तो बना
और हम मर कर एक गाय के गर्भ मे उत्पन्न हो जाते
है

ओ हो ! कैसी विचित्र लीला है कर्मों की !! कैसे-कैसे
जन्म हमने ग्रहण किये है

कैसी-कैसी मरणान्तक वेदनाएँ सहन की है
ऐसे एक नही, अनन्त-अनन्त जन्म मरणो की यातनाएं
हमने सहन की है·
अभी तो हमारा नरक की यातनाओ का पर्दा नही उठा
है
उसके उठने पर तो हम पागल ही हो जाएँगे
नरक की भयकर यातनाएँ अभी हमने प्रत्यक्ष देखी
नही है·
केवल शास्त्रो मे पढी ही हैं····
उन यातनाओ का स्मरण ही हमे रोमाञ्चित कर देता
है·
अब हम पुन अपने वर्तमान मे लौट रहे है ··
अतीत की यात्रा केवल पूर्व जन्मो की शृ खला को देखने
के लिये ही नही की है
इस यात्रा के द्वारा हमने कर्म-फल भोग का प्रत्यक्ष
साक्षात्कार किया है

अब अपने भीतर प्रेरणाप्रद सकल्प को ग्रहण कर रहे है
कि अब हमारे भविष्य के कर्म दुर्गति मे ले जाने वाले
नही होगे ·
भाव करे
अब हम अपने वर्तमान मे लौट आए है
पर्दे एक-एक करके अपने आप खिचते जा रहे है
आज की हमारी ध्यान यात्रा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अतीव
गहरी हुई है

आज हमारी ज्ञान चेतना मे अपूर्व जागृति का सचार हुआ है
अभी हमारा मन एक अभूतपूर्व शान्ति का अनुभव कर रहा है
हमारी ज्ञान चेतना की यह जागृति निरन्तर बढती चली जाए
हमारी मन शान्ति बढती चली जाए
इस तीव्रतम सकल्प के साथ ध्यान से बाहर आ जाएँ
• अपने आपको एकदम हल्का अनुभव करें
तन-मन को एकदम हल्का अनुभव करें
प्रकृतिस्थ हो जाएँ…
एकदम हल्के-हल्के महसूस करें



आत्म-सुरक्षा : समीक्षण

ध्यान मुद्रा बनाले
(प्रथम तीन प्रक्रियाओ को अत्यन्त भावपूर्ण तन्मयता के साथ दोहराएँ)
अतीव अहोभाव के साथ भाव करे कि हमारा तन-मन एकदम हल्का हो गया है· ·
इतने दिनो के अभ्यास से हमे तन का बहुत कुछ हल्कापन लगने लगा है ·
मन की भी अनेक दुर्वृत्तियो के नष्ट हो जाने से मन भी बहुत हल्का लग रहा है
आज हम शरीर के बाह्य तत्वो से अप्रभावित रहने का समीक्षण कर रहे है·
तीव्रतम सकल्प करे कि हमारा शरीर कठोर होता चला जा रहा है
यो तो यह शरीर अत्यन्त कोमल है
थोडी भी शीत-उष्ण की वेदना इसके लिये असह्य होती है किन्तु इन क्षणो हमारा शरीर सहनशक्ति की सीमा पार कर गया है वह वज्र से भी कठोर फौलादी रूप ले चुका है
भाव करे
कितना सशक्त हो गया है हमारा तन·
बाहर के किसी परमाणु-शस्त्र आदि की कोई प्रक्रिया इसे प्रभावित नही कर सकती है
हमारे चारो ओर आग लग रही है
ज्वालाएँ बहुत फैलती जा रही है
आग ऊँची से ऊँची उठती जा रही है·
किन्तु हम उस आग से एकदम अप्रभावित है जैसे हमने बुलेटप्रूफ जाकेट पहन लिया हो अथवा अग्निरोधक कवच धारण कर लिया हो·
हमारे चारो ओर बडी तेज गर्मी-उष्णता फैल रही है किन्तु हम पर उस गर्मी का कोई प्रभाव नही हो रहा है
हमे एकदम ठण्डक का अनुभव हो रहा है
हमारे चारो ओर जैसे पारदर्शी कॉच लगा हो ···
हम किसी पारदर्शी काँच की बर्नी मे सुरक्षित बैठे हो ···

हमारे चारो ओर ऐसा सुरक्षा कवच तैयार हो गया है कि किसी प्रकार के अस्त्र-शस्त्र का प्रयोग हमारे ऊपर आघात-प्रत्याघात नही कर सकता है

भाव करें

अग्नि की ज्वालाएँ वहुत तेज होती जा रही हैं

वे हमारे निकट आती जा रही है किन्तु हम पर उनका कोई भी प्रभाव नही हो रहा है

हमारी मानसिक एव आत्मिक शक्ति का प्रभाव हमारे शरीर पर वहुत गहराई तक हो गया है कि वह किसी भी प्रकार के उपघात को अकिंचित् कर वना देता है

हम अपने सामने ज्वालाओ को उठते हुए, अपने आसपास मण्डराते हुए देख रहे हैं· किन्तु उनका हमारे तन-मन पर कोई प्रभाव नही पड रहा है

अपने तन और मन मे ऐमी शक्ति का सचार हम प्रथम वार ही देख रहे है

कितनी क्षमता है हमारे तन और मन मे कि वे प्रकृति के प्रचण्ड शक्ति सम्पन्न तत्त्वो पर भो अपना अधिकार जमा लेते हैं

सकल्प करे

अपनी इस सहनशक्ति का विकास होता जा रहा है

ज्यो-ज्यो अग्नि का उत्ताप वढ रहा है, त्यो-त्यो हमारा मनोवल और शरीर वल भी वढता जा रहा है

भाव करे

हमारे सुरक्षा कवच से प्रभावित होकर अग्नि ठडी होने लग गई है

ज्वालाएँ मन्द-मन्द होती जा रही है

अग्नि शान्त हो रही है

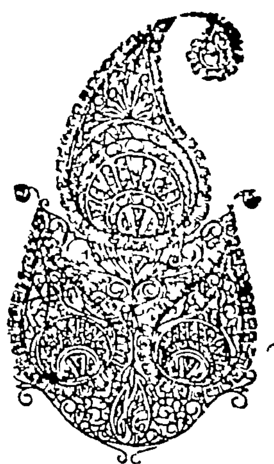
अग्नि हमे प्रभावित नही कर सकी

हमारी अतरग शक्ति ने ही अग्नि को प्रभावित कर दिया है

इस भाव को सकल्प की इस गहराई तक ले जावें कि हमारा यह सुरक्षा कवच सदा हमारे साथ वना रहेगा वह प्रतिक्षण हमारी सुरक्षा के प्रति सतर्क रहेगा इस सुरक्षा कवच के रहते किसी भी प्रकार के शस्त्र की शक्ति हमे मार नही सकती है

जैसे वुलेट प्रूफ जाकेट पर वन्दूक-पिस्तौल की गोली का प्रभाव नही होता है उसी प्रकार हमारे सुरक्षा कवच पर किसी भी शस्त्र का प्रभाव नही हो सकता है न पानी का न अग्नि का न हवा का, क्योकि हमारा

यह सुरक्षा कवच वाटर प्रूफ, फायर प्रूफ, एयर प्रूफ
आदि सभी गुण एक साथ रखता है
इस सकल्प को तीव्रता के साथ दोहराएँ कि हमारा तन
एकदम सुरक्षित हो गया है ··
शारीरिक शक्ति वज्रमय बन गई है···
यह शक्ति सदा-सदा इसी रूप मे वनी रहे
प्रत्येक शस्त्र इस शक्ति के सामने हमेशा परास्त होता
रहे
हमारे तन-मन की फौलादी शक्ति वढती चली जाय···
इस भाव के साथ ध्यान से वाहर ग्रा जाए
ग्रपनी सहज मूल मुद्रा मे ग्रा जाए
प्रकृतिस्थ हो जाए



२५

शक्ति जागरण—केन्द्र समीक्षण

ध्यान मुद्रा वनाले
(प्रथम तीन प्रक्रियाओ को दोहराएँ)
भाव करे
हमारा शरीर एकदम हल्का हो गया है
हल्केपन का यह अनुभव अतीव आह्लादक है, अत्यन्त मृदुल है
वास्तव मे अनुभव करें
हमारा मन भी एकदम हल्का हो गया है
हमारी कषाये एकदम मद पड गई हैं
हमारे विचार विशुद्ध एव तरल हो गए है
ससार के आकर्षण क्षीण हो गये है
अव हमारी शक्ति का दुरुपयोग रुक गया है
अव हम उस शब्द के ऊर्ध्वारोहण को प्रक्रिया प्रारम्भ कर रहे है
भाव करें
हमारी सम्पूर्ण शक्ति नाभिमण्डल के नीचे पेडू के पास मूलाधार चक्र पर टिकी हुई है
वह शक्ति जव नीचे की ओर वहती है तो वासना वन जाती है
विकारो को आमत्रण देती है
हमारे सम्पूर्ण जीवन को पतन की गहरी खाई मे ढकेल देती है
वही शक्ति जव ध्यान-साधना के माध्यम से ऊर्ध्वमुखी वनती है तो हमे कल्याण की दिशा प्रदान करती है
अध्यात्म की ओर मोड देती है
अनेक उपलव्धियो के द्वार खोलती हुई हमे परमात्मा से मिला देती है या हमे परमात्मा के रूप मे रूपान्तरित कर देती है
अनादिकाल से हमारी वह शक्ति निम्न दिशा की ओर गतिशील रही है
शक्ति की इस अधोगामी दशा ने ही हमे जन्म-मरण की व्याधि मे डाल रखा है

नरक तिर्यच ग्रादि गतियो मे परिभ्रमण का मूल कारण
भी शक्ति की ग्रधोगामिता ही है ·
ससार के नाना दु खो का मूल शक्ति को निम्न दिशा
मे गति है
ग्राज तक हमारी शक्ति निम्न प्रवाही रही है
ग्राज हम उस शक्ति को ऊर्ध्व दिशा देने का प्रयास
कर रहे है
भाव करे
ग्राज हम ध्यान की एक ग्रति महत्वपूर्ण प्रक्रिया से
गुजरेगे·
ग्राज हमारा समीक्षण शक्ति केन्द्रो का समीक्षण होगा
यह प्रयोग एक ग्रनूठा प्रयोग है
इस प्रयोग के द्वारा हम ग्रपने चैतन्य की समस्त शक्ति
को केन्द्रित कर ऊपर उठाने का सकल्प कर रहे है
ध्यान दे   मेरे इन शब्दो पर ध्यान दे कि ग्राज हमे
ग्रपनी एकाग्रता को ग्रति सीमा तक ले जाना हे
भाव करे

हमारे मन की एकावधानता बढ रही है
ग्रब हम ग्रपने मन को ग्रथवा उसकी चिन्तनीय शक्ति
को मूलाधार चक्र पर ले जा रहे है
हमे मूलाधार चक्र पर शक्ति भण्डार दिखाई दे रहा है
मूलाधार चक्र से जुडी एक पतली सी नाडी नीचे की
ग्रोर जा रही है ग्रौर तीन नाडियाँ ऊपर की ग्रोर जा
रही है
नीचे की ग्रोर जाने वाली नाडी शक्ति को वासना की
ग्रोर ले जा रही है ग्रौर ऊपर जाने वाली नाडियाँ शक्ति
को ऊर्ध्वमुखी बनाती है
भाव करे ··
हमे वे नाडियाँ स्पष्ट दिखाई दे रही हैं
जैसे कोई रबर का छोटा सा ब्लेडर हो ग्रौर उसके एक
हिस्से से तीन नलियाँ जुडी हुई हो ·
हम ग्रपने पेडू के पास इस ब्लेडर को स्पष्ट देख रहे है ···
हमे वे नाडियाँ स्पष्ट पारदर्शी काँच की दिखाई दे
रही है·
ग्रथवा सिलाईन-ग्लूकोज चढाने की नली जैसी दिखाई
दे रही है
अब हम अपने ध्यान के सकल्प को गहरा बना रहे है
हमारी ध्यान ऊर्जा सक्रिय हो गई है···
ग्रपना सम्पूर्ण ग्रवधान मूलाधार पर टिका दे···

मकल्प करे
मूलाधार से शक्ति का जागरण हो रहा है
जो तीन नाडिया ऊपर उठ रही हैं उनमे मध्य की नाडी
को योग की भापा मे 'सुपुम्ना' कहते है
और वही सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मानी जाती है
शेप दो नाडियो को 'इडा'– इगला और पिंगला कहा
जाता है
हमारी आतरिक शक्ति का जागरण हो रहा है
वह शक्ति ऊपर की ओर उठ रही है
वह सीधी सुपुम्ना मे प्रवेश कर रही है
भाव करे
ग्लूकोज के तरल पदार्थ जैसा एक चमकीला द्रव्य
मूलाधार चक्र पर गति कर रहा है
वह वडी तेजी से राउण्ड में चक्कर लगा रहा है
ध्यान ऊर्जा की वलवती प्रेरणा से वह सुपुम्ना में प्रवेश
कर रहा है
अनुभव करे
वह चमकीला तरल पदार्थ मेरुदण्ड (रीढ की हड्डी)
मे स्थिर सुपुम्ना मे मूलाधार चक्र से ऊपर की ओर
उठ रहा है
हमारे गुदाद्वार से ऊपर की ओर दवाव लग रहा है
और वह शक्ति तत्व ऊपर उठता जा रहा है
हमे रीढ की हड्डी मे हलकी सी सरसराहट का अनुभव
हो रहा है
फीलिंग करे
हमको शक्ति का स्रोत ऊपर उठता हुआ दिखाई
दे रहा है
हमारी रीढ की हड्डी मे एक दिव्य प्रकाश फैलता जा
रहा है
अनुभव करे
वह दिव्य प्रकाश पुन्ज शक्ति-स्रोत ऊपर उठता हुआ
नाभि के समानान्तर मे पहुँच गया है
मेरुदण्ड मे दिव्य प्रकाश फैलता जा रहा है
नाभि तक का हिस्सा अलौकिक प्रकाश से व्याप्त हो
गया है
भाव करे
अव हमारी पूरी शक्ति ऊपर उठती जा रही है
वह मणिपुर चक्र को पार करके अनाहत चक्र सीने के
निकट पहुँच गई है

प्रत्येक चक्र पर एक दिव्य-अद्भुत प्रकाश फैलता जा रहा है·

देखे अतीव तन्मयता से देखे अपना पूरा मनोयोग
शक्ति के ऊर्ध्वगमन को देखने मे ही लगा दे
अनुभव करते जाएँ कि नीचे से दबाव लगता जा रहा है
और शक्ति ऊपर की ओर उठती जा रही है
अब वह ज्योतित शक्ति तत्त्व विशुद्धि चक्र गले के आसपास पहुँच गया है
गले मे हल्की-सी खुजलाहट अथवा सरसराहट का अनुभव हो रहा है
हमारी तन्मयता बढती जा रही है
हमारी स्वर-शुद्धि और भाव-शुद्धि बढती जा रही है··
गले के निकट फैलने वाला वह शक्ति-पुञ्ज पदार्थ वहाँ के समस्त अशुद्ध-गले-सडे परमाणुओ को जलाता जा रहा है
स्वर अवरोधक तत्त्व जलते जा रहे है और हमारा स्वर मधुर-सुरीला होता जा रहा है
अब वह शक्ति गले से भी ऊपर उठ रही है
वह मस्तिष्क मे पहुँच रही है
मस्तिष्क का पिछला उभरा हुआ हिस्सा जहाँ ब्राह्मण लोग चोटी रखते है, ज्ञान-केन्द्र कहलाता है
अब वह शक्ति ज्ञान-केन्द्र पर पहुँच गई है
भाव करे ·
मस्तिष्क एकदम प्रकाशित हो गया है··
जैसे कोई दिव्य सर्चलाइट मस्तिष्क मे जल गई हो··
उस प्रकाश से हम मस्तिष्क का प्रत्येक भीतरी तत्त्व देख रहे है
अहा ! कितना अनुपम प्रकाश फैल रहा है, हमारे मस्तिष्क मे
कितनी अलौकिक छटा व्याप्त हो रही है हमारे मस्तिष्क मे !!!
अनुभव करे
वह दिव्य शक्ति ज्ञान-केन्द्र के चारो ओर चक्कर लगा रही है
एक पतली गोल ट्यूब-लाइट की तरह वह गोलाकार घूम रही है
भाव करे
वह शक्ति जितनी तीव्रता से घूम रही है, उतनी ही तीव्रता से ज्ञान के अवरोधक तत्त्वो को समाप्त करती

जा रही है
हमारी स्मरण शक्ति वढती जा रही है
हमारी प्रज्ञा-प्रतिभा एकदम विकसित होती जा रही है
हमारी मेधा शक्ति तीक्ष्ण होती जा रही है
वुद्धि पटु एव शीघ्रग्राही होती जा रही है
भावनाओ मे विशुद्धि का, पटुता का सचार हो रहा है
तीव्रतम भाव करे
हमारी स्मरण शक्ति पर, हमारे ज्ञान केन्द्र पर
इतना अधिक प्रकाश हो गया है कि हमारा चिन्तन
अतीत मे दूर-सुदूर तक पहुँच गया है
हमे अपने वचपन का सारा चित्र अपनी आँखो के सामने
दिखाई दे रहा है
हमारे अतीत जीवन की सभी वृत्तियाँ चलचित्र की
भाँति हमारी आँखो के सामने तैर रही है
देखें, वह शक्ति ज्ञान-केन्द्र के चारो ओर वडी तीव्रता
से घूम रही हैं
अनुभव करे ज्ञान केन्द्र—चोटी वाले स्थान पर प्रकाश
ही प्रकाश फैल गया है
वहाँ हल्की-हल्की खुजलाहट हो रही है
एक रमणीय, अदभुत, अलौकिक प्रभामण्डल सा वर्तुल
वहाँ वन गया है

अव वह शक्ति वहाँ से ऊपर उठ रही है
अर्थात् वह शक्ति ज्ञान-केन्द्र से आगे वढ रही है
ज्ञान-केन्द्र से आगे लगभग चार अगुल की दूरी पर
आनन्द केन्द्र है
जिसे हम तालु कहते हैं, वही आनन्द केन्द्र अथवा
शान्ति केन्द्र है
वह शक्ति पुन्ज ज्ञान केन्द्र से आगे वढकर शान्ति केन्द्र
तक पहुँच गया है
अव वह आनन्द केन्द्र पर चक्कर लगा रहा है
जैसे कोई चक्रीवाला पटाखा घूम रहा हो, वैसे ही वह
प्रकाश पुन्ज शक्ति स्रोत शाति केन्द्र के चारो ओर
घूम रहा है
अनुभव करें
उसके घुमाव मे एक लयवद्धता है
हमारी चेतना मे आनन्द का विस्तार होता जा रहा है
हमारे तन-मन और प्राणो मे अलौकिक शाति का प्रसार
हो रहा है
भाव करे

उस आनन्द केन्द्र से शाति का रस टपक रहा है
वह अमृत गले मे होकर सीधे तलवे पर स्पर्श करता हुआ, जीभ के आन्तरिक छोर पर गिर रहा है ...
एक अनुपम आस्वाद का हमे अनुभव हो रहा है,
ऐसा आस्वाद जो जीवन मे कभी भी प्राप्त नही हुआ
वह अमृत हमारी सम्पूर्ण चेतना को आप्यायित कर रहा है
हमारा मन, हमारी चेतना, इन क्षणो आनन्द मे विभोर हो रही है
हम अब भी आनन्द—आत्मिक-अलौकिक आनन्द के सागर मे ही गोते लगा रहे है ..
हम ऐसी डुबकी लगा रहे है—आनन्द सागर की इतनी गहराई मे पहुँच गये है कि वहाँ से बाहर निकलने की इच्छा ही नही हो रही है
अभी हम अपने अन्तरग आनन्द मे तन्मय हो गए है
ससार के सभी बाह्य विकल्प छूट गये है
बाहर की ओर अभी हमारा कोई लगाव खिचाव बचा ही नही है
भाव करे

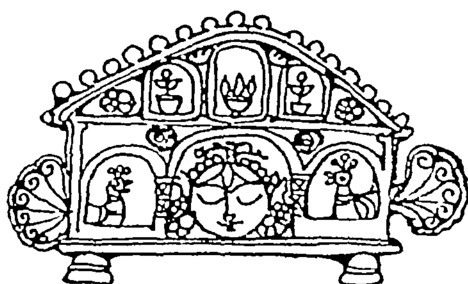
वह आनन्द रस, वह अमृत, अब आनन्द केन्द्र से गले की रसवाहिनी नली का स्पर्श करता हुआ सीधा हृदय केन्द्र पर पहुँच रहा है
अनुभव करे·
हृदय मे अनाहत चक्र पर अमृत की बूदे टपक रही है
हमारा हृदय बडी विभोरता मे खो रहा है
हृदय कमल एकदम प्रफुल्लित हो गया है
वह हर्ष—वह प्रफुल्लता, वर्णनातीत है·
वह अमृत हमे अमरता की ओर खीच रहा है
हमारा जीवन मरण-धर्मा है, यह अहसास इन क्षणो एकदम भुला दिया गया है
हम एकदम अमरण धर्मा-अमर होने का अनुभव कर रहे है
हमारे हृदय मे इतना अधिक आनन्द भर गया है कि हमारे तन-मन-प्राण सभी रोमाचित, प्रफुल्लित हो रहे हैं
भाव करे
अव हमारी जीभ उलट गई है
वास्तव मे अव हम जीभ को ऊपर की ओर से मोडकर अन्दर-पीछे ले जावे और तालु पर लगा दे

अनुभव करे
जीभ तालु पर लग गई है और आनन्द केन्द्र से टपकने वाला शान्तिरस—वे अमृत की बूंदे, जीभ के अग्रभाग पर गिर रही हैं
हमे अद्‌भुत अस्वादित स्वाद का अनुभव हो रहा है
वास्तव मे फीलिंग करे
हमारी जिह्वा पर अनुपम स्वाद उतर रहा है
अब उस स्वाद का आनन्द लेते हुए उस अनुभव को सजीव रखते हुए ही जीभ को पुन सीधा कर दे
अब सकल्प करें कि, वह शक्ति ज्ञान केन्द्र से आगे खिसक गई है
वह मस्तिष्क के अगले हिस्से— सहस्रार पर पहुँच गई है
भाव करे
सहस्रार मे एक सहस्र पखुरी वाला कमल प्रभावित हो रहा है
एक अनुपम प्रभा उन सहस्र पखुरियो से फूट रही है
एक अद्‌भुत प्रकाश वहाँ फैल रहा है
वह शक्ति सहस्रार के ईर्द-गिर्द चक्कर लगा रही है
पूरे मस्तिष्क मे अनुपम प्रकाश फैल गया है जैसे – कोई स्काई कलर की तेज पावर वाली मर्करी लाईट अन्दर जल गई है
वह प्रकाश इतना आह्लादक, इतना रमणीय है कि हमारा चित्त आनन्द विभोर हुआ जा रहा है
हमारी चेतना की यह रमणीय अवस्था अद्‌भुत हे
हम आज अभूतपूर्व आनन्द की स्थिति मे पहुँच गए हैं
आज हमारी चेतना प्रकाश पुन्ज बन गई है
वह एकदम हल्की हो गई हे
भाव करे
हमारे सहस्रार मे शक्ति का विस्फोट हो रहा है
हमारी मानसिक क्षमता मे अनन्तता का भाव गहरा रहा है
हमारे भीतर अनन्त शक्ति का जागरण हो रहा हे
देखे अन्तश्चक्षुओ से देखे
अब वह शक्ति सहस्रार को प्रज्वलित करके आगे बढ गई है
वह प्रवेश केन्द्र किवा दर्शन केन्द्र पर पहुँच गई है
भृकुटि मध्य का स्थान जहाँ पर पुरुप तिलक लगाते हैं अथवा महिलाएँ बिन्दिया लगाती हैं, उसे ही प्रवेश

केन्द्र की सज्ञा प्रदान की गई है
हमारा ध्यान योग मे प्रवेश वही से सुगम होता है
शक्ति स्रोत के प्रवेश केन्द्र पर पहुँचते ही वहा हल्के गुलाबी रग का प्रकाश फैल गया है
वहाँ हमे हल्की-हल्की लालिमा लिये हुए गुलाबी प्रकाश स्पष्ट दिखाई दे रहा है
हमारे भृकुटि मध्य मे प्रवेश केन्द्र पर प्रकाश की किरणे फूट रही हैं ·
वे किरणे बाहर तक प्रकाश फैला रही है ··
उन किरणो के द्वारा हमारे मस्तिष्क के चारो ओर एक आभा वलय बन गया है
हल्का गुलाबी रग का प्रकाश उस आभा वलय से फूट रहा है····
वह प्रकाश हमारी भावनाओ का प्रकाश है—
हमारी भावना, हमारे ज्ञान-दर्शन-चारित्र को साधना से भावित है
अत वह प्रकाश हमारी साधना का प्रकाश है
हमारी भावनाएँ प्रभावलय के रूप मे बाहर फैल रही है
हमारे चारो ओर गुलाबी छटा लिये प्रकाश ही प्रकाश फैल गया है··
इन क्षणो हमारी आत्मा एकदम निर्मल बन गई है ··
असत् भावनाएँ तिरोहित हो गई हैं
हमारी चेतना मे एक अहोभाव गहराता जा रहा है
अभी हम एकदम हल्के हो गये है
हम अधर होते जा रहे है··
हमारी तन्मयता, हमारी शान्ति बढती ही जा रही है···
वह शक्ति हमारी स्वय की शक्ति है
आज तक वह नीचे की ओर बहती रही है
आज उसने ऊर्ध्व दिशा पकड ली है
आज हमारी शक्ति का जागरण हो गया है
आज वह अपनी प्रभा को बाहर तक फैला रही है
सम्पूर्ण वायुमण्डल को अनुप्राणित-सुवासित-भावित कर रही है
अहा !! कितना सामर्थ्य है, हमारी अन्तर् शक्ति मे ? ··
भाव करे
अब वह शक्ति प्रवेश केन्द्र पर तीव्र प्रहार कर रही है ·
वह भृकुटी मध्य से बाहर निकल जाना चाहती है
हमारी भृकुटी के मध्य मे हल्की-हल्की खुजलाहट हो

रही है
वह शक्ति वहाँ से बाहर निकलने मे तत्पर है
उस शक्ति के प्रहार से हमारा पूरा शरीर रोमाञ्चित,
प्रकम्पित हो रहा है
आज का यह शक्ति-जागरण अपूर्व है
अभूतपूर्व है
भाव करें
अब वह शक्ति वही विकस्वर हो गई है
उसका विकास सम्पूर्ण शरीर मे व्याप्त हो गया है
वह बाहर विस्फोट नही करके अन्दर ही फैल गई है
अभी हमारे शरीर मे एक रमणीय प्रकाश फैल गया है
हमारे सम्पूर्ण शरीर मे एक ऊर्जस्विल शक्ति गहरा
रही है
वह शक्ति मारक-सहारक नही, वह सृजनात्मक
शक्ति है
वह प्राणिमात्र को आनन्द-शाति प्रदान करने वाली
शक्ति है
अभी हमारे तन-मन मे अपूर्व शान्ति का सचार हो
रहा है
हमारा सम्पूर्ण शरीर पारदर्शी काच की तरह प्रकाशित
हो रहा है
हमारे तन, मन, प्राण सभी कुछ एकदम हल्के हो
गये है
आज का यह हल्कापन अजीब है, अनुपम है
हमारे शरीर से चारो तरफ ऐसी किरणे निकल रही हैं
जो प्राणिमात्र के प्रति आनन्द का—परम शान्ति का
सम्प्रेषण कर रही हैं
हमारी आत्मा इन क्षणो, अद्भुत शान्ति से भर
गई है
यह आनन्द—यह शान्ति अनुपम है, वर्णनातीत है
आज का यह आनन्द ज्ञान, दर्शन, चारित्र मे रमणता
का आनन्द है
यह आत्म-रमणता का आनन्द है
हमारा यह शक्ति का जागरण बढता चला जाय
हमारा आत्म-रमणता का भाव गहराता चला जाय
हमारी यह शान्ति सदा-सदा बनी रहे और हजारो
हजार जीवो को आतृप्त आप्यायित करती रहे
इसी भावोन्मेष के साथ ध्यान से बाहर आ जाएँ
अपने आपको एकदम हल्का महसूस करें

हमारे तन-मन-प्राण प्रफुल्लित हो रहे है
इसी प्रफुल्लता का अनुभव करते हुए ध्यान से बाहर
आ जाएँ ·
प्रकृतिस्थ हो जाएँ
सम्पूर्ण वायुमण्डल मे हल्केपन का चारित्र की सुवास
का अनुभव करे
मन को शात-प्रशान्त अवस्था मे ले जाएं
पूरे शरीर मे सम्पूर्ण मानसिकता मे सहजता, सरलता,
सात्विकता का अनुभव करे···



२६

आत्मा और शरीर की भिन्नता का समीक्षण

ध्यान मुद्रा बना ले
(प्रथम तीन प्रक्रियाओ को अतीव तन्मयता के साथ दोहराये)
अपने शरीर को अत्यन्त हल्का अनुभव करे
तीव्रतम भाव करे
शरीर एकदम हल्का हो गया है
अपने मन को भी एकदम हल्का अनुभव करे
मन का सारा वोझ झटक गया है
मन के विकार क्षीण हो गये है
मन निर्भार हो गया है
शरीर और मन के हल्केपन के साथ ही आत्मा भी एकदम हल्की हो गई है
आज हम आत्मा और शरीर की भिन्नता का समीक्षण करेगे
हमारा ससार परिभ्रमण का किवा जन्म-मरण का मूल कारण है, हमने शरीर और आत्मा को अभिन्न मान लिया है
जव तक हमारा देहाभ्यास नही छूट जाता, जव तक हमे आत्मा और शरीर की भिन्नता का वोध नही हो जाता, तव तक हमारी दृष्टि सम्यक् नही वन सकती
और सम्यग्दृष्टि भाव के जागरण के विना मुक्ति तीन काल मे भी असम्भव है
यह ठीक है कि आत्मा और शरीर का सम्वन्ध अनादि है
किन्तु अनादि होने मात्र से दोनो एक नही हो जाते
स्वर्ण और पत्थर का सम्वन्ध भी तो अनादि है। किन्तु स्वर्ण को पत्थर अथवा मिट्टी मे अलग किया जा सकता है
ठीक इसी प्रकार साधना के द्वारा शरीर मे आत्मा को भिन्न किया जा सकता है
और शरीर से आत्मा का सर्वथा अलग हट जाना ही तो मोक्ष है

यो तो जब हमारी मृत्यु होती है, तव हम शरीर से अलग होते है, किन्तु वह अलगाव केवल स्थूल शरीर का है

सूक्ष्म शरीर अर्थात् तेजस् और कार्मण शरीर तो मृत्यु के समय भी और उसके अन्य गति मे गमन के समय भी साथ लगे ही रहते है

जब तक आत्मा मुक्त नही हो जाती, तव तक तेजस् कार्मण शरीर आत्मा के साथ क्षीर-नीर की तरह मिले हुए ही रहते है

अथवा हम यो कह सकते है कि तेजस्-कार्मण शरीर का आत्मा से अलग हो जाना ही तो मोक्ष है

तो आज हम शरीर और आत्मा की भिन्नता का वोव जागृत करने का प्रयास करेगे ·

आज हम आत्मा और शरीर को अलग-अलग तत्त्वो के रूप मे देखने का प्रयास करेगे

आज हम देहाभ्यास से ऊपर उठने का प्रयत्न कर रहे हैं

देहाभ्यास का अर्थ है शरीर मे आत्म-वुद्धि होना

शरीर और आत्मा को अभिन्न मान लेना

आज हम इस अनादि भाव को छिन्न-भिन्न कर देगे

आज की हमारी समीक्षण ध्यान की प्रक्रिया भाव-पूर्ण प्रक्रिया होगी

भाव करे

अभी हम ध्यान मुद्रा मे बैठे हुए है

हम अपने अन्तश्चक्षुओ से ध्यान मुद्रा मे स्थित अपने शरीर को देख रहे है

हमारा अभी का यह शरीर-दर्शन एक अलग प्रकार का शरीर-दर्शन है ··

आज हम शरीर को अपने से भिन्न स्थिति मे देख रहे है

हमे शरीर अपनी आत्मा से अलग दिखाई दे रहा है

जैसे कोई अन्य व्यक्ति हमारे सामने बैठा हो और हम उसकी गतिविधि के द्रष्टा बने हुए हो

उसी प्रकार अभी हमारी आत्मा शरीर को एक भिन्न व्यक्ति के रूप मे पास मे पडे हुए देख रही है

आज वह शरीर की गतिविधियो की प्रत्यक्ष द्रष्टा बनी हुई है

भाव करे

आत्मा के रूप मे हम अलग बैठे हुए हैं और शरीर हमारे सामने अलग स्थित है
जैसे हमारे सामने हमारी ही आकृति की कोई मूर्ति पड़ी हो
किन्तु वह मूर्ति निर्जीव नही सजीव है
उसकी श्वास प्रक्रिया चल रही है
उसके रक्त सचार को, उसके हार्ट की पम्पिग को हम स्पष्ट रूप से देख रहे है
भाव करे
हमारा शरीर एकदम पारदर्शी बन गया है
हमे शरीर की नर्व सिस्टम भी स्पष्ट दिखाई दे रही है
हमारी दृष्टि मे शरीर की प्रत्येक गतिविधि-सुस्पष्ट झलक रही है
देखे अन्तर् दृष्टि मे देखे
अत्यन्त तन्मयता से देखे
हमारा शरीर अलग है और हम अलग है
इन क्षणो शरीर और आत्मा का सम्बध एक अदृश्य रज्जु से जुडा हुआ-सा सम्बन्ध रह गया है'
हमे आज यह सम्बन्ध औपाधिक सम्बन्ध लग रहा है
आज हमे स्पष्ट भासित हो रहा है कि शरीर आत्मा का सम्बन्ध तादात्म्य सम्बन्ध नही है
यह ऊपर से आरोपित अथवा आगन्तुक सम्बन्ध है
आज हम इस सम्बन्ध को स्पष्ट रूप मे देख रहे हैं
हमे दिखाई दे रहा है कि शरीर बिल्कुल भिन्न है और आत्मा भिन्न है
इन क्षणो हमारी आत्मा एकदम असग हो गई है
हम उसे एक ज्योति के रूप मे देख रहे हैं
हमारे समस्त आत्म-प्रदेश एक ज्योतिपुञ्ज के रूप मे दिखाई दे रहे है
ऐसी दिव्य-ज्योति जो अद्भुत है, रमणीय है, अनुपम है, अलौकिक है
आत्म-स्वरूप का यह दर्शन अभूतपूर्व है, अदृष्टपूर्व है
इन क्षणो हमे आत्मा और शरीर का अपने मूल रूप मे दर्शन हो रहा है
दोनो की भिन्नता का स्पष्ट अवबोध हो रहा है
अब हमे अपना शरीर कुछ दूसरे ही रूप मे दिखाई दे रहा है
हमारे शरीर की चमक-दमक अथवा ओजस्विता क्षीण होती जा रही है

चूँकि यह औदारिक शरीर गलन-सडन स्वभाव वाला ही है। अत हम इसे विशीर्ण, जरा जीर्ण होते हुए स्पष्ट देख रहे है·

देखे · अपने सामने पडे हुए अपने शरीर को देखे
उसमे से अनन्त-अनन्त परमाणु निकल रहे है
हमारा शरीर जरा-जीर्ण होता जा रहा है
हमारा चेहरा झुर्रियो से भर रहा है
हमारे बाल सफेद हो रहे है
हमारे पूरे शरीर पर स्पष्ट रूप से वृद्धावस्था झलक रही है
किन्तु शरीर की जीर्णता को देखने वाली आत्मा तो यथावत् शक्ति, सम्पन्न है
वह शरीर की द्रष्टा अवश्य है, किन्तु उसमे कोई बदलाव नही है
उसकी अनन्त शक्ति तो ज्यो की त्यो है
शरीर की नश्वरता का आत्मा पर कोई प्रभाव नही है·
क्योकि आज हमने शरीर और आत्मा की भिन्नता का बोध प्राप्त कर लिया है
आत्मा जब शरीर को अपना मानती थी, तो उसके साथ विचलित हो जाती थी·· ·· उसके सुख-दु ख मे सहभागी होकर स्वय को सुखी-दु खी अनुभव करने लगती थी
किन्तु अब, अब स्थिति बदल गई है
शरीर की प्रक्रिया का आत्मा पर कोई प्रभाव नही पड रहा है· ·
आत्मा केवल द्रष्टा बनी हुई है
भाव करे
अब हम अपने ही शरीर को अपने सामने जलते हुए देख रहे है
देखे हमारा शरीर चिता पर रख दिया गया है· ·
चिता मे आग लगाई जा रही है
आग की ज्वालाएँ ऊपर उठ रही है ·
हमारे शरीर ने आग पकड ली है
वह जलने लगा है
शरीर पूरी तरह से जल रहा है
किन्तु आत्मा, आत्मा का कुछ नही बिगड रहा है·
वह तो शरीर से एकदम असग-असम्पृक्त हो गई है
वह तो चित्रपट के दृश्यो के समान अपने शरीर को जलते हुए दूर बैठी देख रही है

अहा ! ! आज का यह देह-दर्शन का भाव कितना भावपूर्ण है
शरीर आत्मा की भिन्नता का यह बोध कितना अनुपम है ···
भाव करे ·
अब हम पुन पीछे की ओर लौट रहे हैं
पुन देह भिन्नता के प्रारम्भिक बोध की ओर गति कर रहे हैं
हम ध्यान मुद्रा मे बैठे हुए हैं ··
शरीर से भिन्न आत्म-प्रदेश एक उज्ज्वल ज्योति के रूप मे स्थित है ·
हमारे सामने शरीर भी ध्यान मुद्रा मे स्थित है ·
हम इस देहात्मभिन्नता के बोध से जागृत होते हुए भी पुन. शरीर मे प्रवेश कर रहे हैं ··
क्योंकि जब तक कर्मों का सर्वथा क्षय नही हो जाता, तब तक सूक्ष्म-कार्मरण शरीर से आत्मा मुक्त नही हो जाती, शरीर मे स्थित रहना अनिवार्य है

अभी हम देह से सर्वथा अलग नही हो गए हैं ·
अभी तो हमने देहात्मभिन्नता का ज्ञान किया है
देहात्मभिन्नता के इस बोध को ही तो भेद-विज्ञान कहा गया है····

भेद-विज्ञान ही तो मुक्ति साधना की मूलभित्ति है ·
भेद विज्ञान के बिना मुक्ति साधना के प्रथम सोपान पर भी नही चढा जा सकता है
भेद-विज्ञान को ही तो सम्यग् दर्शन कहा जाता है और सम्यग् दर्शन ही तो मुक्ति मन्जिल की पहली पायरी है .
आज हमने देह और आत्मा की भिन्नता को जान लिया है ··

इस बोध से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि जब शरीर भी अपना नहीं है, तो शरीर के साथ सम्बन्ध रखने वाले अन्य पदार्थ हमारे कैसे हो सकते है ·

आचार्य अमित गति ने इसी बात को तो स्पष्ट किया है–

' यस्यास्ति नैक्य वपुषापि सार्ध,
तस्यास्ति कि पुत्र-कलत्र-मित्रै ।
पृथक् पृथक् चर्मरिणरोमकूपा ,
कुतोहि तिष्ठन्ति शरीर मध्ये ॥

अरे ! जब शरीर पर चमडी ही न हो, तो रोमकूप अर्थात् बाल कहाँ टिक पायेंगे ? इसी प्रकार जब शरीर

ही अपना नही है, तो उससे सम्बन्धित मित्र-परिजन एव अन्य नाशवान् पदार्थ हमारे कैसे हो सकते है ?
तो आज हमे ससार के सभी पदार्थ अपने से भिन्न लग रहे है·
अब हमे किन्ही तत्त्वो पर आसक्ति का भाव नही घेर सकता है
आज हमे जड पदार्थो की नश्वरता का एव उनके आत्मा के साथ बने औपाधिक सम्बन्धो का ज्ञान हो गया है
अब हम आत्म-विज्ञानी बन गये है···
हम शरीर मे रहते हुए भी शरीर से भिन्न है
अब हमारा जीवन जल-कमलवत् निर्लिप्त हो गया है
हम परिवार मे रह रहे है, किन्तु उसमे आसक्त नही है
जैसे कमल कीचड मे उत्पन्न होता है, जल मे वृद्धि पाता है, किन्तु इन दोनो से अलग ऊपर उठकर रहता है··
उसी प्रकार की अब हमारी चित्त-दशा हो गई है· हम ससार रूपी कीचड मे पैदा हुए, परिवार रूपी पानी मे बडे हुए, किन्तु अब हम इनसे असम्पृक्त-अनासक्त रहकर जीना सीख गए है
हमे ससार मे बाँधने वाला तत्त्व आसक्ति का भाव है
आज हमने देहात्मभिन्नता का बोध प्राप्त किया है ·
परिणामत हम भेद विज्ञानी बने और आसक्ति भाव से ऊपर उठ गए····
अब हमे ससार मे बाँधने वाला कोई तत्त्व नही है·
हम देह के द्रष्टा बने रहे
हमारा भेद विज्ञान का भाव गहराता चला जाय
हमारा यह अनासक्ति का भाव सदा-सदा बना रहे
हम आत्मा और शरीर की भिन्नता का बोध सदा-सदा बनाएँ रक्खे, इसी भावतन्मयता के साथ ध्यान से बाहर आ जाएँ
अपने आप को, अपने सम्पूर्ण परिवेश को एकदम हल्का अनुभव करे
अपने मन को एकदम हल्का महसूस करे
प्रकृतिस्थ हो जाएँ
ध्यान से बाहर आ जाएँ



१८

शरीर में आत्म-ज्योति का समीक्षण

ध्यान मुद्रा बनालें

(प्रथम तीन प्रक्रियाओं को अतीव भावपूर्ण तन्मयता के साथ दोहराएं)

शरीर के परिपूर्ण हल्केपन के अहसास को बहुत गहराई तक अनुभव करें

मन के भार रहित होने का अनुभव करें

भाव करें

आत्मा एकदम उज्ज्वल, निर्मल होती जा रही है

आत्मा की उज्ज्वलता का प्रभाव शरीर पर भी पड रहा है

शरीर भी उज्ज्वल प्रभा-स्वर होता जा रहा है

आज शरीर में फैलते हुए आत्म-ज्योति के प्रकाश को देखेंगे

आज हम चैतन्य प्रकाश का भावपूर्ण समीक्षण करेंगे

देखें अपने शरीर के भीतर प्रत्येक अणु-अणु में चेतना के सचार को देखें

शरीर व्यापी चैतन्य की सव्याप्ति का समीक्षण करें

अभी हमारा सम्पूर्ण शरीर आत्म-ज्योति से सव्याप्त होता जा रहा है

तीव्रतम अहोभाव से भरकर देखें

हमारा पूरा शरीर पारदर्शी हो गया है

हमारे शरीर के अणु-अणु में एक अलौकिक प्रकाश सचारित हो रहा है

हम उस अद्भुत प्रकाश के द्रष्टा बने हुए है

आज का हमारा द्रष्टा भाव बहुत आनन्द विभोर कर देने वाला है, क्योंकि आज हम स्वय की ज्योति का दर्शन कर रहे है

भाव करें

हमारे शरीर में हार्ट के पास-दोनों फेफड़ों के बीच में एक तीव्र किन्तु अत्यन्त आह्लादक मर्करी लाइट जल गई है —

हमारे सम्पूर्ण शरीर में प्रकाश ही प्रकाश फैल गया है •

यह प्रकाश आत्मा की ज्ञान-शक्ति का प्रकाश है····
यह प्रकाश ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से होने वाला प्रकाश है
हमारी चेतना एक प्रकाश पुञ्ज ही बन गई है····
हमारा शरीर पारदर्शी काच के समान हो गया है····
जैसे हमारी ध्यान मुद्रा स्थित देहाकृति ही कोई कॉच की बनी है
हमारे शरीर के रोम-रोम से अद्भुत प्रकाश की किरणे निकल रही है··
हमारे सम्पूर्ण शरीर से प्रकाश छिटक रहा है··
यह प्रकाश अतुलनीय है, अद्भुत है, अनुपम है··
हमारे तन, मन, प्राण सभी कुछ प्रभास्वर हो गये हैं··
यह प्रकाश केवल प्रकाश ही प्रकाश नही है···
इस प्रकाश मे चन्दन जैसी शीतलता भरी हुई है
इस प्रकाश से चन्द्रमा जैसी सौम्यता टपक रही है····
यही नही, इस प्रकाश से अद्भुत सौरभ फूट रही है····
वह सौरभ अथवा सुवास अतुलनीय है ·
चन्दन, केवडा, गुलाब या अन्य किसी भी सुगन्ध से उसकी तुलना नही की जा सकती है
वह सुगन्ध हमारे चारित्र की सुगन्ध है····
भाव करे
जैसे किसी ऐसी अगरबत्ती की महक हमारे चारो ओर व्याप्त हो गई है, जिसे हमने कभी देखा ही नही जिसकी गन्ध हमने कभी ली ही नही··
अहा! कितनी अद्भुत महक हमारे चारो ओर होती जा रही है ·
हमारे आस-पास का सम्पूर्ण वायुमण्डल सुवासित हो गया है·
यह सुवास हमारे चारित्र आराधना की सुवास है·
आज हम ज्ञान के प्रकाश एव चारित्र की सुवास का प्रत्यक्ष अनुभव कर रहे है
हमारे ज्ञान का प्रकाश सम्पूर्ण वायुमण्डल मे व्याप्त हो रहा है, तो हमारे चारित्र की सुवास से समस्त वातावरण महक रहा है·
कैसी अनिर्वचनीय महक फैल रही हैं, हमारे चारो ओर
भाव करे
हम इस अकथनीय सुवास मे सराबोर हो रहे हैं ·
चारित्र आराधना की यह सुवास हमारी समस्त चेतना मे अद्भुत आनन्द भर रही है····

हम इन क्षणो अनुपम आनन्द के सागर मे तैर रहे हैं '
हमारे समस्त सकल्प-विकल्प, जन्य तनाव समाप्त हो गये है
हमारे शरीर से प्रकाश और सुगन्ध दोनो निकल रहे है....
हमारा सम्पूर्ण शरीर पुलकित–रोमाचित हो रहा है
इन क्षणो हमारा ध्यान शरीर की नश्वरता पर नही, उसमे विद्यमान ज्ञान, दर्शन, चारित्र धारक आत्मा पर है
शरीर तो उस काच की बर्नी-शीशी के समान माध्यम है, जिसमे से प्रकाश और सुगन्ध फैल रही है
इन क्षणो हमारे चारो ओर प्रकाश ही प्रकाश है, सुगन्ध ही सुगन्ध है '
प्रकाश और सुगन्ध के अलावा यहाँ अभी और कुछ भी नही है
प्रकाश प्रकाश ' प्रकाश
सुवास '' सुवास सुवास
यह प्रकाश अत्यन्त रमणीय, अतीव आह्लादक है और यह सुवास भी परम प्रीतिकर परम आह्लादक है
अनुभव पूर्ण भाव करे
हम उस दिव्यातिदिव्य प्रकाश का उस अनुपम सुवास का जी भरकर आनन्द ले रहे है
डूबते जाएँ, उस प्रकाश और सुवास के आनन्द सागर मे
एक तन्मयता, एक तल्लीनता बना ले
कितना मन भावन ! कितना अलौकिक प्रकाश है यह !
इन क्षणो हम आनन्द ही आनन्द मे मग्न हैं
ससार के समस्त तनावो से दूर, समस्त विवादो से अलग, एकाकी आत्म-रमणता का आनन्द
और यह आनन्द कृत्रिम नही है
यह चैतन्य का सहज–सदा सहभागी आनन्द है
ज्ञान, दर्शन, चारित्र चेतना के सहज सहभागी गुण है, अत उनका प्रकाश, उनकी सुगन्ध चेतना की सहभागी सहज अवस्थाएँ है
अरे ! कृत्रिम तत्त्वो मे वह आनन्द है ही कहाँ •
जो आनन्द आत्मा की सहज अवस्था मे है, वह इन कृत्रिम पदार्थो मे कभी भी सम्भव नही है
भाव करे
हमारे शरीर मे जल रही नकली लाइट का यह सौम्य-शीतल प्रकाश बढ़ता जा रहा है

हृदय कमल से उठने वाली वह सौरभ बढती जा रही है
हमारे आस-पास के वातावरण मे एक अलौकिक मादकता का भाव गहराता जा रहा है
हमारी चेतना उस मादकता मे सराबोर हो रही है
वह मादकता नशीले पदार्थों की नही
वह मादकता चेतना की सहजावस्था की है
हम चारो ओर से सुवास और सुगन्ध से घिरे हुए है····
आज हमने एक अद्भुत दिव्यता का अनुपम आत्म–ज्योति का साक्षात्कार किया है
आज के हमारे ध्यान का आनन्द एक अलग ही प्रकार का आनन्द है
आज हम जीवन की अद्भुत दिव्यता की यात्रा कर आए है
हमारी यह दिव्यता की अलौकिक छटा बढती चली जाए
हमारे ज्ञान का प्रकाश निरन्तर ऊर्जस्वित होता चला जाए
हमारे चारित्र की सुवास दिग्दिगन्त को सुवासित करती रहे
हमारी चेतना मे ज्ञान और चारित्र के प्रति अहो भाव बढता चला जाय
इस उल्लसित भाव के साथ
इस कमनीय अहोभाव के साथ ध्यान से बाहर आ जाएँ
अपने आप को प्रकाश एव सुगन्ध के घेरे मे एकदम हल्का अनुभव करे
अपने तन, मन एव प्राणो मे एक सात्विक तरलता का अनुभव करे
यह तरलता, यह सात्विकता उच्चकोटि की है ·
इस अहोभाव मे रममाण होते हुए ध्यान से बाहर आ जाएँ ·



२८

ऊर्ध्वगमन एवं परमात्म-भाव का समीक्षण

ध्यान मुद्रा बना ले
(प्रथम तीन प्रक्रियाओं को अतीव उत्प्रेरक भावों के साथ दोहराएँ)
तीव्रतम भाव करें
हमारे कषायों का विरेचन हो गया है
हमारे मिथ्यात्व – अज्ञान आदि मूल दोषों का विरेचन हो गया है
हमारे समस्त विकार क्षीण हो गए है
हमारा मन एक दम हल्का हो गया है
आत्मा का हल्कापन सीमातीत हो गया है
आत्मा ऐसी हल्की हो गई है कि अब परमात्म-भाव तक पहुँचने मे अधिक श्रम की आवश्यकता नही रहेगी
कल्पना करें
इन क्षणों हम किसी शून्य जगल मे वृक्षों के झुरमुट के बीच एक शिलापट्ट पर बैठे हुए है
हमारे चारों ओर हरियाली ही हरियाली फैली हुई है
फूलों की मन्द-मन्द सुगन्ध वायु-मण्डल को सुरभित कर रही है
मन्द-मन्द बयार चल रही है जो तन मन को आह्लादित करने वाली है
कहीं-कहीं, कभी-कभी पक्षियों की चहचहाट के अतिरिक्त सम्पूर्ण वातावरण मे नीरव शांति का साम्राज्य छाया हुआ है
इन क्षणों हमारी ध्यान मुद्रा बहुत भावपूर्ण हो रही है
हम बाहर के समस्त द्वन्द्वों-तनावों से एकदम अलग हट गए है
अभी हम समस्त दुनिया से अलग एकाकी आत्मस्थ भाव में लीन हो रहे है
'एगोऽहं नत्थि मे कोई' का आगम वाक्य हमारी चेतना में रममाण हो रहा है—नस-नस में व्याप्त हो रहा है
भाव करें
जैसे हम शून्य निर्जन वन में बैठे हुए है —

अपने-पराये सभी व्यक्तियो से एकदम दूर एकात्म भावलीन है हम
तेरे-मेरे की सारी परिधिया टूट गई है'
विचारो मे व्यापकता-विराटता का सचार हो रहा है ·
हमारे चारो तरफ दूर-सुदूर तक वातावरण मे नीरव शान्ति छाई हुई है
हम एक शिलापट्ट पर खुले आकाश मे शात-प्रशात होकर स्थिरासन मे बैठे हुए है' ··
सकल्प करे····
अचानक हमारे शरीर मे अद्‌भुत हल्कापन आ रहा है
ऐसा हल्कापन, जैसा हमने पूर्व मे कभी अनुभव नही किया
गुब्बारे से भी अधिक हल्का हो गया है हमारा शरीर
अरे ! यह क्या ? हमारा शरीर आसन से ऊपर उठने लगा है
जैसे हल्की चीज ऊपर उठती है, उसी प्रकार हमारा शरीर ऊपर उठता जा रहा है ·
शरीर अधर हो रहा है
हमारे शरीर को अब नीचे किसी आश्रय-सहारे की आवश्यकता नही रही है
वह आसन से लगभग चार अगुल ऊपर अधर हो गया है
हमारे तन के साथ हमारा मन भी एकदम हल्का होता जा रहा है ·
इन क्षणो का हमारे तन और मन का हल्कापन अनुपम है
भाव करे ·
हमारा शरीर ऊपर उठता जा रहा है
वह निरन्तर ऊर्ध्वगमन कर रहा है ·
अहा ! कितने उल्लसित—आनन्द भरे क्षण है ये
हम जैसे आकाश मे बद्ध पर्यकासन ही तैरते जा रहे है ··
ऊपर उडते जा रहे है ·
हमारा यह ऊर्ध्वगमन अत्यन्त आह्लादक, अतीव प्रमोद-जनक है
हम विशाल आकाश मे ऊपर उठते ही जा रहे हैं, हम बहुत ऊँचाइयो पर पहुँच रहे है ···
चू कि हमारा मन भी एकदम हल्का हो गया है, अत भावात्मक दृष्टि से भी इस समय हमारी चेतना बहुत ऊँचाइयो का स्पर्श कर रही है

द्रव्य और भाव अर्थात् तन और मन से हम ऊपर उठते जा रहे हैं

अनुभव कर अपनी ऊपर उठती हुई स्थिति का अनुभव कर

हम आकाश में बहुत ऊँचे उठ गये हैं

हम ऐसे वायु मण्डल में पहुँच गए जहां चारों ओर सुगन्ध ही सुगन्ध फैल रही है

हम आत्मिक आनन्द से आप्यायित होते जा रहे हैं

सहसा हम अधर आकाश में स्थिर हो गए हैं

हमारी अन्तर् दृष्टि खुल गई है और हमें दूर-सुदूर तक दिखाई दे रहा है

सहसा हमारी दृष्टि एक अलौकिक प्रभा-सम्पन्न दिव्य पुरुष पर पड़ती है

एक आकाशचारी पुरुष दूर-सुदूर से हमारी ओर चला आ रहा है

उसका सम्पूर्ण शरीर स्वर्ण-कान्ति जैसा चमक रहा है

चेहरे पर अनन्त सूर्यों से भी अधिक तेज दमक रहा है

उस तेजस्विता के सामने हमारी दृष्टि चौंधिया रही है

हमारी दृष्टि में चकाचौंध उत्पन्न हो रही है

अहा ! कितनी अनुपम तेजस्विता ! कितना अलौकिक रूप ! कैसी दिव्य छटा ! कितना नयनाभिराम सौन्दर्य !

मन मुग्ध हुआ जा रहा है

चेतना आनन्द-विभोर हुए जा रही है

अहो ! यह लोकोत्तर आकाश-पुरुष हमारे निकट आता जा रहा है

उसकी तेजस्विता हमारे लिये असह्य होती जा रही है

हम उस तेजस्विता में आकण्ठ डूबते जा रहे हैं

अरे ! यह लोकोत्तर महापुरुष और कोई नहीं परम करुणामूर्ति परम आराध्य हमारे गुरुदेव ही हैं

आज वे अपने मूल रूप में आ रहे हैं

हमारी चर्मचक्षु दृष्टि ने आज तक उनके आन्तरिक रूप को, उनकी अपरम्पार तेजस्विता को देखा नहीं

कितनी करुणा टपक रही है—उनकी दृष्टि से····
कितनी सौम्यता व्याप्त हो रही है, उनके चेहरे पर
सूर्यो का प्रकाश आज इस दिव्य काति के समक्ष परास्त हो गया है
चन्द्रमा की सौम्यता आज इस दिव्य प्रभास्वर, शान्त-प्रशान्त छटा के सामने हतप्रभ हो गई है
ओ हो ! वे महापुरुप तो सहसा हमारे समीप आकर खडे हो गए है
उनकी अँगुलिया एव हथेली के मध्य भाग से तेज किरणे निकल रही है, जो सीधी हमारी चेतना तक पहुँच रही है
हमारी रही सही कलुपता भी उन किरणो की ऊष्मा से भस्म होती जा रही है
हमारी चेतना मे अद्भुत विशुद्धि एव अप्रतिम प्रकाश फैलता जा रहा है
उस महापुरुष – परम गुरु की दिव्य एव सौम्य दृष्टि से मानो अमृत का निर्भर ही बह रहा है·
वह अमिय धारा हमारी आत्मा को आनन्द से आप्यायित कर रही है
अहो ! कितनी करुणा बरस रही है हमारे ऊपर
हम उस करुणा की अमृतधारा मे नहाकर सराबोर हो रहे है··
भाव करे
उस दिव्य पुरुष ने अपनी भुजाएँ हमारी ओर बढा दी है ·
अरे ! वे हमे अपनी भुजाओ मे भर लेना चाहते है
वे हमे अपने अनुरूप ही बना देना चाहते है
नही, वे हमे अपने मे ही मिला देना चाहते है
एक अस्तित्व मे ही समा लेना चाहते है
उनकी भुजाएँ आगे बढ रही हैं
वे हमारे अत्यन्त निकट आ गए है
और और उन्होने हमे अपनी भुजाओ मे भर लिया
आत्मसात् कर लिया
अहा ! कितने आनन्द के क्षण है ये
परमात्म-मिलन के ये अद्भुत क्षण अनुपमेय हैं
हमारी सम्पूर्ण चेतना मे एक अलौकिक भाव भर गया है
हमारे सम्पूर्ण शरीर मे एक सनसनाहट फैल रही है

परमात्म-भाव का दिव्य-प्रकाश हमारी चेतना में भर गया है

हमारी नस-नस में रक्त नहीं, अमृत-अमृत दौड़ रहा है

हमारे रोग के कीटाणु न जाने कहाँ विलीन हो गए हैं

और ? जहाँ अमृत धारा ही बहती हो वहाँ रोगाणु रह ही कैसे सकते हैं

और परमात्म-भाव – सद्गुरुदेव की अप्रतिम कृपा के पश्चात् अमृत के अलावा और मिल ही क्या सकता है

अहा ! हमारी चेतना अद्भुत आनन्द में, अनुपम शान्ति में सराबोर हो रही है

सद्गुरुदेव की साक्षात् कृपा दृष्टि ने हमारे तन-मन सभी शुद्ध पवित्र हो गए हैं

तन के रोग और मन के विकार नष्ट हो गए हैं

अनुपम कृपा बरस रही है, हमारे ऊपर परमात्म-स्वरूप सद्गुरुदेव की

आज हमारी वाणी मूक हो गई है

सम्पूर्ण शरीर रोमांचित हो रहा है

हम सद्गुरुदेव की कृपा को शब्दों में व्यक्त करना चाहते हैं, किन्तु हमें ऐसे शब्द ही नहीं मिल रहे हैं

हमारी वाणी ही नहीं, सोचने की शक्ति भी मूक हो गई है

इस क्षण हम अपने आप में लीन हो गए हैं

स्वयं में आ गए हैं

हमारी यह आत्मलीनता अधिक गहरी है...

आह्लादक है

भाव भर

हम उस दिव्य आभा रूप सद्गुरुदेव की भुजाओं में समाते जा रहे हैं

उन दिव्य किरणो से हमारा सम्पूर्ण शरीर आलोकित होता जा रहा है
अभी हम दुनिया के समस्त विचारो से परे हो गए है
केवल प्रकाशमय हो गए है
बाहर का भाव मिटा कि अन्धकार विलीन हुआ
बाहर का भाव मिटा कि अन्तर् का, परमात्म-भाव का प्रकाश प्रज्ज्वलित हुआ··
अहा! सद्गुरु के रूप मे अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त आनन्दमय परमात्मा हमारे अन्दर बैठ गए है
अभी हमारी चेतना को वह आनन्द प्राप्त हो रहा है कि अब इस स्थिति से बाहर आने का भाव ही नही बनता है
परमात्मा की इस अप्रतिम सन्निधि को छोडने को जी ही नही करता है
भाव हो रहा है कि परमात्मा के इस दिव्य रूप को देखते ही चले जाएँ, देखते ही चले जाएँ
हम अभी अनन्त-अपार आनन्द के सागर मे तैर रहे है
भाव करे
दिव्य द्रष्टा परम गुरु ने हमारे प्रवेश द्वार किंवा दर्शन-केन्द्र के द्वारा हमारे भीतर शक्तिपात कर दिया
और इस शक्तिपात के साथ ही वह दिव्य पुरुष, वह लोकोत्तर व्यक्तित्व हमे अपने भुजपाश से मुक्त कर देता है
अरे! अरे!! यह क्या? वह परम पुरुष हमसे अलग होते जा रहे है
वे हम से दूर-दूर-सुदूर चले जा रहे हैं····
हम असहाय सी स्थिति मे उन्हे जाते हुए अपलक देख रहे है···
वह दिव्य छटा हमारी आखो से ओझल हो रही है
वह मोहिनी मूरत हमारी दृष्टि से दूर चली गई
अभी हमारे कानो मे उस दिव्य पुरुष की एक ध्वनि पड रही है
गहन गम्भीर ध्वनि "अप्पाण सरण गच्छ, अप्पाण सरण गच्छ अप्पाण सरण गच्छ और और वह महान् दिव्य-ज्योति हमसे दूर-सुदूर चली गई
वह परम गुरु हमे पुन अधर आकाश मे एकाकी असहाय छोड कर चले गये
नही—नही अब हम असहाय कहाँ रहे

इस प्रकार परोपकारी पुरुष ने हमारे भीतर दिव्य शक्तिपात आज कर दिया है
हमारी नसों में अब रक्त नहीं अमृत बह रहा है
महा प्रचण्ड शक्ति का धारक विद्युत प्रवाह बह रहा है
अब हम अन्य किसी की नहीं, अपनी शरण में लौट रहे हैं
हम अपनी आत्मा की शरण में जा रहे हैं
आत्म-शरण के इस महाभाव में भरे हुए ही हम धीरे-धीरे नीचे उतर रहे हैं
बहुत धीरे-धीरे आकाश में तैरते से हम नीचे अपने मूल स्थान पर पहुँच रहे हैं
अब हम एक अनिर्वचनीय आनन्द भरे हुए अपने मूल स्थान शिलापट्ट पर आ गए हैं
आज की ध्यान साधना का यह आनन्द शब्दातीत है वर्णनातीत है – अलौकिक है – अनुपम है
आज की हमारी ध्यान साधना परमोच्च श्रेणी की ध्यान साधना थी
आज हम देहातीत अवस्था में पहुँच गए थे
आज हम परमात्म मिलन के द्वार पर पहुँच गये थे
अहा ! आज हमारी चेतना कितने आनन्द में डूब गई थी
हमारा यह आनन्द सदा-सदा बना रहे
हमारी यह शान्ति शाश्वतता में रूपान्तरित हो जाए
इसी भावाभिषेकपूर्ण अहोभाव के साथ ध्यान से बाहर आ जाएँ
अपने आपको प्रसन्नचित्त, प्रफुल्लित वदन एवं आनन्द ऊर्मित अनुभव करें
अपने सम्पूर्ण परिवेश को हल्का अनुभव करें
आत्मलीनता की गहराई में डुबकी लगाते रहें

२९

समीक्षण की एक प्रक्रिया–गुणस्थान आरोहण

ध्यान मुद्रा बनाले
(प्रथम तीन प्रक्रियाओ को अनन्य श्रद्धापूर्ण सकल्प के साथ दोहराएँ)
हमारा शरीर बहुत अधिक हल्का हो गया है
हमारा मन भी एकदम हल्का होता जा रहा है
किन्तु मन मे रहा हुआ थोडा भी मैल उसे बार-बार भारी कर देता है
हम साधना के द्वारा मन को हल्का करते है, किन्तु २३ घटो की प्रवृत्तियाँ पुन -पुन उसे भारी बोझिल बना देती है ··
जैसे कोई व्यक्ति कमरे के एक दरवाजे से कचरा बाहर निकालता है और अन्य पाँच खिडकियो से हवा के साथ पुन कचरा कमरे मे आता रहता है
यदि खिडकियाँ खुली है तो २३ घटा ४० मिनिट कचरा आता रहता है
केवल बीस मिनट उसकी सफाई के लिये दिये जाते है ·
वे बीस मिनट भी पर्याप्त हो सकते है यदि नवीन कचरे के आने के द्वारो को बद कर दिया जाय
आज हम उन द्वारो का समीक्षण करेगे
समीक्षण ही नही, आत्मा मे कर्म मैल के आने के द्वारो को बद करते हुए क्रमश ऊर्ध्वारोहण करेंगे ··
जिसे आगमिक भाषा मे गुणस्थान–आरोहण कहा जाता है
गुणस्थान आरोहण का अर्थ है आत्मा का क्रमिक रूप से विकास की ओर गतिशील होना
निचली कक्षाओ से ऊपर उठते हुए ऊपर की कक्षाओ मे प्रवेश करते जाना
गुणस्थान आरोहण के पूर्व हम आत्मा की अनादि-कालीन मूल स्थिति का समीक्षण करेगे
भाव करें

हमारी आत्मा की यह सबसे निम्नतम दशा है, जहाँ हमे ज्ञान की एक छोटी-सी किरण भी दिखाई नही देती किन्तु घुणाक्षर न्याय से अथवा गिरि-नदी पाषाण के न्याय से हमारी चेतना मे सहसा परिवर्तन होने लगा है ·

भाव करे

अब हमारी अज्ञान-आवृत चेतना मे कुछ प्रकाश फैलने लगा है····

यद्यपि यह प्रकाश इतना मन्द-अस्पष्ट है कि इसमे आत्म-बोध नही हो पा रहा है

किन्तु इसे हम आगमिक भाषा मे कृष्ण पक्ष से शुक्ल पक्ष मे आना कह सकते है

उस निगोद अवस्था से निकल कर अब हमारी आत्मा प्रत्येक वनस्पति मे आ गई है

भाव करे

अब हमारी चेतना आम की गुठली मे जीव के रूप मे बैठी है

अभी हम सुखी नही वन गये है, फिर भी एक शरीर मे अनन्त जीव वाली दशा से तो बहुत ऊपर उठ गये है

अभी हम एक शरीर मे, एक ही जीव के रूप मे है

फिर भी हमारी यह अवस्था भी अत्यन्त सुपुप्त अवस्था है

शास्त्रीय दृष्टि से इसे एकेन्द्रिय वर्ग कहा जाता है

अनुभव करे कि हमारी चेतना मे एक और प्रकाश किरण फूट रही है

अब हम उस एकेन्द्रिय की निम्नतम श्रेणी से कुछ ऊपर उठकर द्वीन्द्रिय वर्ग मे आ गये है

भाव करे कि इस समय हम एक कीडे के रूप मे रेंग रहे है

एकदम गन्दगी मे लिप्त हमारा तन अत्यन्त मुलायम होते हुए भी अशोभनीय बना हुआ है

कल्पना करे एक बडा कीडा हमारे पीछे लगा है अथवा पाँच-दस चिडियाँ हमारे पीछे लग गई है और हम छट-पटा कर अपने प्राण बचाने को भाग जाना चाहते है

किन्तु परन्तु कहाँ है वह स्वतत्रता और शक्ति, कि हम अपने से बलशाली प्राणियो से बचकर निकल जाये

लो,··· हम मर गए हैं कीडे के रूप से हमारा उद्धार हो गया है और अब हम चीटी के रूप मे उत्पन्न हो गये हैं

हमारी आत्मा की यह सबसे निम्नतम दशा है, जहाँ हमे ज्ञान की एक छोटी-सी किरण भी दिखाई नही देती·

किन्तु घुणाक्षर न्याय से अथवा गिरि-नदी पाषाण के न्याय से हमारी चेतना मे सहसा परिवर्तन होने लगा है·

भाव करे

अब हमारी अज्ञान-आवृत चेतना मे कुछ प्रकाश फैलने लगा है···

यद्यपि यह प्रकाश इतना मन्द-अस्पष्ट है कि इसमे आत्म-बोध नही हो पा रहा है

किन्तु इसे हम आगमिक भाषा मे कृष्ण पक्ष से शुक्ल पक्ष मे आना कह सकते है

उस निगोद अवस्था से निकल कर अब हमारी आत्मा प्रत्येक वनस्पति मे आ गई है

भाव करे

अब हमारी चेतना आम की गुठली मे जीव के रूप मे बैठी है

अभी हम सुखी नही बन गये है, फिर भी एक शरीर मे अनन्त जीव वाली दशा से तो बहुत ऊपर उठ गये है

अभी हम एक शरीर मे, एक ही जीव के रूप मे है

फिर भी हमारी यह अवस्था भी अत्यन्त सुषुप्त अवस्था है

शास्त्रीय दृष्टि से इसे एकेन्द्रिय वर्ग कहा जाता है

अनुभव करे कि हमारी चेतना मे एक और प्रकाश किरण फूट रही है

अब हम उस एकेन्द्रिय की निम्नतम श्रेणी से कुछ ऊपर उठकर द्वीन्द्रिय वर्ग मे आ गये है

भाव करे कि इस समय हम एक कीडे के रूप मे रेंग रहे हे

एकदम गन्दगी मे लिप्त हमारा तन अत्यन्त मुलायम होते हुए भी अशोभनीय बना हुआ है

कल्पना करे एक बडा कीडा हमारे पीछे लगा है अथवा पाँच-दस चिडियाँ हमारे पीछे लग गई है और हम छट-पटा कर अपने प्राण बचाने को भाग जाना चाहते हे

किन्तु परन्तु कहाँ है वह स्वतत्रता और शक्ति, कि हम अपने मे बलशाली प्राणियो मे बचकर निकल जाये

लो,·· हम मर गए है कीडे के रूप से हमारा उद्धार हो गया है और अब हम चीटी के रूप मे उत्पन्न हो गये है

इन क्षणो हम तीन इन्द्रिय वाले एक प्राणी है चीटी के
रूप मे हम अपना खाद्य इकट्ठा करने को दौड रहे हैं
हम सडक पार कर रहे हैं और किसी व्यक्ति का पैर हम
पर लग जाता है
हम तडप रहे हैं
अनुभव करे
हम छटपटा रहे हैं इधर से उधर घुडक रहे हैं
और हमारे प्राण निकल गये
हम सहज विकास करते जा रहे हैं
विना किसी पुण्य के पहाड से गिरने वाले पत्थर की
तरह जो घुडकता-घुडकता अपने आप गोल मटोल हो
जाता है
विना किसी कल्पना के वह शालिग्राम बन जाता है
उसी प्रकार हम भी विकास की ओर बढते जा रहे हैं
तीन इन्द्रियो से निकल कर हम अब अपने आपको एक
मधुमक्खी के रूप मे देख रहे हैं
हमारी यह आत्मा पुष्पो पर मँडरा रही है
पुष्पो का पराग-रस एकत्रित करने को इधर-उधर दौड
रही है
हमारा तन एकदम हल्का-हल्का है और हम निर्बाध
गगन की सैर कर रहे है
हम आकाश मे उड रहे है एक मधुमक्खी के रूप मे
हम रस-सचय करके ले आये है
अपने छत्ते मे रस एकत्रित कर रहे है
अब क्षुद्र योनि मे भी हम प्रसन्न है
अपने कार्य मे व्यस्त हैं
किन्तु सहसा एक मधु एकत्रित करने वाला शिकारी
आकर हमारे छत्ते के आसपास आग लगाकर धुँआ ही
धुँआ कर देता है
हम धुँए के कारण अन्धी हो जाती है
हमारा पूरा-हजारो मक्खियो का परिवार इधर-उधर
अस्त-व्यस्त होकर भागने लगता है
हममे से वहुत-सी अचेत हो जाती है
वहुत-सी तत्काल मर जाती हैं
उन मृत्यून्मुखी मक्खियो मे हम भी तडप-तडप कर अपने
प्राण दे देते हैं
किन्तु मरते समय हमारे भीतर वैर का कलुषित भाव
निर्मित हो जाता है

सहसा एक शिकारी पीछे से गोली चलाता है और हम एक भयकर गर्जना के साथ धराशायी हो जाते है
वास्तव मे हम अपने आपको एक तडफडाते सिह के रूप मे अनुभव करे
यह क्रम एक दृष्टि से तो चेतना का विकास क्रम है, किन्तु क्रूरता की दृष्टि से तो पाप की प्रचुरता का क्रम है
इस रूप मे यह आत्मा एकेन्द्रिय-निगोद से निकलकर विकास क्रम की यात्रा करते हुए पचेन्द्रिय तक पहुँच गई है
इस विकास के साथ ही हमारी क्रूरता भी बढती गई है
हम एकेन्द्रिय से पचेन्द्रिय जैसी उच्च जाति मे पहुँच कर भी शेर जैसी क्रूर योनि मे आ गये है
भाव करे
हम इस समय एक शक्तिशाली सिह होकर भी बदूक की गोली के शिकार होकर भूमि पर पडे छटपटा रहे है
चन्द क्षणो छटपटा कर हम मृत्यु को प्राप्त हो जाते है
और वहाँ से मरकर नरक मे चले जाते हैं
वह हमारा शत्रु शिकारी भी मरकर नरक मे चला आता है
एक दूसरे के वैर का बदला हम नरक भूमि मे पूरा कर रहे है
दारुण दु खो के बीच हम एक दूसरे को निरीह दृष्टि से देख रहे है
हमारे विचारो मे कोमलता का सचार हो रहा है
एक दूसरे के प्रति करुणा के भाव फूट रहे हैं
विचारो मे सरलता आ रही है
हम नरक की अनन्त वेदना को भोग कर अकाम निर्जरा से कर्म क्षीण करते हुए वहाँ से निकल कर मनुष्य योनि मे आ गये है
इसी प्रकार के विकास क्रम मे हम सुकुल आर्य क्षेत्र मे पहुँच जाते है
भाव करें
अब हम एक उच्चकुलीन मनुष्य के रूप मे उत्पन्न हो गए है
सयोगत हमे वीतराग भगवान् की देशना सुनने का सुअवसर प्राप्त होता है और हमारी आत्मा धर्म-श्रवण कर सम्यक्त्व-शुद्ध श्रद्धा की ओर उन्मुख होती है

हम उस पारधी पर अत्यन्त क्रुद्ध हो जाते हैं और मर कर जहरीले बिच्छू के रूप मे उसी चार इन्द्रिय वर्ग मे उत्पन्न हो जाते है

हमारा वैर भाव उस शत्रु को ढूँढने लगता है हमारा कषाय तीव्रतम होता जा रहा है

हम अपने पूर्व जन्म के शत्रु को नष्ट करे उसके पूर्व ही उसी शिकारी-पारधी के द्वारा हम मारे जाते है

हमारा द्वेष तीव्रता से बढ जाता है·

हम उस चतुरिन्द्रिय योनि से निकलकर पचेन्द्रिय योनि मे एक सर्प के रूप मे जन्म ले लेते है··

भाव करे

वास्तव मे हम इन क्षणो एक जहरीले नाग के रूप मे है

हम कुछ बडे होकर अपने घातक-शत्रु को खोज रहे है

वह हमारा हत्यारा सामने चला जा रहा है और हम क्रोधारुण नेत्रो से उसकी ओर देख रहे है

हमारा क्रोध प्रचण्ड हो जाता है

हम तेज फूत्कार करते हुए उसके पीछे दौडते है और पीछे से उसे डक मार देते है

वह पीछे मुडकर हाथ मे पकडे हुए, किसी शस्त्र का हम पर बडे जोरो का प्रहार करता है

हम तडफडा कर अत्यन्त क्रूर परिणामो के साथ मरकर एक सिहनी के गर्भ मे उत्पन्न हो जाते है

कल्पना करे

हम अभी एक सिहनी के गर्भ मे सकुचित अग पडे हुए है

गर्भ की भयकर वेदना का हमे प्रत्यक्ष अनुभव हो रहा है

हम अभी एक काल कोठरी मे पडे हुए है

हमे अपनी कोई सुध-बुध नही है·

और अब हम गर्भ से बाहर निकलकर एक सिह शावक-शेर के छोटे से बच्चे के रूप मे क्रीडा कर रहे है

हम विकसित होकर एक विकराल सिह के रूप मे वन-भ्रमण कर रहे है

अपने आहार के लिये वन मे भ्रमण करते हुए हमे एक हरिणी अपने बच्चे के साथ भ्रमण करती हुई दिखाई देती है·

और हम उसके पीछे दौडते है

क्रूरता का भाव हमारी नस-नस मे समाया हुआ है·

सहसा एक शिकारी पीछे से गोली चलाता है और हम एक भयंकर गर्जना के साथ धराशायी हो जाते हैं
वास्तव में हम अपने आपको एक तड़फड़ाते सिंह के रूप में अनुभव करें
यह क्रम एक दृष्टि से तो चेतना का विकास क्रम है, किन्तु क्रूरता की दृष्टि से तो पाप की प्रचुरता का क्रम है
इस रूप में यह आत्मा एकेन्द्रिय-निगोद से निकलकर विकास क्रम की यात्रा करते हुए पचेन्द्रिय तक पहुँच गई है
इस विकास के साथ ही हमारी क्रूरता भी बढ़ती गई है
हम एकेन्द्रिय से पचेन्द्रिय जैसी उच्च जाति में पहुँच कर भी शेर जैसी क्रूर योनि में आ गये हैं
भाव करें
हम इस समय एक शक्तिशाली सिंह होकर भी बंदूक की गोली के शिकार होकर भूमि पर पड़े छटपटा रहे हैं
चन्द क्षणों छटपटा कर हम मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं
और वहाँ से मरकर नरक में चले जाते हैं
यह हमारा शत्रु शिकारी भी मरकर नरक में चला आता है
एक दूसरे के वैर का बदला हम नरक भूमि में पूरा कर रहे हैं
दारुण दुःखों के बीच हम एक दूसरे को निरीह दृष्टि से देख रहे।

हमे आत्मबोध प्राप्त होता है, किन्तु कुछ शका कुशकाएँ बनी रहती हैं

परिणामत. हम विचारो की डॉवाडोल स्थिति मे पहुँच जाते है

इसी अवस्था को आगमिक भाषा मे तृतीय मिश्र गुण-स्थान कहते है…

यह आत्मा के उत्थान की ओर गतिशीलता का ससूचन है

कुछ समय—अर्थात् अन्तर्मुहूर्त तक ही विचारो की यह दोलायमान स्थिति रहती है

धीरे-धीरे हमारे विचारो मे विशुद्धता का प्रवेश हो रहा है

हमारी अनादिकालीन राग-द्वेष की ग्रन्थि ढीली हो रही है

हमारे अध्यवसायो मे विशुद्धि का प्रकर्ष बढता जा रहा है

अध्यवसायो की इस विशुद्ध स्थिति को शास्त्रीय भाषा मे यथा प्रवृत्तिकरण कहते है

भाव करें

हमारे भाव जगत् मे एक क्रान्तिकारी परिवर्तन हो रहा है....

हमारे अध्यवसायो में आत्म-दर्शन की भूमिका का निर्माण हो रहा है ..

वीतराग-वाणी पर चिन्तन करते-करते हमारे विचार अभूतपूर्व रूप से विशुद्ध हो रहे है . .

ऐसी विशुद्धि जो पूर्व मे कभी नही हुई ..

कल्पना करे ..

अभी हमारी चेतना वीतराग उपदेश के गहन चिन्तन मे खोई हुई है

वह एक-एक शब्द की गहरी चिन्तना मे डूबी हुई है.. .

भाव विशुद्धि की यह प्रक्रिया अपूर्व करण कहलाती है .

आत्मा मे एकदम विशुद्धि बढती जा रही है

कर्मो के, मुख्य रूप से मोहनीय कर्म के वृन्द क्षीण होते जा रहे हैं .

मिथ्यात्व मोह के दलिक तीव्रता से क्षीण हो रहे हैं और आत्मा मे एक अलौकिक अभूतपूर्व प्रकाश फैलता जा रहा है.

अव हमारी आत्मा इस स्थिति पर पहुँच गई है कि स्व-दर्शन किये बिना नही रहेगी और इस भाव-प्रकर्ष को

अनिवृत्तिकरण कहा जाता है
भाव करें तीव्रतम अहोभाव में बहें
अभी हमारी आत्मा में दिव्य प्रकाश फूट रहा है
यह देखें दर्शन मोहनीय कर्म का प्रबलतम क्षयोपशम हो गया है और सम्यक्दर्शन का अनुपम प्रकाश हमारी चेतना में फैल गया है
हम इन क्षणों में आत्मदर्शन का अपूर्व आनन्द ले रहे हैं
हमें स्वयं का बोध–स्वदर्शन हो गया है
हमारे अनादिकालीन मिथ्यात्व का अवसान हो चुका है
हमारी चेतना में वीतराग वचनों पर अनन्य आस्था का जागरण हो गया है
सुदेव, सुगुरु और सुधर्म के प्रति हमारी प्रीति गहरी होती जा रही है
जिन वचनों पर श्रद्धा का भाव अटूट एवं गहरा होता जा रहा है
हम अब विकास क्रम की चौथी कक्षा और अध्यात्म की प्रथम कक्षा में प्रवेश कर रहे हैं
इसे ही अविरत सम्यग्दृष्टि, चतुर्थ गुणस्थान कहते हैं
यही समस्त साधना की पूर्व भूमिका है
विशुद्ध श्रद्धा भाव ही साधना के प्रति अभिरुचि जागृत करता है
हम अब आत्मा के हिताहित को समझने लगे हैं
हेय-ज्ञेय और उपादेय का बोध हमें अच्छी तरह हो गया है
हमें जीवादि तत्त्वों का सम्यग्ज्ञान हो गया है
हमारा अनादि कालीन अज्ञान, मिथ्याज्ञान सम्यग्ज्ञान के रूप में रूपान्तरित हो गया है
हमारे अध्यवसायों में प्रगट विशुद्धि होती जा रही है
संकल्प करें और यह प्रत्यक्षतः अनुभव करें कि अपनी चेतना में हेय को छोड़ने के और उपादेय को ग्रहण करने के भाव बढ़ते जा रहे हैं

अब हम देशव्रती अर्थात् पाप प्रवृत्तियों के आंशिक त्यागी बन रहे हैं
हम अणुव्रतो के स्वीकार के साथ सामायिक, उपवास पौषधादि धर्म क्रियाओ मे रुचिवान् बन रहे है
यही नही, हमारा चित्त अब आत्म-धर्म की उपासना मे ही आनन्द मान रहा है
सासारिक राग-द्वेषात्मक प्रवृत्तियो मे मन एकदम उदास सा रहने लगा है
धर्म क्रियाओ के प्रति रुचि और रस वढता जा रहा है
यही अवस्था देशव्रती श्रावक की अवस्था है जो विकास क्रम की पाँचवी कक्षा है, पचम गुणस्थान है
इस अवस्था मे वीतराग भगवन्तो पर गहरी भक्ति उमडती है
निर्ग्रन्थ गुरुओ के प्रति वहुमान का भाव जागृत होता है और तीर्थकरो द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तो पर अचल आस्था बनती है
भाव करे
वास्तव मे हमारे भीतर एक गहरी आस्था का जागरण हो रहा है
हम आत्म-रमणता की साधना मे वहुत आनन्द का अनुभव कर रहे है
हटात् हमारी चेतना मे एक उच्चतम भाव का जागरण हो गया है
अब हम देश-त्यागी जीवन से ही सतुष्ट न होकर सर्व-त्यागी भाव की ओर बढ रहे है
यही नही, हमारा मन आत्म-स्वरूप की रमणता मे अप्रमत्त भाव से बढ रहा है
इस समय हम जीवन के एक-एक क्षण के मूल्य को समझ रहे है
हमारा सम्पूर्ण ध्यान केवल आत्म-स्वरूप पर ही लगा हुआ है
हम अभी सर्वत्यागी अप्रमत्त साधु बन गये है
समस्त आरम्भ परिग्रह की गाठो से सर्वथा मुक्त निर्ग्रन्थ श्रमण भाव मे हमारी चेतना रममाण हो रही है·
अभी— इन क्षणो मद-विषय, कषाय, निद्रा और विकथा रूप कोई भी प्रमाद हमारी आत्मा मे नही है
हम अभी आत्मा के प्रति सतत जागृत है
किन्तु इस अप्रमत्त भाव मे धीरे-धीरे कुछ शिथिलता आ रही है।

अभी हमारी आत्मा अप्रमत्त भाव की इस सातवीं श्रेणी में—अप्रमत्त संयत गुणस्थान में थी·

अब वह पुन नीचे की ओर उतर रही है·

अभी हमारी आत्मा में कुछ-कुछ प्रमाद का प्रवेश हो रहा है

अब हम प्रमत्त संयत रूप छठे गुणस्थान में आ गये हैं

महाव्रतों की आराधना एवं ज्ञान-दर्शन-चारित्र में सजगतापूर्वक रमणता बढ रही है

कभी-कभी कुछ स्खलना हो जाने पर भी साधुचर्या की आराधना में हमारी रुचि बनी हुई है

हमारी आत्मा महाव्रतों एवं समिति गुप्ति की आराधना में आनन्द का अनुभव कर रही है··

तीव्रतम भाव करें कि हम तीर्थंकर भगवन्त चरणों में ही दीक्षित हुए हैं

प्रभु के निर्देशानुसार ही हमारी साधना चल रही है·

कभी-कभी हमारी आत्मा में प्रमाद का झोंका आता है और हम गिरकर छठे गुणस्थान में पहुँच जाते हैं—

किन्तु वीतराग देव की वाणी हमारी भाव विशुद्धि को प्रकर्ष पर पहुँचा देती है और पुन. हम सातवें गुणस्थान पर पहुँच जाते हैं

भाव करें

हमारे विचारों की प्रकर्षता बढती जा रही है···

वीतराग वाणी हमारे अन्तरंग में गहरी पैठती जा रही है

हमारी आत्म-जागरण की भावना बहुत गहरी होती जा रही है

अनुभव करे
अभी हम देवलोक के मानसिक सुखो का उपभोग कर रहे है
हम ऐसे देवलोक मे पहुँच गये है, जहाँ देवियो का कोई स्थान नही है, केवल भाव रमणता ही रहती है
उस उच्च देवलोक के अपार भौतिक सुख-भोग मे भी हमारी आस्था-वीतराग वाणी पर श्रद्धा अडोल रही है
अध्यात्म साधना के आधार सम्यग्दर्शन रूप चतुर्थ गुण स्थान पर तो हम यथावत् बने रहे है
हाँ, चारित्र आराधना रूप पचम आदि गुणस्थानो से तो अवश्य नीचे उतर गये है
हमे इस बात का अत्यन्त आनन्द आ रहा है कि भौतिक सुखो की प्रचुरता मे भी हम आत्मभाव अथवा स्वबोध के केन्द्र से बराबर जुडे रहे है
भाव करे
इन क्षणो हम चारो ओर से भौतिक, दैविक सुखो की प्रचुरता से घिरे हुए है
हमारे चारो ओर अपार भौतिक वैभव बिखरा पडा है
फिर भी हमारा ध्यान तो अपने आत्मिक वैभव पर ही टिका हुआ है
अवधिज्ञान की पवित्र ज्योति हमारी चेतना मे जगमग कर रही है
विराट् से विराट् और सूक्ष्म से सूक्ष्म रूप धारण कर लेने की तथा क्षण भर मे हजारो मीलो की यात्रा कर लेने की क्षमता हमारे भीतर समाई हुई है
किन्तु किसी भी प्रकार के रूप परिवर्तन की उत्सुकता ही हमारे भीतर नही है
न अवधिज्ञान का उपयोग लगाकर कुछ जान लेने की तमन्ना है
शक्ति होते हुए भी शक्ति के भोग या उपयोग के भाव तिरोहित हो गये है
आत्मबोध की जागृति ही सतत बनी हुई है
अब हम अनागत की एक असत्कल्पना मे प्रवेश कर रहे है
हम यह जानते है कि वर्तमान काल मे श्रेणी–आरोहण की प्रक्रिया नही हो सकती है
उपशम श्रेणी या क्षपक श्रेणी के लिये उच्च सघयण की आवश्यकता होती है
तथापि हम अपनी ध्यान प्रक्रिया मे भावो की ऊर्जस्विलता का आह्वान करेगे और गुण स्थानो की उच्चता मे आरोहण करने का प्रयास करेगे

भाव करें

अब हम उन अपार दैविक ऐश्वर्य से अनासक्त रहते हुए वहाँ से च्युत होकर-मर कर महाविदेह क्षेत्र में उत्पन्न हो गये हैं

हमें उच्चतम आध्यात्मिक संस्कारों वाले परिवार का सुयोग प्राप्त हुआ है

बाल्यकाल से ही हमारी आध्यात्मिक रुचि बढ़ती जा रही है

हम तीर्थंकर भगवन्तों की वाणी श्रवण का लाभ यौवन में ही प्राप्त हो गया है

हमारे भावों की उच्चता-श्रेष्ठता बढ़ती जा रही है

हम प्रभु चरणों में सम्पूर्णतया समर्पित होकर आत्म-कल्याण के लिये सन्नद्ध हो गये हैं

हम विशुद्ध साध्वाचार का सजगतापूर्वक परिपालन कर रहे हैं

हमारे समस्त प्रमाद-जनित भाव नष्ट हो गये हैं

अप्रमत्त भाव गहराता जा रहा है

हमारे अन्तरंग विकार नष्ट हो रहे हैं

आभ्यन्तर एवं बाह्य तपों में हमारी अन्तरंग रुचि बढ़ गई है

अनुभव करें, प्रत्यक्षतः अनुभव करें कि हम अभी तीर्थंकर प्रभु के समक्ष ही ध्यान मुद्रा में अडोल अकम्प भाव से बैठे हुए हैं

हमारे आर्त रौद्र ध्यान के भाव सर्वथा क्षीण हो गये हैं

अभी हम धर्मध्यान की उच्च भावनाओं में रमण कर रहे।

अनित्य-अशरण-अशुचित्व आदि द्वादश भावनाओं के समीक्षण में हमारी चेतना लीन हो गई है

अनुभव करे ·

अभी हम देवलोक के मानसिक सुखो का उपभोग कर रहे है

हम ऐसे देवलोक मे पहुँच गये है, जहाँ देवियो का कोई स्थान नही है, केवल भाव रमणता ही रहती है

उस उच्च देवलोक के अपार भौतिक सुख-भोग मे भी हमारी आस्था-वीतराग वाणी पर श्रद्धा अडोल रही है

अध्यात्म साधना के आधार सम्यग्दर्शन रूप चतुर्थ गुण स्थान पर तो हम यथावत् बने रहे है

हॉ, चारित्र आराधना रूप पचम आदि गुणस्थानो मे तो अवश्य नीचे उतर गये है

हमे इस बात का अत्यन्त आनन्द आ रहा है कि भौतिक सुखो की प्रचुरता मे भी हम आत्मभाव अथवा स्वबोध के केन्द्र से बराबर जुडे रहे है

भाव करे

इन क्षणो हम चारो ओर से भौतिक, दैविक सुखो की प्रचुरता से घिरे हुए है

हमारे चारो ओर अपार भौतिक वैभव बिखरा पडा है

फिर भी हमारा ध्यान तो अपने आत्मिक वैभव पर ही टिका हुआ है

अवधिज्ञान की पवित्र ज्योति हमारी चेतना मे जगमग कर रही है

विराट् से विराट् और सूक्ष्म से सूक्ष्म रूप धारण कर लेने की तथा क्षण भर मे हजारो मीलो की यात्रा कर लेने की क्षमता हमारे भीतर समाई हुई है

किन्तु किसी भी प्रकार के रूप परिवर्तन की उत्सुकता ही हमारे भीतर नही है

न अवधिज्ञान का उपयोग लगाकर कुछ जान लेने की तमन्ना है

शक्ति होते हुए भी शक्ति के भोग या उपयोग के भाव तिरोहित हो गये है

आत्मबोध की जागृति ही सतत बनी हुई है

अब हम अनागत की एक असत्कल्पना मे प्रवेश कर रहे है

हम यह जानते है कि वर्तमान काल मे श्रेणी–आरोहण की प्रक्रिया नही हो सकती है

उपशम श्रेणी या क्षपक श्रेणी के लिये उच्च सघयण की आवश्यकता होती है

तथापि हम अपनी ध्यान प्रक्रिया मे भावो की ऊर्जस्विलता का आह्वान करेगे और गुण स्थानो की उच्चता मे आरोहण करने का प्रयास करेगे

हम प्रत्यक्षत. अध्यवसायो की विशुद्धि का अनुभव कर रहे हे

विचारो की उच्चता का इतना चढाव अनन्त-अनन्त काल के जीवन मे प्रथम बार हो रहा हे ·

इसी आधार पर अष्टम गुणस्थान की इस भूमिका को अपूर्व करण कहा जाता हे ·

अध्यवसायो की यह विशुद्धि अपूर्व हे, अभूतपूर्व हे· · ·

अभी कर्मों की स्थिति-काल मर्यादा घटती जा रही हे

कर्मों की फलदायक शक्ति भी अभूतपूर्व रूप से क्षीण होती जा रही हे

इस समय आत्मा मे ऐसी अल्प स्थिति का बन्ध हो रहा हे, जो पूर्व मे कभी नही हुआ था

एक तरफ कर्मों की निर्जरा असख्य गुणित क्रम से वढती जा रही है, तो दूसरी ओर अशुभ कर्म दलिक शुभ रूप मे अर्थात् पाप कर्म पुण्य रूप मे तीव्रता से बदलते जा रहे है

अहा ! ! विचारो की—भावनाओ की इतनी प्रकर्ष प्राप्त उच्चता अपूर्व हे अद्भुत हे ·

अलौकिक है

अब तो हमारे विचारो की समरसता के साथ समरूपता और समता गहराती जा रही हे·

अब हमारे विचारो मे तारतम्य नही साम्य ही वढता जा रहा है

विचारो की यह श्रेष्ठता किसी अभूतपूर्व उपलब्धि के विना नही रहेगी ·

इसी दृष्टि से इस उच्च स्थिति को नवम अनिवृत्तिकरण गुणस्थान कहा गया है

यहा कर्मों की निर्जरा और भी तीव्रता से होने लगी है···

हमे अभी अपनी आत्मा एकदम हल्की होती हुई लग रही है···

कर्मों का भार एकदम हल्का होता जा रहा है

जैसे कोई ऊँट नमक के भार को लेकर पानी मे बैठ गया हो और नमक गल-गल कर पानी मे बह गया हो·

भार एकदम हल्का हो गया है·

हमारी आत्मा पर से भी कर्मों का भार उतरता जा रहा है

निर्जरा का स्तर असख्य गुणित के क्रम से बढता जा रहा है और उसी अनुपात मे आत्मविशुद्धि बढती जा रही है···

भाव करे·

अब हमारी मोहकर्म की द्वेषात्मक सभी प्रकृतियाँ क्षीण हो गई हैं ·
मोह कर्म का बन्ध ही रुक गया है
अब तो केवल सज्वलन लोभ का उदय ही शेष बचा है··
इसी दृष्टि से इस दसवें गुण स्थान को सूक्ष्म सम्प्रदाय नाम दिया है·
ससार का हेतु मोह है और वह अत्यल्प रूप मे ही उदय मे बचा है
अध्यवसायो की विशुद्धि इतनी तीव्रता से बढ गई है कि हमारा मोह एकदम क्षय हो गया है· ·
सूक्ष्म लोभ भी समाप्त हो गया और हम वीतराग भाव मे प्रवेश कर गये
चूँकि हमने उपशम की प्रक्रिया को नही क्षय की प्रक्रिया को ही अपनाया था, अत उपशान्त मोहनीय रूप ग्यारहवें गुणस्थान को लाँघ कर हम सीधे क्षीण मोहनीय रूप बारहवे गुणस्थान मे पहुँच गये हैं ·
यह वीतराग अवस्था एकदम अपूर्व आह्लादक है
अरे । इसके क्षीण होते ही ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तरायकर्म भी क्षीण होते जा रहे है

आज की हमारी आत्म-समीक्षण की यात्रा बहुत भाव-विभोर कर देने वाली बन रही है
आत्मिक आनन्द अभिव्यक्ति से परे हो गया है
यह क्या । अरे, तीनो कर्म एक साथ समूल नष्ट हो गए

हम परम वीतरागी बन गये
अनन्त ज्ञान और अनन्त दशन का सूर्य हमारी चेतना मे जगमगा उठा है
भाव करे
अभी हम एकदम वीतराग बन गये है
हमारी आत्मा के किसी भी कोने मे किसी प्रकार का कोई राग-द्वेष नही बचा है
न क्रोध हे, न अहकार, न माया है और न लोभ सम्पूर्ण-तया राग-द्वेष, मोह, ममता का क्षय हो गया है
और इसके साथ ही अब हम सर्वज्ञ, सर्वद्रष्टा बन गये है
शुक्ल ध्यान की अपूर्व धारा ने हमे इस स्थिति तक पहुँचा दिया है
शुक्ल ध्यान अर्थात् केवल आत्मा का ध्यान, जहाँ समस्त सकल्प-विकल्प नष्टप्राय हो जाते हैं

अब तो हम समस्त चराचर के अणु-अणु के द्रष्टा बन गये है

प्रत्येक पदार्थ हमे हस्तामलकवत् सुस्पष्ट दिखाई दे रहा है

प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक पदार्थ की अन्तर्बाह्य सभी स्थितियाँ स्पष्ट परिलक्षित हो रही है

एक-एक तत्त्व के अनन्त-अनन्त पर्याय हमे स्पष्ट दिखाई दे रहे है

अरे ! अब तो, कुछ देखने, सोचने या उपयोग लगाने की आवश्यकता ही नही है

सब कुछ अपने आप ही दिखाई दे रहा है

जैसे दर्पण के सामने जाते ही उसमे हमारा प्रतिबिम्ब पडता है उसी प्रकार हमारी आत्मा एक विशाल सर्वतो-मुखी दर्पण हो गई है, जिसमे सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड प्रति-बिम्बित हो रहा है

यही नही अनन्त-अनन्त ऐसे ब्रह्माण्ड और भी हो तो उनके प्रतिबिम्बन की क्षमता भी हमारी इस वीतराग आत्मा मे आ गई है

अब तो हम अपने मूल सहज रूप मे प्रतिष्ठित हो गये है ·

विकल्पो-विकारो के सारे पहाड धराशायी हो गये है

हमारी वीतरागता मे ससार का अणु-अणु समाहित हो गया है

अब हमारे भीतर स्व-रमणता ही बची है

अब हमारे स्वर सहज प्रस्फुटित होने लगे है

जो किसी राग-द्वेष से प्रेरित नही है

हम जो कुछ बोल रहे है, वह केवल यथार्थ ही होता है·

उसमे किसी प्रकार का असत्याश नही है···

चूकि अब हमारा बोलना स्वकल्याण के लिये नही केवल जनकल्याण के लिये ही है, उसमे राग-द्वेष का पुट कथमपि असभव है

अब हमारी समता चरम कोटि की हो गई है

अब चेतना के किसी भी अश मे विषमता की कोई रेखा नही है

भाव करे

अभी हम वीतरागता के परमानन्द मे रममाण हो रहे है

अब हमारे आयुष्य कर्म के दलिक अल्प बच गये है·

किन्तु वेदनीय, नाम और गौत्र कर्म के दलित अधिक
वच गये हैं
उन्हें समस्थितिक वनाने के लिये हम समुद्घात केवली
समुद्घात कर रहे हैं
भाव करें
अव हम अपने आत्म-प्रदेशो को सम्पूर्ण लोक मे फैला
रहे हैं
आत्म फैलाव के आठ समय की इस प्रक्रिया को समुद्घात
कहते हैं
इस प्रक्रिया मे प्रथम समय मे हम अपने आत्म प्रदेशो
को ऊपर-नीचे दण्ड की तरह फैला रहे हैं
दूसरे समय मे चारो दिशाओ मे कपाट की तरह फैला
रहे हैं
तीसरे समय मे चारो अन्तरो को भर रहे हैं
और चौथे समय मे मन्थन कर रहे हैं
वास्तव मे अनुभव करें कि हमारे आत्म प्रदेश सपूर्ण लोक
मे व्याप्त हो गए है
लोकाकाश के प्रत्येक प्रदेश पर हमारी आत्मा का एक-
एक प्रदेश स्थिर हो गया है
हमारी आत्मा इस चतुर्थ समय मे सम्पूर्ण लोक-व्यापी
वन गई है
पचम समय मे अतरो को समेटने का कार्य हो रहा है
पष्ठ समय मे कपाट समेटे जा रहे है
सप्तम समय मे दण्ड समेटा जा रहा है
और अष्टम समय मे पुन आत्मस्थ हो गये हैं···
समुद्घात की इस प्रक्रिया के द्वारा हमने वेदनीय, नाम
और गौत्र कर्म को आयु कर्म की स्थिति के वरावर कर
दिया है
अव हम आत्मभाव में ही रममाण हो रहे हैं
अव हमारी चेतना में शुक्ल ध्यान की धारा गहराती जा
रही है
अभी हम सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाती नामक शुक्ल ध्यान मे
लीन हैं
मानसिक, वाचिक, कायिक क्रियाओ के स्पन्दन सूक्ष्म से
सूक्ष्म होते जा रहे हैं
ध्यान की धारा स्वकेन्द्रित होकर अधिक से अधिक गहरी
होती जा रही है
अव हम शुक्ल ध्यान की सर्वोत्तम श्रेणी व्युपरत क्रिया
निवृत्ति रूप चतुर्थ पाये मे रमण कर रहे हैं

अब हमारे मन, वचन, काया के स्थूल योग रुक गये है
सूक्ष्म योग भी रुकते जा रहे है
अब हमारी चेतना का समस्त योग व्यापार रुक गया है'
अब हम शैलेपोकरण की अडोल-अकम्प अवस्था मे पहुँच गये है
पाँच लघु अक्षरो के उच्चारण जितने से काल तक हम इस स्थिति मे रह रहे है · और हठात्
हमारे आघाती-शेष बचे चारो कर्म एक साथ क्षय हो गये है
हम देह मुक्त हो गये है
अब हमारी आत्मा पूर्णतया शुद्ध-बुद्ध और मुक्त होकर ऊर्ध्वदिशा मे गति कर गई है
अब हम सिद्धशिला से ऊपर लोक के अग्रभाग पर स्थिर हो गये है
भाव करे
अब हम केवल सत्-चित् आनन्दघनमय ही रह गये है ··
अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन और अनन्त चारित्र के अक्षय कोष
अनुपमेय आत्मानन्द मे सदा-सदा के लिये हमारी आत्मा निमज्जित हो गई है
हम अपार आनन्द के अथाह सागर मे डूब गये है ·
यह आनन्द जो चेतना का सहज स्वभाव है
आत्मा का निजी गुण है यही हमारी चरम परिणति है
अहा ! किस अलौकिक सत्ता मे हम प्रतिष्ठित हो गये है
शाति और आनन्द के चरमान्त का स्पर्श हमारी आत्मा के समस्त प्रदेशो मे उद्भूत हो गया है
सदा-सदा के लिये हम इसी आनन्द मे सराबोर बने रहे
इसी भावपूर्ण तन्मयता के साथ ध्यान से बाहर आ जाये
अपनी मन स्थिति मे आ जाये
भाव करे
जैसे किसी आनन्दपूर्ण स्वप्न-लोक से हम बाहर आ गये है
हम स्वप्न जनित आनन्द से आप्यायित हो रहे है
ध्यान से बाहर आ जाये
प्रकृतिस्थ हो जाये



३०

गुरु-पद समीक्षण

ध्यान मुद्रा बना ले

(प्रथम तीन प्रक्रियाओ को अतीव उल्लसित भावो के साथ दोहराएँ)

अब तक हमने आत्मा, तन और मन को बहुत हल्का बना लिया है

हमे प्रतिपल-प्रतिक्षण हल्केपन का गहरा अहसास होने लगा है

हमारे प्रत्येक दैनिक कर्म मे उस हल्केपन का अनुभव होने लगा है

अब वह हल्कापन ध्यान मुद्रा काल तक ही सीमित नही रहा है, अपितु वह सार्वकालिक हो गया है

किन्तु यह निर्विवाद सत्य है कि हमे इस हल्केपन की अनुभूति समीक्षण ध्यान के माध्यम से हुई है

और यह ध्यान पद्धति हमे एक महान् ध्यान योगी, समीक्षण ध्यान साधना पद्धति के उद्गाता महागुरु के द्वारा प्राप्त हुई है

उस परम गुरु की उपकृति को हम जन्म-जन्मान्तर तक विस्मृत नही कर सकते हैं

गुरु चरणो की अनन्त-अनन्त उपकृति हमारे जीवन पर है

गुरु के उपकारो को शास्त्रकारो ने दुष्प्रतीकार्य ऋण के रूप मे माना है

गुरु चरणो मे सर्वस्व समर्पण कर देने पर भी उस ऋण से मुक्त नही हुआ जा सकता है

तथापि आज हम अपने देह के प्रत्येक अग पर गुरु चरणो का स्मरण कर इस तन का अणु-अणु गुरु चरणार्पित करने का भाव करेगे

आज की हमारी ध्यान साधना उपकृति के स्मरण एव उससे मुक्त होने के प्रयास की साधना होगी

हमारी इस चेतना पर गुरु चरणो का उपकार अनन्त-अनन्त है—शब्दातीत-वर्णनातीत है

गुरु तत्त्व परम आराध्य तत्त्व है

परमात्म तत्त्व से भी अधिक महिमा गुरु तत्त्व की गायी गई है

क्योकि गुरु चरणो की स्मृतिमात्र से समस्त भ्रान्तियाँ निर्मूल हो जाती है

जीवन एक व्यवस्थित दिशा की ओर गतिशील हो जाता है

गुरु शब्द की व्याख्या करते हुए कहा गया है

'गु' शब्दस्तु अन्धकार 'रु' शब्दस्तु निरोधक ?
अन्धकार निरोधत्वात् 'गुरु' शब्द इत्युच्यते ।।

अर्थात् गुरु हमारे अनन्त-अनन्त काल के अज्ञान अन्धकार को चीर देते है

गुरु वह दीपक है, जो हमारे अन्तर-बाहर दोनो को प्रकाशित कर देते है

गुरु वह काम, कुम्भ है, जो सर्व कामनाओ को सन्तृप्ति प्रदान करते है

गुरु वह चिन्तामणि है, जो सर्व मनोरथो को परिपूरित करते है

गुरु वह कल्पवृक्ष है, जो सर्वकल्पनाओ को साकार रूप प्रदान करते है

सर्व सौख्य प्रदायी गुरु की महिमा अपरम्पार है

गुरु शिष्य के लिए सर्वात्म रूप होते है

वह समय-समय पर एक मानव रूप मे बाहर और एक मार्गदर्शक के रूप मे शिष्य के भीतर व्याप्त होते है....

गुरु ज्ञान रूप से शिष्य की आत्मा मे निवास करते है

और इस रूप मे गुरु समस्त चराचर मे सव्याप्त रहते है

वे समस्त चराचर जगत के कल्याण के लिये साधना-मार्ग, मुक्ति-मार्ग का प्रवर्तन-प्रकाशन करते है

उन्ही के द्वारा हमे अलौकिक ज्ञानदृष्टि प्राप्त होती है

वे परमोपकारी भवतारक-उद्धारक होते है

अत आज हम अनन्त-अनन्त उपकृति के केन्द्र गुरु चरणो का ध्यान कर रहे है

किन्तु यह ध्यान किसी बाहर स्थित गुरु का नही अपने ही अन्तर मे व्याप्त गुरु का

अर्थात् हम अपने ही अग-प्रत्यग मे गुरुत्व की भावना से ध्यान करेगे

भाव करे

हम अभी एकान्त शान्त वातावरण मे चित्त विकारो से परे होकर उपशान्त भावो मे लीन बैठे है

अभी हमारे बाहर के समस्त विकल्प क्षीण हो रहे है

अभी हमारा ध्यान सर्व देव, सर्वतन्त्र, सर्वमन्त्र, सर्वसन्त-मय गुरु चरणो पर ही टिका हुआ है

हमारा तन अनन्त आराध्य गुरु चरणो के प्रति नमस्कार की मुद्रा मे स्थित है

हम इस समय गुरु के सर्वमय-विश्वात्म रूप को देख रहे है, उन्हे भावपूर्ण वन्दन कर रहे हैं, अनन्त-अनन्त प्रणाम कर रहे हैं

अब हम अपने ही शरीर को गुरुत्व के रूप मे आरोपित, कल्पित या प्रतिष्ठापित कर रहे हैं

भाव बनाए—जैसे तिल के अणु-अणु मे तेल व्याप्त है, उसी प्रकार हमारे अणु-अणु मे परम गुरुत्व सव्याप्त है

जैसे तन्तु-तन्तु मे वस्त्र और वस्त्र मे तन्तु व्याप्त है, उसी रूप मे हम गुरु मे व्याप्त हो रहे है

जैसे मिट्टी और घट का सम्बन्ध है, उसी प्रकार हमारा और गुरुत्व का सम्बन्ध है

भाव करे

इन क्षणो हम गुरु मय ही हो गये हैं

अब अपने शरीर के प्रत्येक अग को गुरु चरणो मे अर्पित करके उन पर गुरुत्व का ध्यान करने का प्रयास कर रहे है

हम अपने सिर से लेकर पैर के अगुष्ठ तक समस्त अगो के लिये यह भाव करेंगे कि ये सब अग गुरु के ही हैं ··

सकल्प करे

हम अपने हाथ से अपने सिर का स्पर्श कर रहे हैं और इन भावो मे बह रहे है कि यह सिर मेरा नही, उन परम गुरु का ही है

फिर कपाल का स्पर्श कर भाव करे यह कपाल गुरु का ही है

दोनो आँखो का स्पर्श कर हम भाव कर रहे है, ये नेत्र उन्ही आराध्य गुरु भगवन्त की आँखे हैं

सभी दृश्यो के गुरुदेव ही द्रष्टा है

इसी प्रकार दोनो कान, नाक, जिह्वा, दोनो गाल, गला और दोनो स्कन्धो का स्पर्श कर भाव करे कि ये सब अग गुरुवर्य के ही है

हमारा सब कुछ तो उन्हे ही समर्पित है

दोनो भुजाएं, दोनो हाथ, हथेलियां, अगुलियाँ, छाती (सीना) पीठ, पेट, हृदय-कमल आदि-आदि अगो का स्पर्श करते हुए हम भावना करे कि ये सब अग गुरु भगवन्त के ही है

दोनो जघाएँ, घुटने, पिण्डलियाँ, दोनो पैर, पैर की अंगुलिया, अगूठ सब गुरुचरणार्पित ही है

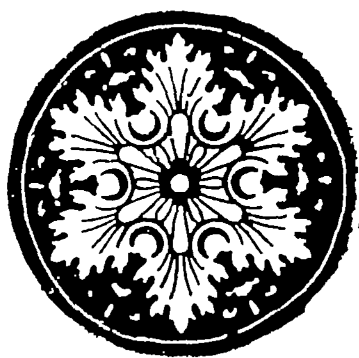
अरे ! यह सम्पूर्ण जीवन और जीवन की समस्त गति-विधियाँ गुरुवर को ही अर्पित है
यह जीवन ही नही, हमारा तन, मन और प्राण सभी गुरु चरणो मे समर्पित है··
जीवन के समस्त क्रिया-कलाप गुरु-प्रेरणा से ही स्पन्दित सचारित है
मन मे गुरु चरणो की ही अनुगूंज है·
हमारे अणु-अणु मे गुरु चरण ही व्याप्त हैं, अत भाव करे कि सब कुछ गुरु के है, गुरु के है, गुरु के है
हमारे हृदय कमल पर परम गुरु विराजमान है··
वहाँ उन्ही का सर्व सत्तापूर्ण अधिकार स्थापित हो गया है··
गुरु ही हमारे परम आराध्य देव है
गुरु ही हमारे श्रद्धेय, परम उपास्य प्रभु हैं ·
अरे ! और कौन गुरु है हम स्वय ही तो गुरुमय हो गये है
भाव करे···

गुरु अग स्मरण की इस भाव प्रक्रिया को हम एक बार पुन दोहरा रहे है
किन्तु इस बार हमारा अग स्मरण का ध्यान व्युत्क्रम से होगा
पहले हमने मस्तिष्क से प्रारम्भ किया था
अब हम पैर की अँगुलियो से प्रारम्भ कर रहे हैं ·
भाव करे
हमारा शरीर गुरुत्व धारण कर रहा है
अपने हाथ से पैर की अँगुलियो का हम स्पर्श कर रहे हैं, किन्तु यह स्पर्श हमारी अँगुलियो का नही वह गुरु की अँगुलियो का स्पर्श है····
इसी प्रकार गुरुत्व के ध्यान के साथ पाँव, पिण्डलियाँ, घुटने, जघाएँ, पेट, पीठ, हृदय, गर्दन, दोनो हाथो की अगुलियाँ, दोनो हाथ, दोनो कधे सबकुछ गुरु के है, गुरु-मय है, गुरुत्व भाव से सव्याप्त है··
मुँह, जिह्वा, होठ, नाक, दोनो कान, दोनो आँखे और ललाट, मस्तिष्क सबका स्पर्श हमे गुरुत्व से अनुप्राणित कर रहा है
गुरुत्व के इस स्पर्श मे कितनी कमनीयता है ।
कितनी सौम्यता, कितनी आह्लादकता है ।
अहो ! कितना अहोभाव भरा स्पर्श है गुरुत्व का ?
भाव करे

जैसे हमारा अस्तित्व ही मिट गया है
केवल गुरुत्व का अस्तित्व ही शेष वच गया है
और वह गुरुत्व भी आधा-अधूरा सकोच भरा नही, वह परमात्म भाव से अनुप्राणित लोकान्तव्यापी स्पर्श है
हमारी आत्मा विश्वात्म रूप मे विस्तृत-व्याप्त होती जा रही हैं
हमारे चैतन्य के प्रत्येक प्रदेश मे गुरु ही गुरु विद्यमान हैं
हमारे नेत्रो की ज्योति, मे हमारी श्रवण शक्ति मे और आस्वाद इन्द्रिय मे गुरु ही द्रष्टा, श्रोता और भोक्ता बन कर वैठे हुए है
हमारा भोजन हम नही गुरु ही कर रहे है
अरे ! सव कुछ गुरु के प्रति समर्पित हो गया है, तो फिर हमारा वचा ही क्या है
सर्वत्र, सव कुछ नानेशमय-नानेशार्पित ही हो गया है
अहा ! आज की इस सर्वात्म समर्पणा का आनन्द अनुपम है
यह व्यक्ति रूप से अस्तित्व का मिटना और गुरुत्व की समष्टि मे विलीन हो जाना अलौकिक है
आज हम न जाने किस अमृत के आस्वाद मे डूब गये है कि उसे छोडने की इच्छा नही होती·
आज न जाने समर्पण के किस सागर मे तैर रहे है कि बाहर निकलने को ही जी नही करता
अरे ! आज हम न जाने किस दिव्य-लोक की यात्रा कर रहे हैं कि पुन लौटने का भाव ही नही होता है
हमारी इस यात्रा मे हमारे रोम-रोम मे गुरु नानेश की सव्याप्ति हो गई है
आज हमने समर्पणा के वास्तविक आनन्द का अनुभव किया है
आज हमने समर्पणा को आत्मसात् कर लिया है
आज हमने समर्पणा के भाव को गहराई से समझा है
अरे ! यह समर्पणा कहाँ हुई ? यह हमने अपने को ही गुरुत्व रूप मे वदल लिया है
गुरुत्व की उस परम आर्हती-ज्योति को स्वय मे समा लिया है
हमारा यह अद्भुत दर्शन, स्पर्श और समर्पण वहुत गहरा होता जाय
हम इस समर्पण के सागर मे खूब डूवते जाएँ·
इसी अहोभाव के साथ ध्यान से वाहर आ जाएँ ·

[

एक अलौकिक, अनपेक्षित, सतृप्ति का अनुभव करते हुए
ध्यान से बाहर आ जाएँ
अपने आपको एकदम गुरुवत्-गुरुमय अनुभव करे···
चारो ओर अपने परिवेश को गुरुत्व की ओजस्विता से
भावित अनुभव करे
प्रकृतिस्थ हो जाएँ····



परिशिष्ट नं. १

ग्रन्थ मे प्रयुक्त पारिभाषिक शब्द

समीक्षण—सम्यक् प्रकार से समता पूर्वक देखना समीक्षण कहलाता है अथवा ध्यान की एक नूतन विद्या, जिसका आचार्य श्री नानेश ने प्रतिपादन किया।

आगम—आप्त पुरुष द्वारा कथित, गणधर द्वारा ग्रथित, मुनियो द्वारा अनुमोदित ग्रथ आगम कहलाता है।

निर्वध—पाप से रहित।

आरा—जैन काल गणना मे काल खण्ड सूचक एक शब्द।

वज्र ऋषभ नाराच सहनन—हड्डियो की मजबूती। वज्र का अर्थ है कीला, ऋषभ का अर्थ है वेष्टन पट्ट और नाराच का अर्थ है दोनो ओर से मर्कट बध। जिस सहनन से दोनो ओर मर्कट बन्ध से हड्डियाँ जुडी हो उन पर पट्ट की आकृति वाली हड्डी का चारो ओर से वेष्टन हो और उनको दृढ करने वाला कीला भी हो हड्डियो की ऐसी मजबूत रचना को वज्रऋषभ नाराच सहनन कहते है।

सस्थान—शरीर की विविध आकृतियाँ, जिन्हे जैनागमो मे स्थूल रूप मे छ भागो मे विभक्त किया है।

शुक्ल ध्यान—जैनागमो मे वर्णित ध्यान के चार भेदो मे से एक भेद। आत्मा के सर्वोत्तम विचार भाव।

धर्म ध्यान—तत्त्वो और श्रुत चारित्र रूप धर्म के सम्बन्ध मे सतत चिन्तन धर्म ध्यान कहलाता है।

आर्त ध्यान—ऋत् अर्थात् दुःख के निमित्त या दुःख मे होने वाला ध्यान आर्त ध्यान है। अथवा दुःखी प्राणी का ध्यान आर्त ध्यान है। अथवा मनोज्ञ वस्तु के वियोग और अमनोज्ञ वस्तु के सयोग के कारण होने वाला चित्त विक्षोभ आर्त ध्यान है।

रौद्र ध्यान—क्रूर और कठोर वृत्ति के व्यक्ति की हिसा झूठ चोरी और विषय सरक्षण के लिये जो सतत चित्त प्रवृत्ति होती है वह रौद्र ध्यान है।

आश्रव—योग के निमित्त से शुभ या अशुभ कर्मों का आत्मा मे आगमन होता है अतएव योग को आश्रव कहते है। अथवा योग—मन, वचन और शरीर की प्रवृत्तियो से आत्मा के प्रति कर्मों के आगमन की प्रक्रिया।

उत्तराध्ययन सूत्र—भगवती सूत्र—जैनागमो के नाम।

सूक्ष्म—जीवो का एक वर्ग विशेष जिनका शरीर चर्म चक्षुओ से दिखाई न दे।

बादर—जीवो का वह समूह जिनका शरीर चर्म चक्षुओ से दिखाई दे।

त्रस—चलने फिरने वाले द्वीन्द्रियादि प्राणी।

स्थावर—ऐसे जीव जो एक स्पर्श इन्द्रियवाले हो और चल फिर नही सकते हो।

वीतराग—जो राग द्वेष से रहित हो गया वह वीतराग है।

रस परित्याग—खाद्य पदार्थों मे से रसीले, पौष्टिक, स्वादिष्ट पदार्थों का त्याग करना रस परित्याग नामक तप है।

काया क्लेश—जो साधक श्रम युक्त तप से अपने शरीर, इन्द्रिय और मन को कसते है, अपनी सुकुमारता का त्याग करते है, आत्म निग्रह हेतु विभिन्न प्रकार के शारीरिक क्लेशो को आनन्द के साथ सहन करते है, वह उनका काया क्लेश तप है।

चतुर्विध संघ—भगवान् महावीर के साधको की एक श्रेणी जिसमे चार घटक होते हैं-साधु-साध्वी, श्रावक श्राविका।

प्रासुक—मुनि जीवन के भोजन ग्रहण विधि मे प्रयुक्त एक शब्द जो जीव रहित पदार्थ का द्योतन करता है।

सम्यग् दृष्टि—जिसको दर्शन मोहनीय कर्म का उपशम क्षय या क्षयोपशम होने पर जीवादि तत्त्वो की यथार्थ श्रद्धा उत्पन्न होती है उसे सम्यग् दृष्टि कहते हैं।

वेदना—सुख और दु ख का अनुभव होना वेदना कही गई है।

उपशम भाव—कर्मों के उपशम से जो आत्म शुद्धि होती है वह उपशम भाव है। जैसे जल मे फिटकरी डालने से मैल नीचे बैठ जाता है और जल स्वच्छ हो जाता है वैसे ही सत्तागत कर्म का उदय जब बिल्कुल रुक जाता है तब उपशम रूप शुद्धि होती है वह उपशम भाव है। आत्मा के अध्यवसायो की एक अवस्था विशेष।

क्षायिक भाव—कर्म के आत्यन्तिक क्षय से प्रकट होने वाला आत्मा का मौलिक भाव।

निर्जरा—कर्मो का एक देश से आत्मा से अलग होना निर्जरा कहलाता है।

आत्म-प्रदेश—आत्मा के सूक्ष्मतम अविच्छेद असख्य घटक।

स्कन्ध—अनन्त परमाणुओ के पिण्ड को स्कन्ध कहते हैं अथवा स्कन्ध एक वस्तु का नाम है। स्कन्ध बद्ध समुदाय रूप होते हैं और वे अपने कारण द्रव्य की उपेक्षा से कार्य द्रव्य रूप और कार्य द्रव्य की अपेक्षा से कारण द्रव्य रूप होते हैं। जैसे द्विप्रदेश आदि स्कन्ध परमाणु आदि के कार्य हे और त्रिप्रदेश आदि के कारण है।

रूप मद—अपने सौन्दर्य का अभिमान करना रूपमद है।

सागरोपम—१० कोडा कोडी पल्योपम का एक सागरोपम होता है अथवा असख्यात वर्षीय एक काल खण्ड।

अपवर्तन—बद्ध कर्मों की स्थिति तथा अनुभाग मे अध्यवसाय विशेष से कमी कर देना अपवर्तन है।

संक्रमण—एक कर्म रूप मे प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश का अन्य सजातीय कर्म रूप मे बदल जाना सक्रमण कहलाता है। बन्धी हुई कर्म प्रकृतियो के सजातीय प्रकृतियो के रूप मे बदलने की एक प्रक्रिया।

मिथ्यात्व—जिस कर्म के उदय से जिन प्रणीत तत्व के प्रति अश्रद्धान या विपरीत श्रद्धान हो वह मिथ्यात्व है। अथवा मिथ्यात्व मोहनीय कर्म के उदय से जिन वचन मे अरुचि होना मिथ्यात्व है।

क्षयोपशम—कर्म सिद्धान्त की एक प्रक्रिया जिसमे उदय मे आये हुए कर्म दलिक का क्षय और उदय मे न आए को उपशान्त कर देना क्षयोपशम कहलाता है।

चारित्र मोहनीय—जिस कर्म के उदय आचरण का घात होता है वह चारित्र मो

अर्थात् आत्मा की चारित्रिक शक्ति को दबाने वाला कर्म।

दर्शन मोहनीय (मिथ्यात्व मोहनीय)—जिस कर्म के उदय से आत्मा के शुद्ध स्वरूप को नही समझा जा सके वह दर्शन मोहनीय है अर्थात् आत्मा की चारित्रिक शक्ति को दबाने वाला कर्म।

बन्ध—कर्म पुद्‌गलो का आत्म-प्रदेशो के साथ एकमेक होना बन्ध कहलाता है।

भेद विज्ञान—देह और आत्मा की भिन्नता का अन्तर बोध।

अध्यवसाय—आत्मा के परिणाम अथवा विचार।

वीरासन—कुर्सी पर बैठे हुए पुरुष के नीचे से कुर्सी निकाल लेने पर जो अवस्था होती है वह वीरासन है।

अम्बकुब्जासन—सिर नीचे और पैर ऊपर रखना अम्बकुब्जासन है।

गोदुहासन—गाय को दुहते समय जो आसन होता है वह गोदुहासन है।

कषाय—आत्म गुणो को कषे नष्ट करे, अथवा जिसके द्वारा जन्म मरण रूप ससार की प्राप्ति हो अथवा जो सम्यक्त्व, देशचारित्र, सकल चारित्र और यथाख्यात चारित्र को न होने दे वह कषाय कहलाती है।

कषाय मोहनीय कर्म के उदयजन्य, ससार वृद्धि के कारण रूप मानसिक विकारो को कषाय कहते है।

समभाव की मर्यादा को तोडना, चारित्र मोहनीय के उदय से क्षमा, विनय, सतोष आदि आत्मिक गुणो का प्रकट न होना या अल्पमात्रा मे प्रकट होना कषाय है।

निगोद—जीवो का वह समूह विशेष जो अनादिकाल से वनस्पति की एक ही अवस्था मे रहता आ रहा है।

स्थितिघात—कर्मों की दीर्घ स्थिति को अपवर्तनाकरण द्वारा घटा देना स्थितिघात है अर्थात् कर्मों की पूर्व बद्ध स्थिति काल मर्यादा को कम कर देना।

अपवर्तनाकरण- जिस वीर्य विशेष से पहले बन्धे हुए कर्म की स्थिति तथा रस घट जाते है उसे अपवर्तना करण कहते है। कर्म सिद्धान्त की एक प्रक्रिया विशेष।

यथाप्रवृत्तिकरण—अनादि काल से परिभ्रमण करता हुआ जीव पर्वतीय नदी के पत्थर की भाति दु ख सहते सहते स्नेहिल और चिकना बन जाता है। परिणाम शुद्धि के कारण जीव आयु कर्म के सिवाय शेष सात कर्मों की स्थिति पल्योपम के असख्यातवें भाग कम एक कोडा कोटी सागरोपम जितनी कर देता है, इस परिणाम विशेष को यथाप्रवृत्तिकरण कहते हैं अथवा आत्मा के अध्यवसाय-विचार विशेष को यथाप्रवृत्तिकरण कहते है।

रसघात—बधे हुए ज्ञानावरण आदि कर्मो की फल देने की तीव्र शक्ति को अपवर्तनाकरण के द्वारा मन्द कर देना अर्थात् कर्मों की फलदायक शक्ति को घटाने की एक प्रक्रिया।

गुण श्रेणी—कर्म सिद्धान्त का एक पारिभाषिक शब्द, अर्थात् जिन कर्म दलिको का स्थितिघात किया जाता है उनको समय के क्रम से अन्तर्मुहूर्त मे स्थापित कर देना गुण श्रणी है, अथवा ऊपर की स्थिति मे उदय क्षण से लेकर प्रति समय असख्यात गुणे-असख्यात गुणे कर्म दलिको की रचना को गुण श्रेणी कहते है।

गुणसक्रमण—कर्म बन्धन के समय होने वाली एक प्रक्रिया विशेष। पहले की बन्धी हुई अशुभ प्रकृतियो को वर्तमान मे बधने वालो शुभ प्रकृतियो के रूप मे परिणत कर देना।

अपूर्व स्थिति बन्ध—पहले की अपेक्षा अत्यन्त अल्प स्थिति के कर्मो को बाधना।

अनिवृत्ति करण—आत्मा का वह परिणाम जिसके प्राप्त होने पर जीव अवश्यमेव सम्यक्त्व प्राप्त करता है, स्वरूप को समझ लेना है।

अनतानुबधी कषाय—जो कषाय अत्यन्त तीव्र हो, जिसके कारण जीव को अनन्त काल तक ससार मे भ्रमण करना पडे, वे कषाय अनतानुबधी कहे जाते है। ये अनतानुबधी क्रोध, मान, माया, लोभ, सम्यक्त्व के घातक और बाधक होते है।

मति अज्ञान—मिथ्या दर्शन के उदय मे होने वाला विपरीत मति उपयोग रूप ज्ञान मति अज्ञान कहलाता है अथवा पाच इन्द्रिया और मन से होने वाला मिथ्यादृष्टि का ज्ञान।

श्रुत अज्ञान—मिथ्यात्व के उदय से सहचरित श्रुतज्ञान। पाच इन्द्रियाँ और मन से शब्दोल्लेख की शक्ति से युक्त मिथ्यादृष्टि का ज्ञान।

ज्ञानावरणीय कर्म—जो आत्मा के ज्ञान को व गुण को आच्छादित करे वह ज्ञानावरणीय कर्म है।

अरिहन्त—(१) जिन्होने चार घनघाती कर्मों को नष्ट कर दिया है, वे अरिहन्त है।

(२) अर्ह धातु का अर्थ-योग्य होना है, जो वन्दन, नमस्कार के योग्य है अथवा जो मुक्ति-गमन की योग्यता रखती है वे महान् आत्माएँ अरिहन्त कहलाती है।

(३) जिस आत्मा के ज्ञान दर्पण मे विश्व के समस्त चराचर पदार्थ प्रतिभासित होते है, जिससे विश्व का कोई रहस्य छिपा नही है, वह महान् आत्मा अरिहन्त पद पर प्रतिष्ठित होती है।

आशातना—ज्ञानियो की निदा करना, उनके बारे मे झूठी बाते कहना, मर्मच्छेदी बाते लोक मे फैलाना उन्हे मार्मिक पीडा हो, ऐसा कपट जाल फैलाना आशातना है।

सम्यक्त्व—वीतराग एव वीतराग प्ररूपित तत्वो पर आस्था होना एव आत्म स्वरूप की प्रतीति होना सम्यक्त्व है।

गोत्रकर्म—आठ मूल कर्म प्रकृतियो मे से एक कर्म प्रकृति। जिस प्रकार कुम्भकार छोटे बडे या ऊँचे नीचे बर्तन बनाता है इसी प्रकार यह कर्म जीव को छोटे बडे या ऊँचे नीचे रूप मे रहने को बाध्य करता है।

पुण्य प्रकृति—जिस प्रकृति का विपाक फल शुभ होता है।

अनशन—अशन, पान, खादिम स्वादिम चारो प्रकार के आहार का त्याग करना अनशन है अथवा जैनागमो मे वर्णित बारह तपो मे से एक तप।

ऊनोदरी—आहार, उपधि और कषाय को न्यून करना अर्थात् आवश्यकता से कम उपयोग करना ऊनोदरी है।

दर्शनावरणीय कर्म—जो कर्म आत्मा के दर्शन स्वभाव को आच्छादित करे सामान्य ज्ञान को आवृत करे वह दर्शनावरणीय कर्म है।

देशविरति—आंशिक रूप से अहिंसादिव्रतों का पालन करना देशविरति धर्म है।

सर्वविरति—सब प्रकार के सावद्य योगों से, पाप कार्यों से विरत होना सर्वविरति धर्म है।

आयुष्य कर्म—यह कर्म आत्मा की स्वतन्त्रता को प्रतिबंधित करता है। जैसे कारागार में पड़ा हुआ व्यक्ति अपनी स्वतन्त्रता को खोकर बन्धन में पड़ा रहता है उसी तरह यह कर्म आत्मा को अमुक काल के लिये एक भव में रोक कर रखता है।

अनन्तवीर्य सम्पन्नता—आत्मा की अनन्त शक्ति।

अव्यवहार राशि—जीवों का वह समूह जो अनादि अनन्त काल से निगोद की एक ही दशा में पड़ा हुआ है। कभी भी स्थूल व्यवहार में आने वाले जीव समूहों में नहीं आया हो।

सामयिक साधना—जैन साधना पद्धति की एक प्रक्रिया जिसमें ४८ मिनट तक समस्त पाप वृत्तियों का परित्याग करके आत्म-रमणता में लीन रहना होता है।

अकाम निर्जरा—सम्यग्दृष्टि भाव के अभाव में निर्जरा की भावनाओं के बिना सहज रूप में या अज्ञान तपादि से होने वाला कर्मों का आंशिक क्षय।

तेजस् शरीर-तेजस पुद्गलों से बना हुआ सूक्ष्म शरीर तेजस् कहलाता है। आहार के पाचन का हेतु तथा तेजोलेश्या और शीतलेश्या के निर्गमन का हेतु जो शरीर है वह तेजस् शरीर कहलाता है।

कार्मण शरीर—कर्मों से बना हुआ सूक्ष्म शरीर कार्मण शरीर कहलाता है, अर्थात् जीव के प्रदेशों के साथ लगे हुए आठ प्रकार के कर्म पुद्गलों को कार्मण शरीर कहते हैं।

औदारिक शरीर- जिस शरीर को तीर्थंकर आदि महापुरुष धारण करते हैं, जिससे मोक्ष प्राप्त किया जा सकता है, जो औदारिक वर्गणाओं से निष्पन्न मांस, हड्डी आदि अवयवों से बना होता है, जो स्थूल है वह औदारिक शरीर कहलाता है अर्थात् गलन, सड़न स्वभाव वाला शरीर जो चर्म चक्षुओं द्वारा देखा जाता है वह औदारिक शरीर है।

गुणस्थान (१) ज्ञान आदि गुणो की शुद्धि और अशुद्धि के न्यूनाधिक भाव से होने वाले जीव के स्वरूप विशेष को गुण कहते है।

(२) ज्ञान, दर्शन, चारित्र आदि जीव के स्वभाव को गुण कहते है और उनके स्थान अर्थात् गुणो की शुद्धि अशुद्धि के उत्कर्ष एव अपकर्ष जन्य स्वरूप विशेष का भेद गुणस्थान कहलाता है अथवा आत्मा के ह्रास-विकास की क्रमिक अवस्थाओ को गुणस्थान कहते है।

प्रत्येक वनस्पति—जिस वनस्पति मे एक शरीर मे एक ही जीव हो वह प्रत्येक वनस्पति है।

मिश्र गुणस्थान—मिथ्यात्व के अर्ध शुद्ध पुद्गलो का उदय होने से जब जीव की दृष्टि कुछ सम्यक् (शुद्ध) और कुछ मिथ्या (अशुद्ध) अर्थात् मिश्र हो जाती है तब वह जीव मिश्र दृष्टि कहलाता है और उसके स्वरूप विशेष को मिश्र गुणस्थान कहते है विचारो की श्रद्धा-अश्रद्धा मे झूलती स्थिति।

अणुव्रत—हिसादि से अल्प अश मे विरति अणु-व्रत है।

पौषध—जो प्रकर्ष रूप से धर्म की पुष्टि या पोषण करता है कह पौषध है। उपवास के साथ चौबीस घण्टे तक हिंसादि असत् प्रवृत्तियो का त्याग करके धार्मिक अनुष्ठान मे रत रहना।

श्रावक—जैन धर्म का उपासक जो गृहस्थ मे रहकर अल्प आराधना करता है। जो यथार्थ तत्त्व श्रद्धा को पुष्ट करता है वह "श्रा" है। विवेक पूर्ण व्रत धारण करना "व" है और सदनुष्ठान पूर्ण क्रिया करना "क" है। तीनो मिलकर श्रावक होता है।

निर्ग्रंथ—जो बाह्य और आभ्यन्तर ग्रन्थि-परिग्रह से रहित होते है वे निर्ग्रन्थ है अथवा जैन श्रमण साधु के लिये प्रयुक्त होने वाला शब्द।

तीर्थंकर—साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका रूप चार तीर्थों की स्थापना करने वाले को तीर्थंकर कहते है। जो वीतरागी, सर्वज्ञ, सर्व-द्रष्टा होते है, जिन-शासन के आद्य सूत्रधार या प्रवर्तक होते है।

समिति—अर्हन्त परमात्मा द्वारा प्रतिपादित प्रवचन के अनुसार शुभ प्रशस्त प्रवृत्ति को समिति कहते हैं।

श्रमण—जो रागद्वेष का शमन करता है, साधना के प्रति श्रम करता है, श्रमण कहलाता है।

गुप्ति मन, वचन, काया की अशुभ प्रवृत्ति को रोकना गुप्ति है।

अवधिज्ञान—जैनागमो मे वर्णित अतीन्द्रिय ज्ञान का एक प्रकार अवधि का अर्थ है—सीमा मर्यादा। क्षेत्र और काल की विविध मर्यादाओ से बँधा हुआ। इन्द्रियो और मन की सहायता लिये बिना आत्म सापेक्ष रूपी द्रव्यो को जानने वाला ज्ञान अवधि ज्ञान है।

उपशम श्रेणी—पूर्वबद्ध कर्मो को अन्दर दबाते जाना, कर्मो को उदय हीन बनाने की एक प्रक्रिया, जिसमे मोहनीय कर्म की उत्तर प्रकृतियो का उपशम किया जाता है।

क्षपक श्रेणी—जिस श्रेणी प्रक्रिया मे मोहनीय कर्म की प्रकृतियो का मूल से नाश किया जाता है।

महाविदेह क्षेत्र—जैन भौगोलिक दृष्टि से एक क्षेत्र या देश विशेष जहाँ सभी कालो मे तीर्थकरो का विचरण होता है।

सज्वलन लोभ—हल्दी के रग की तरह जो सहज ही छूट जाये उस लोभ को सज्वलन लोभ कहते है।

केवली समुद्घात—वेदनीय आदि तीन अघाति कर्मो की स्थिति आयुकर्म के बराबर करने के लिये केवली जिन द्वारा किया जाने वाला समुद्घात "केवली समुद्घात है। कर्मो के क्षय की एक विशेष प्रक्रिया को समुद्घात कहते है।

सूक्ष्म क्रिया अनिवृत्ति—जब सर्वज्ञ भगवान् निर्वाण गमन के पूर्व योग-निरोध के क्रम मे सूक्ष्म शरीर योग का आश्रय लेकर शेष योगो को रोक देते है तब सूक्ष्म क्रिया अनिवृत्ति ध्यान होता है।

समुच्छिन्न क्रिया अप्रतिपाती—(व्युपरत क्रिया निवृत्ति) शैलेशी अवस्था को प्राप्त केवली जब सब योगो का निरोध कर देते है और मानसिक, वाचिक या कायिक कोई क्रिया नही होती, आत्म-प्रदेश सर्वथा निष्प्रकम्प हो जाते है तब जो स्थिति होती है वह समुच्छिन्न क्रिया अप्रतिपाती ध्यान कहलाता है।

शैलेशीकरण—वेदनीय, नाम और गोत्र इन तीन

कर्मों की असख्यात गुण श्रेणी से और आयुकर्म की यथास्थिति से निर्जरा करना।

घाति कर्म—आत्मा के अनुजीवी गुणो का आत्मा के वास्तविक (ज्ञानादि) स्वरुप का घात करने वाले कर्म को घाति कर्म कहते है।

अघाति कर्म—जीव के प्रति जीवी गुणो के घात करने वाले कर्म। उनके कारण आत्मा को शरीर की कैद मे रहना पडता है।

आर्हति ज्योति—आत्मा की परमोच्च अवस्था अनन्त ज्ञान ज्योति। □□



शुद्धि-पत्र

पृष्ठ स	पंक्ति स	अशुद्धि	शुद्धि
अन्तदर्शन XV	३२	विद्या	विधा
	३४	विद्या	विधा
,,	३५	ध्यान-विद्या	ध्यान-विधा
,,	३६	विद्याओ	विधाओ
XVI	४	विद्या	विधा
,,	५	विद्या	विधा
XVII	३	ध्यान यथाशक्य	ध्यान मे यथाशक्य
	१२	नाडी प्राण	नाडी मे प्राण
,	१६	से	मे
XVIII	२०	खण्ड टुकडे	खण्ड-टुकडे
अनुक्रम XIX	२४	मस्तिका	भस्त्रिका
१	२७	वैठने	पैठने
२	३५	प्ररणा	प्रेरणा
३	६	जाय यही	जाय । यही
४	१५	वर्णनीय	वर्जनीय
५	६	दण्ठासन	दण्डासन
१०	१	साण सियायह,	झाण झियायई
१०	३५	वंचारिक	वैकारिक
११	२५	व्यात्तिसिका	द्वात्रिंसिका
१२	[illegible]	मवल	सतत
१२	७	वस	वस
१४	२८	अपेक्षावृत्ति	उपेक्षावृत्ति
१४	३१	के	ते
१५	१८	ममक्के	ममक्के
२०	४	वैठे	वैठे
२१	१०	मन्दी	गन्दी
२२	२	न	मे
२[illegible]	११	नन	पन

पृष्ठ स.	पंक्ति स.	अशुद्धि	शुद्धि
२७	१	मस्तिका	भस्त्रिका
२७	२०	मस्तिका	भस्त्रिका
३५	२०	रहता है	लग रहा है
३५	२२	लगाओ	लगा हो
३५	३१	बडा बहुत	बडा, बहुत
३७	१	कर	करे
४०	१६	होना	होता
४०	२६	सितृष्ण	वितृष्ण
४३	७	से	के
४५	५	कभा	कभी
५०	६	हे	है
५०	१०	भावो	भारो
५५	१३	वन्दना	वक्रता
५५	१८	बन्दना	वक्रता
५५	१६	वही	वहीं
५६	४	प्रवेश कर जावे	प्रवेश न कर जावे
५७	४	होई	हो
५७	३२	सहज सरलता निश्छलता	सहज, सरलता, निश्छलता
५६	१४	विवेचन	विरेचन
६०	२५	विवेचन	विरेचन
६०	२६	पयवलोकन	पर्यावलोकन
६०	२७	रहै	रहे
६६	२	लो भाविलो	लोभाविलो
६६	२	आयपइ	आययइ
६६	२	अदज	अदत्त
६६	२०	परमाए	परमाणु
७५	४	तन्मवता	तन्मयता
७६	८	समी	सभी
७८	१०	इतना	इतनी
७८	३३	वन्वन	वन्धने

पृष्ठ स	पंक्ति स	अशुद्धि	शुद्धि
७६	१३	अभिवृत्तिकरण	अनिवृत्तिकरण
७६	२८	स्थायी	स्कायी
७६	२८	उन्है	उन्हे
८५	३३	रागो	एगो
९०	२२	इतना	इन ना
९४	५	तक	हम
९६	२३	कामयोगो	कामभोगो
९९	६	क्षण	क्षरण
९९	२३	ब्रह्मचय	ब्रह्मचर्य
१०१	१६	कीटाण	कीटाणु
१०४	२६	आश्रय	आश्रव
१०५	२७	वन्धन	वन्धने
१०६	१	को	भी
१०६	१७	अव्व	सव्व
१०६	१८	आश्रय	आश्रव
१०९	२२	निवृत्ति	विकृति
१०९	३५	हलिक	दलिक
११०	१६	वधक	वाधक
११२	६	शिथिल हल्का	शिथिल-हल्का
११२	१६	ही है	है
११३	३७	वॅध	वॅधे
११४	१४	देता	देना
११४	२०	तप भाव	तप भाव
११७	१६	वटती	वटती
११८	१२	जाए	जाए
११९	२४	शरीरकृति	शरीराकृति
१२०	६	एक	एव
१२१	८	सामान्या व वोध	सामान्यावबोध
१२२	१८	[illegible]	[illegible]
१२२	१९	मन	मन
१२५	३२	[illegible]	[illegible]

पृष्ठ स	पक्ति स	अशुद्धि	शुद्धि
१४७	१५	शब्द	शक्ति
१५३	१५	प्रभावित	प्रभासित
१५५	२	मे	को
१५७	२०	देहाभ्यास	देहाध्यास
१५८	१६	देहाभ्यास	देहाध्यास
१५८	१८	देहाभ्यास	देहाध्यास
१६१	३५	पृथक् पृथक्	पृथक् करुते
१६४	२५	ओर होती	ओर व्याप्त होती
१७१	५	अरे ?	अरे ।
१७७	१	देख अपन	देखे अपने
१७७	१४	शाशिग्राम	शालिगराम
१८३	१	श्रणी	श्रेणी
१८३	६	छठ	छठे
१८३	१४	भगवन्त चरणो	भगवन्त के चरणो
१८६	८	को समुद्घात	को केवली समुद्घात
१९०	८	आघाती	अघाती
१९२	६	निरोधक ?	निरोधक ।
१९४	६	सचारित	सचरित
१९७	४	विद्या	विधा
१९७	९	निर्वंध	निर्वद्य
१९९	१५	उपेक्षा	अपेक्षा
२००	५	चारित्रिक शक्ति	दर्शन शक्ति
२०१	१९	कहते है	कहते है
२०२	४	ज्ञान को व गुण को	ज्ञान गुण को
२०३	४	कार्यो	कार्यों
२०३	१५	सामयिक	सामायिक
२०४	२०	कह	वह
२०५	७	हुआ ।	हुआ

